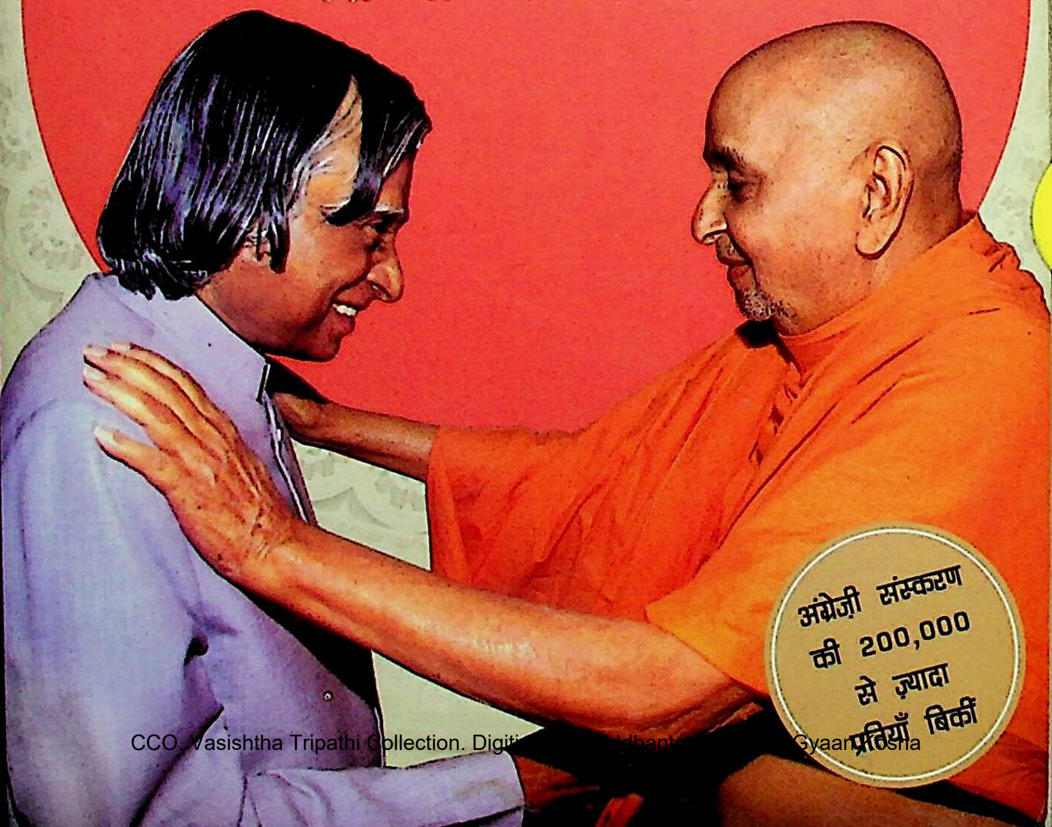
ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
अरुण तिवारी

आरोहण
Transcendence

प्रमुख स्वामीजी के साथ मेरा आध्यात्मिक सफ़र



आरोहण

आरोहण

प्रमुख स्वामीजी के साथ मेरा आध्यात्मिक सफ़र

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

अरुण तिवारी

अनुवाद

मंजीत ठाकुर



हार्परकॉलिंस पब्लिशर्स इंडिया

हार्पर हिन्दी
(हार्परकॉलिंस पब्लिशर्स इंडिया) द्वारा 2015 में प्रकाशित

4 6 8 10 9 7 5 3

हार्पर कॉलिंस *पब्लिशर्स*
ए-75, सेक्टर-57, नौएडा — 201301, उत्तर प्रदेश, भारत
1 लंदन ब्रिज स्ट्रीट, लंदन, एसई1 9 जीएफ, यूनाइटेड किंगडम
हैज़ेल्टन लेन्स, 55 एवेन्यू रोड, सुईट 2900, टोरॉन्टो, ऑन्टैरियो एम5आर 3एल2
तथा 1995 मरखम रोड, स्कैरबारो, ऑन्टैरियो एम1बी 5एम8, कनाडा
25 राइडी रोड, पिम्बल, सिडनी, एनएसडब्ल्यू 2073, ऑस्ट्रेलिया
195 ब्रॉडवे, न्यू यॉर्क एनवाई 10007, यूएसए

P-ISBN: 978-93-5177-619-2
E-ISBN: 978-93-5177-620-8

टाइपसेटिंग : निओ साफ़्टवेयर कन्सलटैंट्स, इलाहाबाद
मुद्रक : थॉम्सन प्रेस (इंडिया) लि.

दुनिया के पवित्र लोगों को समर्पित

विषय-सूची

भाग तीन

विज्ञान और आध्यात्मिकता का संयोजन

भाग चार

रचनात्मक नेतृत्व का विकास

परिचय

आमतौर यादें जहन में बनी तो रहती हैं, लेकिन कभी-कभार दिमाग पर छा जाती हैं। दस साल के एक लड़के के तौर पर, मुझे याद आता है कि तीन अलग किस्म की शख्सियतें वक्त-वक्त पर हमारे घर पर आया करती थीं—वैदिक विद्वान और प्रसिद्ध रामेश्वरम् मन्दिर के मुख्य पुजारी पक्षी लक्ष्मणा शास्त्रीगल, रेवरेण्ड फादर बोदल, जिन्होंने रामेश्वर द्वीप पर पहले चर्च की स्थापना की थी और मेरे पिता, जो एक मस्जिद के इमाम थे। यह तीनों हमारे सहन में बैठते, हाथों में चाय का कप लिये, और तीनों हमारे समाज की समस्याओं पर चर्चा करके उसका हल निकाला करते।

इसी के बरअक्स, मैं देख सकता था कि मेरे अब्बा और धार्मिक रूप से रामेश्वरम् में उनके समकक्ष एक पुरातन सांस्कृतिक ख़ासियत का मुजाहिरा कर रहे थे। भारत में हज़ारों साल से विभिन्न विचारों को एकरूप करने और एकराय तक पहुँचने की स्वस्थ प्रवृत्ति रही है। ऐसे में, स्वतः ही मुझे महसूस होने लगा था कि मेरे गाँव में इस तरह की अन्तर-धार्मिक बैठकें काफी अनुकरणीय हैं। क्योंकि अब, पूरे देश में और बाकी की दुनिया में भी, संस्कृतियों, धर्मों और सभ्यताओं के बीच ऐसी स्पष्ट और मिलनसारिता भरी बातचीत पहले से कहीं अधिक ज़रूरी हैं।

पिता जैनुलआबदीन समेत मुझे कुछेक बेहद गुणी गुरुओं का साथ सानिध्य मिला, जो जीवन के विभिन्न दौर में मेरे साथ रहे। मेरे पिता ने मुझे सिखाया कि किसी भी व्यक्ति की भूमिका को जीवन में एक उपकरण या बर्तन की तरह देखो, जिसके ज़रिए कोई एक हाथ से लेता है और दूसरे को वह सामान बढ़ा देता है। वह कहते थे, 'केवल एक ही रौशनी है, तुम और मैं उस लैम्पशेड की सुराखें भर हैं।' मेरे पिता एक बहुत ही सरल जीवन जीते थे, वह कोई बड़े ज्ञानी नहीं थे लेकिन उन्होंने कभी अन्तर्निहित दिव्यता की दृष्टि नहीं खोई। अपने पूरे जीवन में, इस

मामले में मैं अपने पिता का अनुकरण करने की कोशिश करता रहा। आठ दशकों का मेरा तजुर्बा उस शिक्षा को मान्य करता है जो मैंने उनसे हासिल की। मुझे भरोसा है कि हर इंसान में दिव्यता मौजूद होती है, यह चीज़ हमें सम्भ्रम, दुख, उदासी और नाकामी से ऊपर उठा सकती है, वास्तव में, ऐसी चीज़ों से वास्ता पड़ने पर यही हमारा मार्गदर्शन करती है।

एक नौजवान इंजीनियर के तौर पर, मैंने डॉ. ब्रह्म प्रकाश के साथ काम किया। उन्होंने मुझे सिखाया कि टीम बनाने और व्यक्ति की क्षमता से परे काम को पूरा करने के वास्ते किस तरह दूसरों के विचारों और नज़रियों के प्रति सहिष्णुता जरूरी है। उन्होंने मुझे सिखाया कि जीवन एक अनमोल उपहार है, लेकिन इसके साथ जिम्मेदारियाँ भी आती हैं। उस उपहार के साथ, हमसे उम्मीद की जाती है कि हम अपनी प्रतिभा का उपयोग दुनिया को बेहतर बनाने में करें, अपना जीवन नैतिक और सन्तुलित रूप से जियें, और आध्यात्मिक जीवन के लिए तैयार हों, जो अनन्त है। डॉ. ब्रह्म प्रकाश ने दुनिया को देखने का मेरा नज़रिया बदल दिया। एक बार उन्होंने मुझसे कहा, 'कलाम, अगर तुम इस दुनिया को संकीर्ण और अभद्र मानकर देखोगे, तो यह तुम्हारी एकाग्रता में घुस जायेगा। नकारात्मक सोच किसी सफ़र पर बीस बस्ते लेकर चलने जैसा है। यह असबाब तुम्हारे सफ़र को दूभर बना देगा, और तुम्हारा आगे बढ़ना धीमा हो जायेगा।'

एक परियोजना निदेशक के तौर पर, मैंने प्रोफेसर सतीश धवन के साथ काम किया था। उन्होंने मुझे सिखाया कि एक अच्छा अगुआ अपनी टीम की नाकामियों की जिम्मेदारी लेता है, लेकिन अपनी कामयाबियों का श्रेय अपने सहयोगियों को देता है। उनकी अकादमिक उपलब्धियाँ अद्भुत थीं। वह गणित में बी.ए. और भौतिकी में बी.एस-सी. थे और उसके साथ ही वह गणित में एम.ए. भी थे। इसको और संवर्धित किया गया था मैकनिकल इंजीनियरिंग में बैचलर की डिग्री, एयरोस्पेस इंजीनियरिंग में मास्टर ऑफ साइंस और फिर गणित और एयरोस्पेस इंजीनियरिंग में दोहरी पी.एच-डी. की उपाधि ने। जब मैंने उनसे उनकी मेधाविता का राज़ पूछा, उन्होंने मुझे बताया : 'अकादमिक मेधाविता आईने से अलग नहीं होती। एक बार धूल हटा दो, आईना चमकने लगता है और अक्स साफ नज़र आता है। हम लोग जीवन को शुद्ध और नैतिक बनाकर, मानवता की सेवा करके अशुद्धियों को हटा सकते हैं। ऐसे में ईश्वर भी हमारे ज़रिए चमकने लगते हैं।'

बाद में, मैं जैन मुनि आचार्य महाप्रज्ञ से मिला, जिन्होंने मुझे पृथ्वी पर एक दिव्य जीवन की पुष्टि और एक नश्वर अस्तित्व के अनश्वरता की अनुभूति करायी। उन्होंने मुझे सिखाया कि हमारी चेतना ही हमारी नैतिकता की जन्मभूमि है। उन्होंने कहा, 'हम तभी यह जान पाते हैं कि कोई चीज़ सही है, जब हमारी चेतना स्पष्ट हो। हमारी चेतना ही हमारी असली मित्र है।' हमने साथ में द *फैमिली एण्ड नेशन* लिखी और अपनी चेतना को सुनने के दो कदम उठाये—आत्मचेतन होने के लिए, ताकि हम अपनी चेतना से जुड़ सकें, और वह कर सकें जो हमारी चेतना कहती है।

मैं अपने वास्तविक गुरु प्रमुख स्वामीजी से अनजाने में ही मिला था। शायद मेरी जिज्ञासा और किस्मत ही मुझे उन तक ले गयी थी। इससे पहले भारत सरकार के प्रमुख वैज्ञानिक सलाहकार के तौर पर मैंने भूकम्प के बाद पुनर्वास के काम की समीक्षा के लिए भुज का दौरा किया था। वहीं, 15 मार्च 2001 को मैं साधु ब्रह्मविहारी दास से मिला, जो प्रमुख स्वामीजी के शिष्य थे। उन्होंने मुझसे एक चौंकाने वाला प्रश्न पूछा, जिस पर एक आध्यात्मिक प्रतिक्रिया चाहिए थी। उन्होंने पूछा : 'पहले परमाणु बम को डेटोनेट करने के बाद रॉबर्ट ओपनहाइमर ने गीता को याद किया था : "मैं ही विश्व का विध्वंसक हूँ।" आपके मन में क्या आया जब आपने भारत के लिए पहला परमाणु बम बनाया?' मैं इस सवाल से अचम्भित रह गया, और मैंने कहा, 'ईश्वर की शक्ति विध्वंस नहीं करती, सृजन करती है, तोड़जी नहीं जोड़ती है।' इस पर उन्होंने उत्तर दिया, 'हमारे आध्यात्मिक गुरू, प्रमुख स्वामी महाराज, एक महान एकसूत्र करने वाले हैं। उन्होंने हमारी ऊर्जा को ध्वंस के मलबे में से जीवन निकालने में और उसे पुनर्जीवित करने में एकीकृत कर दिया है।'

मैं काफी प्रभावित हुआ और मैंने ऐसे स्वामी से मिलने की इच्छा जताई। अचानक की इस मुलाकात ने एक दिव्य नियति की ओर का रास्ता दिखाया।

कई सालों तक और कई बार प्रमुख स्वामी जी से मुलाकातों के बाद, मुझे यकीन हुआ कि दिव्य जीवन का कोई आधार तब तक नहीं होता, जब तक हम चिरन्तर आत्मा को इस दैहिक प्रासाद का निवासी न मान लें, और इस शाश्वत आत्मा में शामिल हर चीज़ को एकीकृत कर लें। इस धरती पर रहने वाला हर जीव—मेरे चारों तरफ के, मुझसे दूर, मेरे देश में, दूसरे देशों में, यहाँ तक कि दूसरी नस्लों के लोग, पशु-पक्षी, वनस्पतियाँ और खनिज—उस महान एकाकार के विभिन्न रूप हैं।

बिलकुल बुनियादी स्तर पर, पूरी प्रकृति एक है। सिर्फ एक पवित्र पदार्थ है, जो लगातार विभिन्न चीजें सिरजता रहता है। नैनो-बायो-कॉग्नो तकनीकों का नवजात अभिसरण इस बात की गवाही है। हम इस बात का भरोसा कैसे कर सकते हैं कि यह अभिसरण मानवीयता की भलायी के लिए है, नुकसान के लिए नहीं? कि यह किस तरह वंचितों और गरीबों के लिए है और सिर्फ असरदार लोगों के हित के लिए नहीं?

अपने मन में ऐसी ही विचार लिए मैं 11 मार्च 2014 में प्रमुख स्वामीजी से मिलने के लिए गुजरात के सारंगपुर गया था। यह हमारी हालिया मुलाकात है। हम एक ऐसे बागीचे में मिले जहाँ मोरों की भरमार थी, और चारों तरफ खूबसूरत फूल खिले थे। एक जज़्बाती और आध्यात्मिकता से भरपूर माहौल में स्वामीजी ने दस मिनटों तक मेरा हाथ पकड़े रखा। एक भी शब्द नहीं कहा गया। हम दोनों एक दूसरे की आँखों में चेतना का गहन संचार देख रहे थे। यह एक अद्भुत आध्यात्मिक अनुभव था।

इससे पहले भी मुझे कुछ आध्यात्मिक अनुभव हो चुके थे। 30 सितम्बर 2001 में, मैं एक हेलिकॉप्टर दुर्घटना में बाल-बाल बचा था। उस रात, मुझे एक बहुत स्पष्ट-सा सपना आया था। मैंने देखा, मैं चमकीली चाँदनी रात में एक रेगिस्तान में खड़ा हूँ। चारों तरफ मीलों तक रेत ही रेत है। वहाँ खड़े पाँच महान लोगों, सम्राट अशोक, महात्मा गाँधी, अलबर्ट आइंस्टीन, अब्राहम लिंकन और खलीफा उमर ने नौजवानों के दिलोदिमाग को आशाओं से प्रज्ज्वलित करने का सन्देश मुझ तक पहुँचाया था।

28 अप्रैल 2007 को, फिलोपैपस हिल की गुफा में—जहाँ महात्मा सुकरात को कैद किया गया था और जहाँ उन्होंने आत्म-बलिदान दिया था—मैंने अपने मनो-मस्तिष्क की आँख में एक रौशनी की जोरदार कौंध देखी थी। गुफा के चार अँधेरे कोनों से चार परछाइयाँ अपने सफेद चोगे में मेरी तरफ बढ़ रही थीं।

उनमें सबसे आगे थे सुकरात, जिन्होंने अपनी मृदु वाणी में कहा, 'सोचना ही आजादी है।' उसके बाद अब्राहम लिंकन आये जिन्होंने कहा, 'कोई भी इंसान किसी दूसरे का ग़ुलाम नहीं हो सकता।' और तब मैंने महात्मा गाँधी को देखा, जिन्होंने कहा, 'हर इंसानी मिशन से हिंसा को हटा दो, शान्ति को प्रबल होने दो।'

आखिर में, मैंने गैलीलियो गैलेली को देखा, जिन्होंने कहा, 'सच इंसानी कानूनों के परे होता है।'

लेकिन सारंगपुर के बागीचे में प्रमुख स्वामीजी के साथ हुए उस अनुभव में एक भिन्नता थी। पहले के दो मौकों पर, मुझे महसूस हुआ कि यह मेरे मन की ही कल्पनाएँ हैं। इस समय प्रमुख स्वामीजी ने मेरा हाथ थामा हुआ था। मैं अपने आसपास के लोगों के लिए अनजान बन गया था, और एक समयहीन खामोशी में खींच लिया गया था। मुझे महसूस हुआ कि यह परिवर्तन का वह हाथ है, जो संसार में उस बदलाव को ला सकता है, जिसकी सबसे अधिक जरूरत है। इन क्षणों में, धरती माता को आधार बनाकर एक वैश्विक नज़रिया सहज ज्ञान से मुझ तक प्रेषित हुआ था। प्रमुख स्वामीजी गुणातीत सत्पुरुष हैं, एक आध्यात्मिक व्यक्ति। उन्होंने जैसे क्षणभर में प्रकृति के नाना स्वरूप मुझ तक पहुँचा दिये थे। मुझे लगा कि प्रमुख स्वामी जी के माध्यम से एक दिव्य सन्देश मुझ तक आया है जो मानवता के साथ परमेश्वर ने जोड़ रखा है, लेकिन इंसान उसे भूल गया है।

एक भविष्यसूचक चमक के साथ मुझे यह भान हुआ कि सुख और दुख के बीच का संघर्ष ही अब तक इंसानी अस्तित्व की कहानी रही है—और युद्ध और शान्ति के बीच संघर्ष की कहानी ही इंसानी नस्ल का इतिहास है—इसे बदलना ही होगा। मेरे हाथ पर उनकी पकड़ के खामोश पलों में मैंने सुना, 'कलाम, जाओ और हर किसी को कह दो कि अच्छाई के इन संघर्षों के बीच वह शक्ति जो हमें चिरन्तर जीत दिला सकती है वह हमारे भीतर ही है। मानवजाति तक समरसतापूर्ण विश्व बनाने के विचार का सन्देश पहुँचाओ। यह विचार इंसानियत के किसी भी लक्ष्य से अधिक महान होगा।'

समरसतापूर्ण विश्व एक असम्भव यूटोपियन विचार लग सकता है। लेकिन पारलौकिक मार्गदर्शन से, और हर जीव की एकता को मानकर—और प्रमुख स्वामीजी जैसे पथप्रदर्शक महात्माओं की मदद से—इस असम्भव को भी हासिल किया जा सकता है। एक समरसतापूर्ण विश्व, समरसतापूर्ण अन्तर्मन से ही शुरू होता है—यह एक अपरिहार्य आध्यात्मिक तथ्य है। अपनी आध्यात्मिकता को प्रज्ज्वलित करने के लिए, हमें अन्दर झाँकना होगा और अपने अहं को काबू में करना होगा। हमें अपने अन्दर की आत्मा की चिरन्तरता को पहचानने और उससे जुड़ने की जरूरत है।

इसके लिए चार कदम है : सही स्थान पर खोजिए, धूल हटाइए, आन्तरिक दृष्टि खोलिए, और पहचानिए—आपकी नियति आपकी ही प्रतीक्षा कर रही है। इसी आधार पर, मैंने इस किताब को भी चार हिस्सों में लिखा है। यह किताब प्रमुख स्वामीजी की मौजूदगी में मेरे आध्यात्मिक अनुभवों के साथ शुरू होती है। दूसरा हिस्सा बोचासन्वासी श्री अक्षर पुरुषोत्तम स्वामीनारायण संस्था (बीएपीएस) द्वारा किये गये सामाजिक कार्यों को बताता है, जिसकी अगुआई प्रमुख स्वामीजी करते हैं। तीसरा भाग विज्ञान और आध्यात्मिकता के समागम से मानवता के लिए आगे की राह बताता है। चौथा हिस्सा सृजनात्मक नेतृत्व की दरकार करता है, जो इस विज़न पर भरोसा करने के लिए जरूरी है।

बीएपीएस की समावेशी विचारधारा एक शान्तिपूर्ण और समृद्ध विश्व बनाने के लिए बीज मुहैया कराती है, जहाँ सारी सभ्यताएँ समरसता से सहअस्तित्व में रहें और एक दूसरे के साथ फले-फूलें। प्रमुख स्वामीजी ने अपनी सांस्कृतिक विरासत के साथ रह रहे चिन्तनशील समाज को बनाकर पहले ही एक उदाहरण पेश कर दिया था। वह भारत की चमक को अफ्रीका, अमेरिका और सुदूर पूर्व तक ले गये। यह चमक भव्य स्वामीनारायण मन्दिरों, अनुयायियों और शुभेच्छुओं के मजबूत तन्त्र के ज़रिए फैली-बढ़ी है, जिनकी संख्या दुनिया भर में आज करोड़ों में है।

चलिए इसे अब सार्वजनिक जीवन में विस्तारित करते हैं—पारदर्शी प्रशासन और नैतिकता भरा कारोबार—जो कि सच पर आधारित हो। बायो-नैनो-इंपो-इको-कॉग्नो तकनीकों के अभिसरण पर चल रहे इंसानों के पास अपरिमित शक्ति होगी। इसके लिए एक ऐसे नज़रिए की जरूरत है जो यह सुनिश्चित करे कि सामाजिक पिरामिड के निचले पायदान पर खड़े लोगों के लिए जीने की स्थितियाँ भी सुधरेंगी और जो सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सरहदों से परे होंगी।

जब यह किताब तकरीबन पूरी हो गयी थी, मेरे बड़े भाई एपीजे मुहम्मद मुत्थु मीरी लेबाई माराकयार ने मुझे फ़ज्र की नमाज़ के बाद सुबह को रामेश्वरम से फोन किया। इतनी सुबह आये इस फोन से मैं चिन्तित हो उठा था, लेकिन उनकी चहकती हुई आवाज़ सुनकर मुझे बहुत राहत मिली। उन्होंने मुझसे पूछा, 'बताओ भाई, आजकल कौन-सा महत्वपूर्ण काम कर रहे हो?' मैंने उन्हें इस किताब के बारे में बताया। अब मैंने अपना अन्देशे का उनके सामने इजहार किया : क्या एक

मुस्लिम होने के नाते मेरे लिए वाजिब होगा कि मैं दूसरे धर्म के गुरु के बारे में कुछ लिखूँ।

मेरे मन में भाई मारांकयार के फैसले को लेकर बहुत सम्मान है। वह मुझसे चौदह साल बड़े हैं। और उन्होंने एक बहुत धर्मपरायण जीवन जिया है, जिसमें इस्लामी धर्म और सेवा की भावना बहुत गहरे पैबस्त रही है। उन्होंने कहा, 'कलाम, जब पैगम्बर मुहम्मद सल्ललाहु अलयाही वा सल्लम, मदीना आये, तब वहाँ यहूदी और ईसाई कबीले रहा करते थे। वह उन लोगों के साथ एक समझौते पर पहुँचे जिसकी मोटी रूपरेखा में अन्तर-मुस्लिम रिश्तों की बात थी। इस समझौते में जो एक बात रखी गयी थी उसके मुताबिक यह तय पाया कि 'आपसी रिश्ते सच्चाई पर चल कर कायम किये जायें, पाप पूरी तरह बहिष्कृत हो।' मेरे भाई ने बेहिचक किताब पूरा करने के लिए कहा था और हर किसी को प्रमुख स्वामीजी के धर्मपरायण जीवन के बारे में बताने को नेक काम बताया था। इस तरह, यह किताब आखिरकार पूरी हो गयी।

मैं इस किताब को हर सच्चे इंसान को समर्पित करता हूँ, चाहे वह दुनिया में कहीं भी हो। स्वामीनारायण और अक्षरधाम मन्दिर असल में, धर्मपरायण और सात्विक जीवन के अभयारण्य हैं। वे शान्ति के आवास और आशाओं के प्रकाशस्तम्भ हैं, जो सेवाओं के ज़रिए उन्हें अनेक असली अस्तित्व की याद दिला कर लाखों लोगों को स्वयंभोग के अथाह गड्ढे में गर्त होने से बचा रहे हैं। एक सम्पूर्ण मानव बनने में उनकी मदद कर रहे हैं। ऐसे लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है, खासकर विकसित दुनिया में, जो सतही रिश्तों, तुच्छ बातचीत और लगातार हो रहे शोर को आजादी समझ बैठे हैं। इनमें वे लोग बीएपीएस के सन्तों का मार्गदर्शन हासिल कर रहे हैं। इस दिव्य उपस्थिति के दीर्घायु होने की मैं कामना करता हूँ!

नयी दिल्ली — ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

मई 2015

प्रस्तावना

11 मार्च 2014 को जब मैं प्रमुख स्वामीजी से मिलकर दिल्ली के 10 राजाजी मार्ग के अपने घर पहुँचा, तब तक तकरीबन आधी रात हो चुकी थी। मैंने रात का भोजन किया, अपने बागीचे के दो सौ साल पुराने अर्जुन के पेड़ के नीचे कुछ एक चक्कर काटे और एक व्यस्तता भरे दिन का समापन कर ऊपर जाकर सोने चला गया।

मेरे सुरक्षाकर्मियों ने मुझे शुभ-रात्रि की सलामी दी और मैंने अपने दरवाज़े को अन्दर से बन्द कर लिया।

पिछले पचास साल से, मैंने सोने से पहले अच्छी किताबें पढ़ने की आदत डाली हुई है और मेरी अपनी एक ठीक-ठाक-सी लाइब्रेरी बन गई है। इस रात, मैंने अपने बुकशेल्फ पर सरसरी नज़र दौड़ाई। अचानक, जैसे खुद ब खुद, *द बुक ऑफ मिरदाद*—दर्शन पर लिखी एक लाक्षणिक किताब—जिसे लेबनानी लेखक मिखाइल नाइमा ने लिखा था, मेरे हाथ में आ गयी। यह 1954 में प्रकाशित हुई थी। हालाँकि, यह शुरू से मेरी लाइब्रेरी में थी, लेकिन किसी वजह से मैं इसे पढ़ नहीं सका था। मैं अपने बिस्तर पर बैठ गया और इसे पढ़ना शुरू किया।

दूधिया पहाड़ों में, अल्तार नाम की एक बेहद ऊँची चोटी पर बहुत विशाल और मलिन खण्डहर हैं। किसी मठ के यह खण्डहर आर्क के नाम से मशहूर हैं। मान्यताओं के लिहाज से तो इनकी पुरातनता प्रलय की बाढ़ जितनी ही होगी...

मैं शान्ति से भर गया। एक अनजाने सुकून ने मुझे घेर लिया। मैं सोया नहीं था, क्योंकि मैं सुन सकता था। मैं जगा नहीं था, क्योंकि मैं अपने हाथ नहीं हिला पा रहा था...

'उठो, ओ प्रसन्न अजनबी। तुमने अपना लक्ष्य पा लिया है,' मैंने एक आवाज़ सुनी।

'मैं कहाँ हूँ?' मैंने पूछा।

'स्वर्ग में।'

'और धरती?'

' वह तुम्हारे पीछे है।'

'मुझे यहाँ कौन लाया?'

'वही, जिससे तुम आज मिले।'

'आप कौन हैं?'

'मैं वही हूँ।'

'तो क्या आप प्रमुख स्वामीजी हैं? लेकिन आप बोलते हैं, वो तो आज नहीं बाले।'

'पर वह मुस्कुराये तो।'

'क्यों?'

'ताकि हमारी दुनिया में मुस्कुराहट लायी जा सके। तुम ही वह धन्य व्यक्ति हो जिनके हाथों में मैं एक पवित्र किताब देना चाहता हूँ जो दुनिया के लिए लिखी जाये।'

'कौन-सी किताब?'

'वह किताब, जो मानवता को शब्दों की भूलभुलैया से बाहर का रास्ता दिखा सके।'

'पर मैं ही क्यों?'

'सिर्फ तुम ही ऐसा कर सकते हो क्योंकि तुम सही देखते हैं और सही बोलते हैं। तुम सिर्फ मुझे देखते हो और सिर्फ मेरी बात ही बोलते हो।'

'क्या व्यक्त करना है?'

'कि दुनिया की मुस्कुराहट खो गयी है। इसने खुद को 'मैं' और 'मेरे' की गाँठों में बन्द कर लिया है। दुनिया बन्दिशों और बाड़ों में बँट गयी है। चारों तरफ 'मैं' के खम्भे खड़े हैं और हेठी लोगों को बाँट रही है। मानवता पीड़ित है और जार-जार हो चुकी है है। कलाम, इन बाधाओं को तोड़ने और लोगों को जोड़ने के लिए लिखो, और 'मैं' द्वारा उत्पन्न किये गये हर बँटवारे को हटा दो। ऊपर उठो, '*आरोहण*' लिखो।

भाग एक

व्यक्तित्व का अनुभव

'खुद को पवित्र बनाओ, इससे तुम समाज को पवित्र बनाओगे।'

—असिसी के संत फ्रांसिस
बारहवीं सदी के इतालवी कैथलिक भिक्षुक

1

भारत की अगुआई करो

'दुनिया का बड़ा हिस्सा भारत से धार्मिक शिक्षा ग्रहण करता रहा है... सैद्धान्तिक विचारों में लगातार संघर्षों के बावजूद, भारत ने सदियों तक अपने आदर्शों को बनाये रखा हुआ है।'

—सर्वपल्ली राधाकृष्णन

दार्शनिक और भारत के दूसरे राष्ट्रपति

30 जून 2001 की एक गर्म शाम को मैं प्रमुख स्वामीजी से पहली दफ़ा मिला। केसरी वस्त्र पहने, सौम्य, गौर वर्णीय प्रमुख स्वामीजी साक्षात् देव पुरुष प्रतीत हो रहे थे। उनसे मिलकर यही विचार पहले-पहल मेरे मन में आये। मेरे दोस्त वाई. एस. राजन मेरे साथ थे। हम लोग बैठ गये और स्वामीजी की ऊर्जावान् और गरिमामय उपस्थिति में हल्की-फुल्की बातचीत के ज़रिए खुद को व्यवस्थित करने की कोशिश करने लगे।

मैंने विज़न 2020 के अपने विचार प्रमुख स्वामीजी के सामने रखे, और कहा, 'स्वामीजी, भारत के पास आधुनिक काल में दो महान विचार रहे हैं। इनमें से पहला सन् 1857 में आजादी की दृष्टि थी। आजादी पाने में हमें नब्बे साल लग गये। उस वक़्त, पूरा राष्ट्र—नौजवान और बुजुर्ग—आजादी पाने के लिए एक हो गया था। तब, सन् 1950 में भारत के लिए एक गणराज्य राष्ट्र का सपना देखा गया। स्वामीजी, अब भारत के लिए ऐसा कौन-सा विज़न है या हो सकता है? पिछले पचास सालों से भारत एक विकासशील देश बना हुआ है।

इसका मतलब है कि आर्थिक रूप से यह बहुत मज़बूत नहीं है, सामाजिक रूप से स्थिर नहीं है और इसकी सुरक्षा अपर्याप्त है। यही वजह है कि इसे विकासशील देश कहा जाता है। मेरे जैसे बहुत सारे लोग पूछते हैं :

"भारत के लिए अगला विज़न क्या होना चाहिए? हम किस तरह अगले तीस साल में एक विकासशील देश को विकसित देश में तब्दील कर सकते हैं?" हमने भारत को बदलने के पाँच महत्वपूर्ण क्षेत्रों की पहचान की है : शिक्षा और स्वास्थ्य, कृषि, सूचना और संचार, बुनियादी ढाँचा और आवश्यक तकनीक।'

प्रमुख स्वामीजी एकाग्रता से सुन रहे थे, उनकी आँखें मेरे चेहरे पर टिकी थीं। वह कुछ नहीं बोले। मैंने आगे कहना शुरू किया, 'स्वामीजी, हमारी समस्या है कि हम इस विज़न को सरकार के सामने प्रस्तुत तो कर सकते हैं, लेकिन हम ऐसे लोग कहाँ से लायें, जो इस महत्वाकांक्षी नज़रिए को पहचान पायें? हमें मूल्य-आधारित नागरिकों के काडर की जरूरत है। इस काम में आप विशेषज्ञ हैं। हमें आपकी सलाह चाहिए।'

प्रमुख स्वामीजी मुस्कुराए। उनके जो पहले शब्द मैंने सुने वह थे, 'भारत को बदलने के आपके पाँच क्षेत्रों के साथ, एक छठा भी जोड़ लीजिए—ईश्वर में आस्था और आध्यात्मिकता के ज़रिए लोगों का विकास। यह बहुत महत्वपूर्ण है।' मैं उनके शब्दों की सटीकता, स्पष्टता और ऊर्जा से दंग रह गया।

थोड़े विराम के बाद, प्रमुख स्वामीजी ने आगे कहा, 'हमें पहले एक नैतिक और आध्यात्मिक वातावरण तैयार करने की जरूरत है। मौजूदा तन्त्र घुटन भरा है। अपराधों और भ्रष्टाचार का वातावरण अच्छे विचारों और पवित्र कामों के लिए जहरीला है। इसे बदलना ही चाहिए। हमें ऐसे लोग तैयार करने होंगे जो शास्त्रोक्त विधियों से जीवन जियें और ईश्वर में आस्था रखें। इसके लिए, हमें अपने शास्त्रों और ईश्वर में आस्था जगानी होगी। इसके बिना, कोई परिवर्तन नहीं होगा; कुछ हल नहीं निकलेगा, आप अपने सपने पूरे करने में कामयाब नहीं होंगे।'

मैंने बीच में टोकना उचित नहीं समझा और प्रमुख स्वामीजी के अगले शब्द का इन्तजार करने के लिए खामोश बैठा रहा। थोड़ी देर के बाद वे फिर बोले। 'हमारी संस्कृति हमें परा (आध्यात्मिक) और अपरा विद्या (सांसारिक ज्ञान) दोनों सिखाती है। अतएव, अपरा के ज्ञान के साथ, हर किसी को परा का अध्ययन भी करना चाहिए। अपरा ज्ञान धर्म और आध्यात्मिकता के साथ आता है। ईश्वर द्वारा

इस ब्रह्माण्ड की रचना का उद्देश्य यही है कि हर व्यक्ति, हर आत्मा को आशीष मिले।

इसके लिए, ईश्वर ने मानव को सृजन के ज्ञान के साथ ही, स्वयं का ज्ञान भी दिया गया है। इस सांसारिक ज्ञान के साथ ही, ईश्वर द्वारा दिया गया ज्ञान—आध्यात्मिकता—भी उतना ही आवश्यक है।' मुझे लगा कि मैं एक दिव्य उपस्थिति में बैठा था। मैंने एक भावना के दायरे में इस दिव्य उपस्थिति के साथ एक अद्भुत सम्बन्ध महसूस किया। प्रमुख स्वामीजी से एक आभा-सी निकल रही थी, जो मेरे अन्तरतम को प्रबुद्ध कर रही थी। मुझे अनुभव हुआ कि मेरी छठी इन्द्रिय जागृत हो गयी है।

रामनाथपुरम के श्वॉर्ट्ज हाई स्कूल में मेरे शिक्षकों ने मुझे सिखाया था कि दिव्य उपस्थितियों के सानिध्य से परिपूर्णता हासिल होती है, और हम इसे अपने जीवन में लगातार और आग्रहपूर्वक करें तो हम धीरे-धीरे कलह और संघर्ष से ऊपर उठते जाते हैं और पूर्णता और समरसता की तरफ आगे बढ़ते रहते हैं।

वह सारी ऊर्जा जो हम सिरजते हैं, वह तब धीरे-धीरे शुद्ध प्रकाश में परिवर्तित हो जाती है। यही 'कमजोर इच्छाशक्ति' को एक 'उच्च इच्छाशक्ति' के समक्ष त्यागना है : ईश्वर की इच्छा; दिव्य उपस्थिति की इच्छा के समक्ष। सिर्फ तभी यह उपस्थिति हमारे लिये भरपूर जीवन का सृजन कर सकती है।

यहाँ प्रमुख स्वामीजी के समक्ष मैंने महसूस किया कि मैं अपने जीवन के सबसे परिवर्तनकारी क्षण में था। मुझे लगा मानो मैं किसी और दायरे को पार कर रहा होऊँ। अब तक मुझे ऐसा आध्यात्मिक अनुभव कभी हासिल नहीं हुआ था, मैंने कहा, 'स्वामीजी, जब मैंने पहली बार एक रॉकेट लाँच किया, तो वह नाकाम रहा। मैं बेहद हताश और निराश हो गया था। उस वक़्त मैंने सब कुछ छोड़कर संन्यासी बनने का विचार कर लिया था।'

प्रमुख स्वामीजी ने कहा, 'श्रीमद् भागवत गीता में संन्यास को अनूठे तरीके से परिभाषित किया गया है। "व्यक्ति को अपने कर्मों से विमुख नहीं होना चाहिए। बल्कि, उसे उन कर्मों के फलों की चिन्ता करनी छोड़ देनी चाहिए।" आप अपने काम को स्वार्थरहित होकर जारी रखें, और मित्र, आपको यहाँ देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है।'

प्रमुख स्वामीजी बोल रहे थे, 'मनुष्य के प्रयास और ईश्वर का आशीर्वाद इस विश्व को चलाते हैं। यहाँ तक कि आपको जो पहले रॉकेट की नाकामी हासिल हुई थी, वह भी आपके हित में ही था। इसने आपको चीज़ों को बेहतर बनाने की प्रेरणा दी। जिस तरीके से आप रॉकेट की खोज के काम में लगे, वह सफल रहा। ईश्वर ने आखिरकार आपको सफलता प्रदान की।'

मैं प्रमुख स्वामीजी की सादगी देखकर दंग रह गया। मुझे लगा मानो मैं उन्हें अपनी पूरी जिन्दगी से जानता होऊँ—मानो मैं अपने पिता और अपने शिक्षकों की मौजूदगी में बैठा हूँ—वह एक दैवीय उपस्थिति थी।

मैंने प्रमुख स्वामीजी से पूछा, 'भारत एक अमीर देश था। आर्थिक रूप से तो यह धनी था ही, सांस्कृतिक रूप से भी धनी था। मेरे जहन में अक्सर यह सवाल आता है : 3000 साल तक भारत पर लगातार हमले होते रहे, लेकिन भारत ने कभी किसी दूसरे देश पर आक्रमण नहीं किया। ऐसा क्यों?'

प्रमुख स्वामीजी ने जवाब दिया, 'यह ईश्वरीय गुण है। एक दैवीय गुण—वह नहीं लेना जो दूसरों का हो, और न ही दूसरों का सामान जबरन हड़प लेना। न दूसरों को दुख देना, न सताना। हमें दूसरों का दिल जीतना चाहिए, न कि उनकी देह पर कब्जा करना चाहिए, उनके सामान पर तो कभी नहीं।' उस कमरे में मौजूद दूसरे साधुओं ने मेरे सामने अक्षरधाम मन्दिर का बड़ा-सा नक्शा खोलकर रख दिया। हमें बताया गया कि इसे दिल्ली में यमुना नदी के पूर्वी तट पर बनाया जाना है। मैं इस योजना की भव्यता देखकर अचम्भित रह गया। इसका डिजाइन प्राचीन वैदिक ग्रन्थों के मुताबिक था, और इसमें पूरे देश की वास्तुकला का समावेश किया गया था। मुझे बताया गया कि इसको पूरी तरह राजस्थान के गुलाबी बलुआ पत्थर और इतालवी करारा संगमरमर से बनाया जाना है और इसमें कहीं भी इस्पात या कंक्रीट का सहारा नहीं लिया जायेगा।

प्रमुख स्वामीजी ने कहा, 'लोगों को इस स्मारक को देखना चाहिए और यह याद करना चाहिए कि भारत कमजोर नहीं, बल्कि एक बहुत ताकतवर और संस्कारवान देश है। मन्दिर ईश्वर के घर होते हैं। यह पूजा के पवित्र स्थल हैं, जहाँ व्यक्ति ईश्वर के साथ अलौकिक वादे करता है।'

किसी को पता भी नहीं चला, लेकिन एक घण्टा बीत गया। ऐसा लगा मानो मैं एक अलौकिक नींद से जागा होऊँ, मैं जाने के लिए खड़ा हो गया। प्रमुख

स्वामीजी ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा, 'अच्छा है कि आप आज यहाँ आये। मुझे इससे बहुत आनन्द हुआ। प्राचीन काल के ऋषियों ने हमें ज्ञान के साथ विज्ञान भी दिया है। आप भी ऋषि हैं। आपने इतने ऊँचे पद हासिल कर लिये हैं, फिर भी आपका जीवन सरल है।'

इसके बाद उन्होंने जो कहा वह बहुत प्रेरणास्पद था। 'ईश्वर का आशीर्वाद हमेशा आपके साथ है। मैं प्रार्थना करूँगा कि आपके विचार सफलतापूर्वक पहचाने जायें। यह हमारे गुरु योगीजी महाराज[1] की इच्छा थी कि आध्यात्मिक रूप से सजग, कुशल और मेहनती नौजवान तैयार किये जायें। जाइये, और दुनिया भर के नौजवानों के मन-मस्तिष्कों को जाग्रत करने की अपनी कोशिशों में लग जाइये। भारत की अगुआई कीजिये!'

मैं प्रमुख स्वामीजी के शब्दों को लेकर बहुत स्पष्ट नहीं था। अगले कुछ दिनों तक मैंने कई दफा *इश्तिकार*[2] की प्रार्थना की।

हे परमपिता, आप अपने ज्ञान से मुझे राह दिखायें, मैं दुआ करता हूँ कि आप अपनी शक्ति से मुझे सशक्त करें। आपकी असीम अनुकम्पा मुझ पर बनी रहे। आप ही शक्तिशाली हैं, मैं शक्तिहीन हूँ, आप ज्ञान के भण्डार हैं, और मैं ज्ञानहीन हूँ। आप ही एकमात्र हैं, जो हर अदृश्य के ज्ञाता हैं।

मैंने सपना देखा कि मैं एक शान्तिपूर्ण सफेद रौशनी में नहा रहा हूँ। तो, ईश्वरीय आस्था को आधार बनाकर, *भारत 2020* को राष्ट्रीय समृद्धि की योजना बनाकर मेरा जीवन परिवर्तित हो गया और मेरे लिये देश के ग्यारहवें राष्ट्रपति के रूप में काम करने की राह तैयार हुई।

2

आप खुद को जो समझते हैं, आप वास्तव में वो नही हैं

खुदी से अनजान, ओझल प्रकृति ही रहस्यमयी ईश्वर है।

—श्री अरविन्द,
भारतीय राष्ट्रवादी और दार्शनिक

30 सितम्बर 2001, को मैं झारखण्ड राज्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषद की मीटिंग में हिस्सा लेने के लिए हेलीकॉप्टर से रांची से बोकारो जा रहा था। बोकारो में लैंडिंग के कुछ ही क्षणों पहले शाम साढ़े चार बजे हेलीकॉप्टर का इंजन फेल हो गया और वह लगभग सौ मीटर की ऊँचाई से सीधे जमीन पर आ गिरा। यह चमत्कार ही था कि हम सभी लोग जिन्दा बच गये। मैंने तय समय पर कार्यक्रम में हिस्सा लिया। लेकिन दुर्घटना की ख़बर मीडिया में फैल गयी। मेरे बड़े भाई ने रामेश्वरम से फोन करके मेरा हाल-चाल पूछा।

प्रमुख स्वामीजी के शब्द मेरे दिमाग में गूँजते रहे। 'ईश्वर का आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। मैं प्रार्थना करूँगा कि तुम्हारे काम को पहचान मिले। हमारे गुरू योगी जी महाराज की इच्छा आध्यात्मिक रूप से प्रबुद्ध, कुशल और मेहनती युवकों को तैयार करने की थी। जाओ अपने प्रयासों को दुनिया भर में युवाओं के मन को प्रज्ज्वलित करने में लगाओ।' ईश्वर के ब्रह्माण्ड में या हमारी ज़िन्दगी में कुछ भी अकारण नहीं होता। इस तरह की घटनाएँ कहाँ से आती हैं? वह कैसे होती हैं? क्यों होती हैं? उनका कोई उद्देश्य है? वो कौन-सी ताक़त है जो यह सब करती है? क्या मेरे जीवन की दिशा बदलने का यही समय था?

हैरानी की बात है कि कुदरत द्वारा दिये मार्गदर्शन के ये अप्रत्याशित तोहफे अक्सर या तो हमारी सोच को प्रभावित करते हैं या जीवन की दिशा को, वो भी

तब जब हमें उनकी उम्मीद सबसे कम होती है। ऐसा जब भी होता है हमारी स्वतन्त्र सोच पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यद्यपि अपने सांसारिक शरीर में रहते हुए, हमारे पास सुविधानुसार इन घटनाओं पर प्रतिक्रिया देने का विकल्प है, चाहे वह कितनी ही बड़ी घटना हो।

दिल्ली आकर मैं प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी से मिला और उनसे मुझे भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार के पद से निवृत्त करने का अनुरोध किया। उन्होंने हामी भरी और नवम्बर 2001 में मैंने अपने मातृ संस्थान, अन्ना विश्वविद्यालय, चेन्नई में प्रौद्योगिकी और सामाजिक परिवर्तन के प्राध्यापक के रूप में मैं पढ़ाने और अनुसन्धान कार्यों में फिर से जुट गया, जो मैं हमेशा से करना चाहता था। लेकिन मेरी आधिकारिक जिम्मेदारियों ने कभी मुझे पढ़ाने का मौका नहीं दिया। इसके अलावा, आध्यात्मिक रूप से प्रबुद्ध, कुशल और मेहनती रहे युवकों को तैयार करने का परमात्मा का अध्यादेश भी पूरा करना था। इसलिए मैंने देश भर के हाईस्कूल छात्रों से मिलकर उनके राष्ट्रीय विकास के लिए युवाओं के मन को प्रज्ज्वलित करने का एक अभियान चलाया।

10 जून 2002 को मुझे कुलपति डॉ. कलानिधि के दफ्तर से सन्देश आया कि प्रधानमंत्री कार्यालय से मेरे लिए फोन आया है। यह वास्तव में हैरान करने वाला था क्योंकि नवम्बर 2001 में दिल्ली छोड़ने के बाद मैं किसी भी सरकारी अधिकारी के सम्पर्क में नहीं था। जब मैं कुलपति के दफ्तर पहुँचा तो प्रधानमंत्री कार्यालय को फोन लगाया गया और कुछ ही मिनट बाद प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी फोन पर थे। उन्होंने कहा, 'डॉ. कलाम, देश आपको राष्ट्रपति के रूप में देखना चाहता है।' मैंने उनसे कुछ समय माँगा ताकि मैं इस उदार प्रस्ताव के बारे में अपने दोस्तों और प्रमुख सहयोगियों से परामर्श कर सकूँ। वाजपेयी जी ने कहा, 'परामर्श जरूर कीजिये। लेकिन जवाब मुझे "हाँ" में ही चाहिए "ना" में नहीं।'

शाम तक मेरी उम्मीदवारी की घोषणा एक संयुक्त प्रेस वार्ता में हुई जिसमें राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) के संयोजक जॉर्ज फर्नांडिस, संसदीय मामलों के मंत्री प्रमोद महाजन, आन्ध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चन्द्रबाबू नायडू और उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती ने शिरकत की थी। नायडूजी ने मुझे सबसे अच्छा विकल्प बताया। समाजवादी पार्टी के नेता मुलायम सिंह ने कहा, 'डॉ. कलाम राष्ट्रपति के कार्यालय के लिए बहुत अच्छी पसन्द हैं। वह एक योग्य वैज्ञानिक, विद्वान

और प्रख्यात व्यक्ति हैं। वह भाजपा (भारतीय जनता पार्टी), आरएसएस (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ), शिव सेना, कांग्रेस या समाजवादी पार्टी के उम्मीदवार नही हैं।' मुझे 90 प्रतिशत वोट मिले और मैं भारत का 11वाँ राष्ट्रपति चुना गया जो कि देश का पहला वैज्ञानिक राष्ट्रपति था।

25 जून 2002 को मैंने भारत के 11वें राष्ट्रपति के रूप में शपथ ली। मेरे बड़े भाई, जिनकी आयु उस समय 90 साल थी, रामेश्वरम से अपने बच्चों, पोते-पोतियों और मेरे कुछ बचपन के साथियों के साथ आये। वे सभी संसद के आलीशान सेंट्रल हॉल में आगे की पंक्ति में बैठे थे। बाद में मेरे भाई ने मुझे बताया कि संसद में बैठना तो दूर की बात, उन्होंने कभी सपने में भी नही सोचा था कि वो दिल्ली आयेंगे। उन्होंने कहा, 'यह मेरे जीवन का सबसे अप्रत्याशित अनुभव था। हम सचमुच धन्य हैं।'

मेरे जीवन में हुई अप्रत्याशित घटनाओं और मुझे जो आशीर्वाद मिला उससे प्रतीत होता है कि ऐसे रहस्यमयी अनुभव किसी को भी सोचने पर मजबूर कर देंगे कि इन सबके पीछे कौन है। और मुझे लगता है कि हमारी जिन्दगी में क्या चल रहा है उसकी जानकारी रखना बहुत जरूरी है और हमें खुद की सोच में ही डूबे नहीं रहना चाहिए। कुछ सुराग, आकृतियाँ और घटनाएँ अचानक सामने आ जाती हैं।

किसी भी अनपेक्षित फोन का ध्यान रखें या किसी पुराने पत्र के मिलने का। वास्तव में अपने दिमाग में गूँज रही आवाजों को सुनना, वो सपने देखना जो हमारे सवालों से जुड़े हुए हैं या एक दृश्य जो ध्यान लगाने पर दिखाई देता है। ये सभी दिव्य प्रेरणा के कुछ उदाहरण हैं। चौकन्ने रहिए, जब एक अप्रत्याशित घटना घटित हो रही हो; मौके एक तैयार मन के पास ही आते हैं जो लम्बे समय में कुछ क्षेत्रों में ज्ञान का संचय करके परिपक्व हो चुके हैं। हमेशा ध्यान रखिए कि जब चीजें आराम से हो रही हों और सही तरह से हो रही हों तो आपने सही फैसला लिया है ताकि आपके जीवन में सही घटनाएँ घट सकें। जब आपके फैसलों को प्रतिरोध का सामना करना पड़े, उनमें बाधाएँ आने लगें तो आपको अपने फैसले पर फिर से विचार करने की जरूरत है। कुछ संकेत होंगे जो आपकी जिन्दगी में आने वाली घटनाओं की ओर इशारा करते हैं।

कुछ सालों पहले मैने अरुण के साथ एक किताब लिखी थी जिसका शीर्षक था : *गाईडिंग सोल्स*[3]। मैंने इसमें जीवन के अनुभवों से उपजी अपनी आस्था के

बारे में लिखा कि ऐसा मार्गदर्शन—जो सत्य, स्नेही, सदय और हमारे हित में है—हम सभी के लिए मौजूद होता है।

मार्गदर्शन कभी-कभी एक आपदा के दौरान भी आ सकता है। 2001 के भयानक भूकम्प ने गुजरात को मौत, तबाही और असहायता के अँधेरे में धकेल दिया। 4 हजार मौतें हुईं। हजारों बेघर हुए। आजीविका के सारे साधन तहस-नहस हो गये। ऐसे बेहद दुख के बुरे वक्त में मैं कई टीमों के साथ पुनर्वास और पुनर्निमाण के कार्य में लग गया। उसके एक साल बाद ही 2002 की नासमझ हिंसा ने हमें एक और झटका दिया। निर्दोष लोग मारे गये, परिवार बेघर हो गये, सालों की मेहनत से बनाये गये घर बर्बाद हो गये। यह हिंसा पहले से बिखरे और चोटिल गुजरात के लिए एक गम्भीर झटका था जो भूकम्प की प्राकृतिक तबाही के बाद फिर से अपने पैरों पर खड़ा हो रहा था। मैं अन्दर तक हिल चुका था। दुख, उदासी, कष्ट, दर्द, पीड़ा और व्यथा ये कुछ शब्द उस खालीपन को बयाँ करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं जो किसी ने इस तबाही को देखने के बाद महसूस किया होगा।

एक तरफ तो भूकम्प पीड़ित लोगों का दर्द था, तो दूसरी तरफ दंगा पीड़ितों का दर्द। इस उथल-पुथल का पूरी तरह सामना करने के लिए मैंने राष्ट्रपति के रूप में दिल्ली के बाहर अपनी पहली यात्रा के लिए गुजरात को चुना। प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी मेरे इस फैसले से थोड़ा असहज थे। उन्होंने मुझसे पूछा 'क्या आप गुजरात जाना जरूरी समझते हैं?' मैंने जवाब दिया, 'मुझे जाना चाहिए और राष्ट्रपति के नाते लोगों से बात करनी चहिए। मैं इसे अपना पहला बड़ा कार्य मानता हूँ।'

इसे लेकर कई आशंकाएँ व्यक्त की गयीं। जैसे कि मुख्यमंत्री मेरी यात्रा का बहिष्कार कर सकते हैं, मुझे अच्छा स्वागत नहीं मिलेगा, और अलग-अलग हलकों से विरोध के स्वर उठेंगे। लेकिन जब मैं अहमदाबाद हवाईअड्डे पर उतरा तो मैं यह देखकर अचम्भित था कि न केवल वहाँ मुख्यमंत्री मौजूद थे बल्कि पूरा मन्त्रिमण्डल और कई विधानसभा सदस्य, प्रशासनिक अधिकारी और सैंकड़ों सामान्य जन हवाईअड्डे पर मेरा स्वागत करने के लिए खड़े थे।

मैने बारह क्षेत्रों का दौरा किया : तीन राहत शिविर और नौ दंगा प्रभावित क्षेत्र जहाँ ज्यादा जानें गई। मुख्यमंत्री नरेन्द्र मोदी पूरी यात्रा में मेरे साथ रहे। उनके साथ

चलने के चलते मैं प्राप्त याचिकाओं और शिकायतों के अनुरूप मौके पर ही उन्हें आवश्यक और तत्काल कार्रवाई के लिए सुझाव दे सका।

राहत शिविरों और दंगा प्रभावित क्षेत्रों का दौरा करने का बाद हम शाहीबाग रोड में स्थित स्वामीनारायण मन्दिर में प्रमुख स्वामी जी से मिलने गये। जैसे ही हमनें सभा कक्ष में प्रवेश किया साधुओं ने शान्ति पाठ किया, जो शान्ति, सद्भाव और खुशी का मन्त्र है। प्रमुख स्वामीजी ने गर्मजोशी से हमारा स्वागत किया। उन्होंने कहा, 'यह हमारे लिए बहुत खुशी की बात है कि आप मन्दिर आये और खासकर श्रावण के इस पवित्र महीने में।' मेरे नये ओहदे की परवाह किये बिना उन्होंने मुझसे एक दोस्त की तरह बात की। मुझे ऐसा लगा कि जैसे हमने बातचीत वहीं से जारी की, जहाँ से हमने उसे एक साल पहले छोड़ा था।

मैंने कहा 'स्वामी जी जबसे मैं आपसे दिल्ली में मिला, मेरा जीवन ही बदल गया है। बहुत कुछ घटित हुआ। एक वैज्ञानिक होने के नाते मैं कई यात्राएँ कर चुका हूँ, खासकर गाँवों की और लगभग एक लाख युवाओं से मिल चुका हूँ। यहाँ मैं आज अपने अनुभव अवगत कराने और समाज के विकास, शान्ति के लिए आपसे मार्गदर्शन लेने एक राष्ट्रपति के रूप में यहाँ आया हूँ।'

स्वामी जी ने कहा 'हमारा समाज एक कठिन दौर से गुजर रहा है। शान्ति की ही जीत होनी चाहिए। यहाँ हजारों पीड़ित हैं हिन्दू भी, मुस्लिम भी। उनके कष्टों को कम करने के लिए सही कदम उठाने होंगे। जीवन पवित्र है, शान्ति पवित्र है। मेरी राष्ट्रपति और मुख्यमंत्री जी से विनती है कि वो शान्ति और मन की एकता के लिए काम करें। मेरी ईश्वर से बस यही प्रार्थना है कि कभी भी किसी व्यक्ति, समाज, प्रदेश या देश में ऐसे दुर्भाग्यपूर्ण दिन न आयें।'

मैंने कहा, 'स्वामी जी मनों का मिलन हमारे देश के लिए बहुत जरूरी है। मनों की एकता कैसे प्राप्त की जा सकती है? यह एकता हमारे देश की प्रगति की नींव है। स्वामी जी, आध्यात्मिक संगठनों का लोगों पर बहुत प्रभाव होता है और वो यह एकता ला सकते हैं। मेरे मन में एक विचार है कि यह महान भू-भाग गुजरात— जहाँ कई महान नेता हुए महात्मा गाँधी, जिन्होंने शान्ति का सन्देश दिया; सरदार वल्लभभाई पटेल, जिन्होंने भारतवर्ष को एक किया; विक्रम साराभाई, जिन्होंने कई बड़ी वैज्ञानिक और तकनीकी खोजें की और जहाँ बीएपीएस जैसे आध्यात्मिक

संगठन की स्थापना हुई—अपने जख्म खुद भर सकता है और पूरे देश में महान एकता लाने में मदद कर सकता है।'

स्वामी जी मुस्कुराते रहे। उन्होंने मेरे कन्धे पर हाथ रखा। मैंने उनकी आँखों में देखा; वो सच्चाई से भरी हुई थीं। 'राष्ट्रपति जी आप जो सोचते हैं उससे कहीं ज्यादा बड़े हैं। आप एक पवित्र आत्मा हैं जो धरती पर महान काम करने के लिए है।' जब मैंने जाने की आज्ञा माँगी, उन्होंने कहा, 'भुज के लोगों को प्यार और सहानुभूति दीजियेगा। ईश्वर अपनी कृपा बरसायेगा और आपको आशीर्वाद देगा। क्योंकि आपके मन में सहानुभूति है। आप गुजरात तक मदद करने आये हैं। भगवान स्वामीनारायण आपको खुश रखें। आपका स्वास्थ्य अच्छा रहे।'

भुज के रास्ते में प्रमुख स्वामी जी के शब्द मेरे मन में गूंजते रहे : 'कलाम जो तुम सोचते हो तुम वह नहीं हो। तुम शान्ति को बढ़ावा देने के लिए पैदा हुए हो। ईश्वर तुम्हारा अतीत, वर्तमान और भविष्य जानता है। वो सबकुछ किसी कारण से करता है। बिना किसी भय के देश का नेतृत्व करो। आलोचना, विरोधियों और हमलों से मत डरो। बुराई से भी कुछ अच्छा निकलेगा। अपने फैसलों और तर्कों का आधार ईश्वर को बनाओ। ईश्वर ही तुम्हारी सारी ऊर्जा का स्रोत है। ईश्वर ही तुम्हारे कौशल और दक्षता का स्रोत है। तुम्हारी उपलब्धियों का कारण भी ईश्वर है।'

राष्ट्रपति बनने से पहले भारत सरकार का प्रमुख वैज्ञानिक सलाहकार रहते हुए मैं भुज में एक साल पहले आये भूकम्प के बहुत से राहत कार्यों से जुड़ा हुआ था। राहत का काम कर रहे स्वयंसेवकों ने मुझे कैंप दिखाये और पुनर्वास की प्रक्रिया समझाई और उसकी सुविधाएँ दिखायीं। उन्होंने पानी, बिजली, राशन, साफ-सफाई, एक सामुदायिक केन्द्र और एक चिकित्सा केन्द्र की व्यवस्था की थी।

मैं बीएपीएस की टीम की तकनीकी जानकारी से प्रभावित हुआ जिन्होंने एक पूरा पुनर्वास क्षेत्र डिजाईन किया था, जहाँ 290 परिवारों के विस्तृत अस्थायी आश्रय की व्यवस्था की गयी।

स्वामीनारायण नगर में ताज़ी हवा के लिए की गयी व्यवस्था विशेष रूप से उल्लेखनीय थी। दोपहर के ढाई बजे थे और बाहर का तापमान 45 डिग्री सेल्शियस था। साधू ब्रह्मविहारी दास मुझे एक टेंट के अन्दर लेकर गये जो टीन की चादर से बना था। बाहर बेहद गर्मी थी लेकिन घर के अन्दर तापमान आरामदायक था।

गुजरने वाली तेज हवाओं का छत से गर्म हवा निकालने के लिए बड़ी होशियारी से प्रयोग किया गया था, इसके लिए छत को तिरछा बनाया गया था जिससे टेंट के ऊपरी हिस्से में लगभग एक फुट का खुला हिस्सा छूटा हुआ था। जमीन से उठने वाली गर्म हवा गुजरने वाली हवा की धारा के द्वारा बाहर धकेली जा रही थी।

मैं स्वयंसेवकों और साधुओं के समर्पण की दिव्यता की आभा से अभिभूत था, जिन्होंने अपने-आपको पूरी तरह से राहत और पुनर्वास के कार्य में समर्पित कर रखा था। उनका काम उनकी दक्षता का गवाह था और भगवत गीता के श्लोक, 'योग कर्माशु कौशलम' का जीता-जागता उदाहरण था।

इससे एक कदम आगे बढ़कर सूचना प्रौद्योगिकी, पूर्वानुमान और आकलन परिषद् ने 500 आश्रय बनाये थे, जो जूट और नारियल की जटा से बने बोर्ड और चावल की भूसी के बोर्ड से बने थे और बांस की चटाई जिसे स्टील के चैनलों और एँगलों से सहारा दिया गया था। उन्होंने फाइबर प्रबलित प्लास्टिक से सौ से अधिक मॉड्यूलर टॉयलेट भी बनाये थे। यह कुछ संरचनात्मक अनुप्रयोगों में धातुओं की जगह मिश्रित सामग्री के लाभकारी उपयोग का शानदार उदाहरण था। आश्रय की डिजाईन फाइबर सुदृढ़ीकरण और राल सामग्री के कई संयोजनों के लचीलेपन और प्रभावीकरण का एक नमूना था। ज्ञान का उद्देश्यपूर्ण प्रयोग वास्तव में एक दिव्य शक्ति बन जाता है।

पुनरावलोकन करने पर मुझे महसूस हुआ कि प्रमुख स्वामीजी के माध्यम से मैं अपनी असली पहचान के बारे में जान पाया। वास्तव में मैं कौन हूँ? क्या मैं वो हूँ जिसका कुछ ऐसा अतीत है, कुछ ऐसा शरीर है और व्यक्तित्व, भूमिकाएँ, प्रतिभा, कमजोरियाँ, सपने, भय और विश्वास है? दूसरे मुझे इस तरह से पारिभषित कर सकते हैं, लेकिन वास्तव में मैं वो नहीं हूँ। मैं कौन हूँ इसका पता गहरे सवालों से और अन्वेषण से और छोटे-से-छोटे अनुभवों से लगाया जा सकता है, जो 'मैं कौन हूँ' के विचारों से परे हैं। यह तभी पता लग सकता हैं जब मन शान्त हो और मुझे यह बताना बन्द कर दे कि मैं कौन हूँ। जब मैं कौन हूँ के बारे में सारे पूर्वाग्रह रुक जायें तब मैं असलियत में क्या हूँ वो बचता है : चेतना, जागरूकता, शान्ति, उपस्थिति, शान्ति, प्रेम और दैवीयता। आप वह हो जिसका कोई नाम नहीं है और फिर भी उसे हजारों नाम दिये गये हैं।

3

शान्ति बाँटने से बढ़ती है

'सद्भाव से छोटी चीजें बढ़ती हैं; इसकी कमी से बड़ी चीजें भी छोटी होती जाती है।'

—सल्लुस्त

ईसा पूर्व पहली सदी के रोमन सीनेटर

24 सितम्बर 2002 को शाम 4.45 बजे गाँधीनगर के अक्षरधाम मन्दिर में सफेद कार में हथियारों से लैस दो आतंकवादी घुसे। वे परिक्रमा क्षेत्र में पहुँचे और गोलीबारी शुरू कर दी, एक महिला और एक मन्दिर स्वयंसेवक को मार दिया। जैसे ही वे मुख्य प्रांगण में पहुँचे, उन्होंने ग्रेनेड फेंके और निर्दयता से भक्तों पर गोलियाँ चलाईं। उसके बाद वे प्रदर्शनी हॉल 1 में घुसे, और अधिक लोगों को मारा। वे हॉल की दीवारों पर पहुँचकर, छत पर चढ़ गये।

जब पुलिस इकाईयाँ मन्दिर परिसर में पहुँची तो उन्हें मन्दिर के दर्शनार्थियों को वहाँ से निकालने के उनके प्रयास में आतंकवादियों की ओर से गोलियों का सामना करना पड़ा। आखिरकार, रात 11.30 बजे दिल्ली से राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड (एनएसजी) पुलिस से जुड़े। 'ऑपरेशन वज्र' रात भर चलता रहा और सुबह 6.45 में दोनों आतंकवादियों को मारने के साथ समाप्त हुआ। हमले के अन्त तक एक साधु सहित इकतीस निर्दोष तीर्थयात्री, श्रद्धालु और कमाण्डो मारे गये। एक और गम्भीर रूप से घायल कमाण्डो, सुरजान सिंह भण्डारी की लगभग दो साल तक कोमा में रहने के बाद मृत्यु हो गयी।

अक्षरधाम नरसंहार एक और अन्तर्राष्ट्रीय त्रासदी थी, जिसमें आतंकवादियों ने हिंसा के बर्बर कृत्य में मासूम मर्दों, औरतों और बच्चों की जान ली थी। आतंक का उनका यह काम अधिक वीभत्स इसलिए भी था क्योंकि यह उस स्थान पर

किया गया था जो शान्ति, सद्भाव और सहनशीलता के लिए प्रेरणा का काम करता है। मैंने टेलीफोन पर प्रमुख स्वामीजी से कहा, 'स्वामी जी आप अकेले नहीं हैं। पूरा देश आपके साथ है।' भारत के राष्ट्रपति के रूप में मैंने इसे न केवल निर्दोष लोगों पर बल्कि साथ ही साथ धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रीय ढाँचे पर भी कायरतापूर्ण हमला कहा।

प्रमुख स्वामीजी ने बिना कोई दोषारोपण किये या किसी पर लांछन लगाये अपनी उदारता दर्शायी। अक्षरधाम उनकी सबसे अनमोल, भव्य और अद्भुत रचना थी। वह फिर भी शान्त रहे। उनकी सरलता छूने वाली थी। इस बर्बरतापूर्ण कृत्य से पीड़ित असहायों के लिए उनका हृदय व्यथित था। यह हमला साम्प्रदायिक दंगों को भड़काने और समाज के ताने-बाने को तोड़ने के मकसद से किया गया था। लेकिन स्थितप्रज्ञ[5] प्रमुख स्वामीजी ने प्रतिघात को प्रकट करने हेतु तैयार उकसावे पर प्रतिक्रिया नहीं कर आतंकियों के इन नापाक इरादों को हरा दिया। न केवल उनके हजारों सैकड़ों शिष्यों ने उनका आदर किया बल्कि बड़े पैमाने पर समाज में भी उन्हें सम्मान के साथ देखा गया।

प्रमुख स्वामीजी ने दुर्भाग्यपूर्ण पीड़ितों और उनके दु:खी सम्बन्धियों के लिए अपनी गहरी संवेदना प्रकट की और प्रार्थना की। उन्होंने घायलों के जल्दी से ठीक होने के लिए भी प्रार्थना की। यहाँ तक कि उन्होंने वहाँ भी पवित्र जल और फूल डाले जहाँ दोनों आतंकवादी मारे गये थे। उनकी आँखों में क्रोध की एक झलक भी नहीं थी। वे शान्त थे। साधुओं सहित वहाँ खड़े सैकड़ों लोग प्रमुख स्वामीजी की परम क्षमा से अचम्भित हो गये। उनकी उत्कट प्रार्थनाएँ थीं कि भविष्य में किसी को भी आतंक की ऐसी सोच मन में नहीं रखनी चाहिए और ऐसी त्रासदियाँ का दु:ख दुनिया में कहीं भी, किसी भी समुदाय या किसी भी देश पर नहीं आना चाहिए।

स्वामीजी ने अपने अनुयायियों को दण्ड नहीं देने बल्कि प्रार्थना करने के लिए प्रोत्साहित किया। 7 अक्तूबर 2002 को अक्षरधाम को पुन: आम जनता के लिए खोल दिया गया। प्रमुख स्वामीजी सहनशीलता, धैर्य और क्षमा के सिद्धान्तों के सच्चे अवतार बनकर उभरे। मेरा मानना है कि उनकी आध्यात्मिक शान्ति और साधुता ने न केवल गुजरात में शान्ति बहाल की बल्कि राज्य में साम्प्रदायिक हिंसा के शाश्वत चक्र को पूरी तरह से बन्द करने हेतु अन्तिम मुहर भी प्रदान की। जब मैं बाद में नेल्सन मंडेला से मिला तो एक बार फिर मैंने सहनशीलता, धैर्य और क्षमा की शक्ति को देखा।

बुरा वक्त आकर चला गया। अक्षरधाम मन्दिर अब भी शान्ति, प्रेरणा और सद्भाव का स्थल बना हुआ है। हमें ध्यान में रखना चाहिए कि मन्दिर, मस्जिद और चर्च ये सभी हमारे इतिहास के हिस्से हैं। ये सच्चाई के कीमती स्मारक हैं। चलिए इन्हें हम भावी पीढ़ी के लिए संरक्षित करें। क्योंकि जब आप पूजा/इबादत स्थल पर जाते हैं तो आप शान्ति और समृद्धि के लिए प्रार्थना करते हैं, न केवल खुद की बल्कि उन सभी लोगों के लिए भी जो आपके आस-पास रहते हैं। पूजा करने के स्थल से कहीं बढ़ कर, मन्दिर, मस्जिद और चर्च आपसी भाईचारे और विश्वास के प्रतीक हैं।

सिर्फ आपसी विश्वास ही हमें शान्ति बहाली और हमारे देश को विकसित करने में सहायता कर सकता है। और हम कभी भी शान्ति के सिद्धान्त के महत्व को नहीं भूलें जो सभी धर्मों के लिए आम है और पूजा स्थलों में प्रतिस्थापित हैं।

बचपन में, मैंने शान्ति कराने वाले की भूमिका को देखा है जो रामेश्वरम समुदाय में मेरे पिता जी निभाते थे। परस्पर विरोधी पक्ष—दोस्त, जोड़ीदार, परिवार और पड़ोसी—सुलह (अरबी में इसका मतलब है शान्ति और शान्ति देनेवाला) के लिए उनसे सम्पर्क करते थे। मेरे कुरान के शिक्षक ने मुझे सिखाया कि सुलह भी इसलाह शब्द का मूल है, जो विकास और सुधार का द्योतक है। इस शब्द का इस्तेमाल शान्ति बनाने के लिए किया जाता है। इस प्रकार शान्ति देनेवाला अच्छाई का प्रवर्तक और बुराई को खत्म करनेवाला होता है। इस्लामी परम्परा में शान्ति और शान्ति देनेवालों को मानव विकास का अहम हिस्सा माना गया है। इस्लाम में, शान्ति और शान्ति बनाने को प्रशंसा और पुरस्कार योग्य धार्मिक कार्य के रूप में देखा जाता है। शान्ति को परम सुख की स्थिति को पाने के क्रम में अनुकरणीय दिव्य गुणवत्ता के रूप में माना जाता है जिसका हम स्वर्ग, मनुष्य के उद्गम में आनन्द लिये हुए होते हैं।

प्रमुख स्वामीजी ने मेरे बचपन की शिक्षा की पुष्टि की कि हर कोई शान्ति चाहता है। जंगली पशु—यहाँ तक कि बाघ और चील भी अपने समूह के अन्दर शान्ति चाहते हैं। मानव जाति अन्य चीज़ों—धन, स्वास्थ्य, प्रसिद्धि के पीछे तो भागती है, लेकिन आखिरकार वे शान्ति ही चाहते हैं। यहाँ तक कि डकैतों के समूह भी खुद में शान्ति चाहते हैं; और जंगबाज अपनी जीत के साथ शान्ति चाहते हैं। लेकिन हमें केवल दिव्य शान्ति ही पूरी तरह से सन्तुष्ट करेगी।

इस संसार में शान्ति हमेशा आंशिक, कमजोर और अस्थायी होती है। फिर भी यह आगे बढ़ाने के लायक है। हम इसे कैसे प्राप्त करते हैं? प्रमुख स्वामीजी की कुशाग्र अन्तर्दृष्टियों में से एक है आन्तरिक और बाह्यशान्ति के बीच सम्बन्ध। आन्तरिक शान्ति तब आती है जब हमारे दिल और दिमाग—हमारे आदर्श और हमारी इच्छाएँ—के बीच सद्भाव रहता है। लेकिन पाप इस सद्भाव को विकृत और नष्ट कर देता है। जब हम अपने गुरु के पैरों में अपने पाप को त्याग देते हैं तो हमें आन्तरिक शान्ति प्राप्त होती है, क्योंकि 'गुरु हमारे सामने दैवी अवतार हैं, गुरु हमारी शान्ति हैं'।

भगवान स्वामीनारायण के उत्तराधिकारियों में सभी गुणातीत गुरु—गुणातीतानन्द स्वामी,[6] भगतजी महाराज,[7] शास्त्रीजी महाराज,[8] योगीजी महाराज[9] एवं प्रमुख स्वामीजी—महान शान्ति संधाता, सामंजस्य स्थापित करनेवाले और सुधारक हुए। उन्होंने उदाहरण के द्वारा लोगों के बीच सामंजस्य स्थापित किया, ताकि वे शान्ति से रह सकें और दूसरों को शान्ति दें।

शान्ति से कैसे प्यार किया जाये, शान्ति रखी जाये और शान्ति बनाई जाये प्रमुख स्वामीजी का जीवन इसका एक उदाहरण है। वे अपनी शान्ति को जितने लोगों से साझा कर सकते हैं, वे उन सभी का स्वागत करते हैं। जितने अधिक लोगों में शान्ति हो यह शान्ति उतनी ही प्रबल होती है। जैसे-जैसे परिवार बढ़ता है तो परिवार का घर छोटा लगने लगता है जबकि शान्ति के घर में जितने लोग प्रवेश करते हैं वह उतना बड़ा होता जाता है। सबसे मूल्यवान सम्पत्ति जो आप पा सकते हैं वह है एक खुला हृदय।

कुरान के अनुसार एक आदर्श समाज, दार-ए-सलाम है, वस्तुत: 'शान्ति का आवास' जिसमें यह पढ़ाया जाता है : सर्वशक्तिमान ईश्वर "शान्ति के निवास" में आमन्त्रित करते हैं और उनको मार्गदर्शन देते हैं जिन्हें वे सही मार्ग में चलाना चाहते हैं।

वास्तव में अक्षरधाम मन्दिर शान्ति के सच्चे निवास हैं। धरती पर शान्ति के इन निवासों की स्थापना ने सभी स्तरों पर : व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय, प्रत्येक के जीवन में शान्ति की स्थापना को अनिवार्य बनाया है।

अफ़्रीकी मूल के अमेरिकी नागरिक अधिकार आन्दोलन के नेता मार्टिन लूथर किंग जूनियर का सबसे उपयुक्त कथन : 'अँधेरा, अँधेरे को नहीं भगा सकता

है : केवल प्रकाश ही यह कर सकता है। घृणा, घृणा को दूर नहीं कर सकती : केवल प्यार ही यह कर सकता है।'

एक सन्धाता के रूप में, आप किसी को, जो कह सकते हैं—जिसे शान्ति से प्यार नहीं है और झगड़ा करना चाहता है—वह है, 'तुम चाहे जो कुछ भी कहो, तुम चाहे जितना मुझसे नफरत करो, फिर भी तुम मेरे भाई हो'। आपको यह पूरी भावना से लेकिन आराम से कहना चाहिए। इसे गुस्से से नहीं बल्कि प्यार के साथ कहें।

ऐसा ही प्रमुख स्वामीजी ने आतंकवादी हमले के बाद गाँधीनगर में किया था। और आपको जागरूक रहना चाहिए कि धैर्य अहंकार के बेचैन विष की दवा है। इसके बिना, आप अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारते हुए, सहर्ष अपने भविष्य की खुशी को नष्ट करते हैं। लापरवाह क्षणों में, आप अपने मूर्खतापूर्ण कार्य से सुयोग्य सम्भावनाओं को नष्ट कर सकते हैं। और बाद में अफसोस के अलावा आपके पास कुछ नहीं होगा।

प्रमुख स्वामीजी से मिलने के बाद मेरा मानना है कि निश्चित रूप से एक युग आयेगा जिसमें मानवता के बीच न्याय, विपुलता, भलाई, शान्ति और भाईचारा प्रबल होगा। यह वह समय होगा जिसमें लोगों को प्यार, आत्मबलिदान, सहिष्णुता, करुणा, दया और निष्ठा का अनुभव होगा। हमारा भौतिक संसार आध्यात्मिक रूप से जागरूक सत्पुरुष[10] की जरूरतों के समायोजन के लिए तैयार और सक्षम है। हमारे भौतिक संसार की कमियाँ एवं माँग असल समस्या नहीं है : हमें आध्यात्मिक जागरूकता और दार्शनिक स्वतन्त्रता की जरूरत है। अक्षरधाम मूल्यों और समझ से नास्तिक दर्शनों और अँधविश्वासों को हरायेगा; संसार को युद्धों, संघर्षों नस्लीय एवं जातीय दुश्मनी, क्रूरता और अन्याय से बचायेगा। स्वर्ण युग हमारे पीछे नहीं हमारे सामने हैं। इसके लिए, सभी धर्मों को शान्ति को बढ़ावा देना चाहिए और सबसे ऊपर, अन्य धर्मों और विश्वासों के लोगों के प्रति नफरत को समाप्त करना चाहिए।

4

बच्चे हमारा भविष्य

'कमजोर आदमी की मरम्मत करने से मज़बूत बच्चे बनाना कहीं आसान है।'

—फ्रेडरिक डगलस

उन्नीसवीं सदी के अफ्रीकी-अमेरिकी समाज सुधारक

साल 2004 में, प्रमुख स्वामीजी ने मुझे गाँधीनगर के अक्षरधाम में सुवर्ण बाल महोत्सव के लिए आमन्त्रित किया। इस उत्सव को बीएपीएस के बाल फोरम के संस्थापक योगीजी महाराज को श्रद्धांजलि के तौर पर आयोजित किया गया था। 8 फरवरी 2004 को जब मैं अक्षरधाम मन्दिर पहुँचा, आसमान नारंगी, हरे और सफेद गुब्बारों से भरा हुआ था और बच्चे जोर से पुकार कर मेरा उत्साह बढ़ा रहे थे। बच्चों के चेहरों पर आध्यात्मिक शक्ति दिख रही थी। 20,000 बच्चों ने शान्तिपाठ शुरू किया, 'ओम, द्यौः शान्ति...' और यह हवा में स्पन्दित होने लगा। आनन्द के पारावार में मैंने कहा, 'जानते हैं स्वामीजी, आपके साथ दिल्ली में मेरी मुलाकात बहुत शानदार थी और उस मुलाकात के शब्द अभी भी मेरे मस्तिष्क में प्रतिध्वनित होते हैं। हमेशा मुझे एक दिव्य विकिरण और दैवीय स्पन्दन का आभास होता है। मुझे महसूस होता है कि आप हमेशा मेरे पास ही हैं।' इस शानदार उत्सव में, मैंने ऐसे कामयाब उद्यमियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, पुलिस अधिकारियों, पायलटों, सैनिकों, गायकों, खिलाड़ियों और वैज्ञानिकों को सम्मानित किया जिन्होंने अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर एक अगुआ के तौर पर बेहतरीन काम किया। इनमें से हर किसी को बचपन में बीएपीएस के बच्चों की गतिविधियों के तहत प्रेरणा मिली थी। मैं अपने सामने मनो-मस्तिष्क को जागृत करने के अपने सपने को पूरा होते देख रहा था। मेरी आँखों में आँसू भर आये। लेकिन इन सब चीज़ों के बावजूद मुझे ज़रा भी इल्म न था कि आगे क्या होने वाला है।

उस कार्यक्रम के समाप्त होने के बाद, मैंने हजारों बच्चों के सामने मंच पर प्रमुख स्वामीजी को धन्यवाद दिया और उनसे विदा ली। साधु ब्रह्मविहारी दास मुझे परिसर के उस हिस्से की तरफ ले गये, जहाँ मेरी गाड़ियों का काफिला मेरा इन्तजार कर रहा था। यह तकरीबन 200 मीटर का पैदल रास्ता था। लेकिन कार में घुसने से ठीक पहले, मैं अक्षरधाम की तरफ देखने को मुड़ा, मैं यह देखकर हैरत में रह गया कि प्रमुख स्वामीजी मेरे पीछे आ रहे थे। वह मुझसे कुछेक फीट ही पीछे थे। वह चुपचाप और अनजाने ही मेरे पीछे आ रहे थे। मुड़कर मैंने पूछा, 'स्वामीजी, आप इतनी दूर मेरी कार तक क्यों आये?' उन्होंने उत्तर दिया, 'आप इतनी दूर दिल्ली से यहाँ आये।' मेरी आँखें भर आयीं; मैं उनकी इस विनम्रता से गद्‌गद् हो गया। दिल्ली की वापसी की उड़ान में मैं इसी क्षण के बारे में सोचता रहा। और उस वक़्त से, जब भी बीएपीएस के साधु राष्ट्रपति भवन आत थे, मैं उन्हें पोर्टिको तक छोड़ने आता था। दिल्ली वापस लौटने पर मैंने अपने दोस्त अरुण को फोन किया और हमने एक किताब *'यू आर बॉर्न टू ब्लॉसम'*[11] लिखने का फैसला किया ताकि हम प्रमुख स्वामीजी की उस भावना को कलमबद्ध कर सकें जिसमें वह युवा जिन्दगियों के फूलने-फलने की चिन्ता करते हैं।

सीखना एक जीवन भर की प्रक्रिया है और प्रमुख स्वामीजी दुनिया के सबसे बड़े खुले विश्वविद्यालय बीएपीएस के कुलाधिपति हैं। जो भी उनकी उपस्थिति में कुछ पल बिता लेता है, वह यह मान लेगा कि हर इंसान अपने-आप में ख़ास होता है। हर शख्स से एक ही काम करने, महसूस करने, सोचने, और एक ही चीज़ों में विश्वास करने की उम्मीद नहीं की जा सकती। हमारे ब्रह्माण्ड के निरन्तर विस्तारित होने की कुंजी विविधता में है, सादृश्यता या नियन्त्रण में नहीं। अगर कोई मुझे यह दिखाने में सक्षम है कि जो मैं सोचता हूँ या करता हूँ वह सही नहीं है, तो मैं सहर्ष बदल जाऊँगा। मैं ऐसे सत्य की तलाश में हूँ, जिससे कि कभी किसी को सच में कोई नुकसान न हुआ हो। लोग प्राय: भी सच सुनने की बजाय आत्म-वंचना और लापरवाही में लगे रहते हैं, और नुकसान उठाते हैं। ऐसे लोग, जो अपना मन नहीं बदल सकते, वह कुछ भी नहीं बदल सकते। यह ऐसे बुनियादी सत्य हैं, जिसे युवाओं में घर में या औपचारिक शिक्षा के दौरान भरना जरूरी है, ताकि वे लोग ताजिन्दगी सच की तलाश करते रहें।

किसी के जीवन में शुरुआती साल उसके निर्माण के होते हैं और इस तरह उसके विकास के लिए बेहद महत्वपूर्ण भी। बच्चे हमारा भविष्य हैं यह बात इतनी दफा दोहराई जा कर भी अनदेखी की गयी है कि इसने अपना महत्व ही खो दिया है। वर्तमान और गुजरा हुआ वक्त ही भविष्य है। इसी तरह, हमारा मौजूदा काम और वह वक्त जिसमें हम कुछ करते हैं और कामयाबी हासिल करते हैं, यह सब मिलकर ही भविष्य की दुनिया बनाते हैं। मौजूदा दुनिया इस दौर में जिस तरह से सँभाली, दुलारी, बिगाड़ी और सँवारी जा रही है, और जो बचा रहेगा वही—अच्छा या बुरा, विकसित या उत्परिवर्तित—भविष्य का विश्व होगा। मज़बूत बच्चे तैयार करना टूटे हुए बालिगों की मरम्मत की बनिस्बत ज्यादा आसान है। भविष्य के साम्राज्य बौद्धिकता के साम्राज्य होंगे। सपने, सपने और सपने ही भविष्य रचेंगे। सपने विचारों को पैदा करते हैं। विचार ही कार्यरूप लेते हैं।

जब हम यह कहते हैं कि आज की दुनिया ही भविष्य की दुनिया होगी, तो हमारा मतलब होता है, आज के लोग—और जो योगदान वह दे रहे हैं—वह दुनिया, इसके तरीकों और भविष्य के लिए इसके जीवन को बदल देंगे। आज के लोग हो सकता है भविष्य में न रहें, लेकिन उम्मीद है कि आज के बच्चे रहेंगे। जाहिर है, अगर आज के बच्चों को उनके नज़रिए, उनके मूल्यों, उनके विचारों और उनके आदर्शों में सही तरीके से ढाला जा सका, तो हम आने वाले कल के लिए एक बेहतर और संगठित विश्व की उम्मीद कर सकते हैं। हम विश्व के लिए उस दृष्टि को भी हासिल कर सकते हैं, जिसकी हम आज आशा कर रहे हैं।

हो सकता है भविष्य की यह दृष्टि हमें अपने जीवनकाल में हासिल न हो सके, क्योंकि परिवर्तन के लिए एक लम्बे समय की जरूरत होती है। यद्यपि, यह परिवर्तन होता अवश्य है। लेकिन यह परिवर्तन कैसा होगा यह बढ़ रही पीढ़ी ही तय करती है। ऐसे में, जब हम यह कहते हैं कि आज के बच्चे हमारा भविष्य हैं, तब हमारा मतलब होता है कि हमें अपने बच्चों को कुछ इस तरह ढालने की ज़रूरत है कि वह सही सोच सकें, सावधानी से निर्णय ले सकें और उनमें अपने फैसलों पर डटे रहने का साहस हो।

स्वतन्त्रता कभी भी विलुप्तता से एक पीढ़ी दूर नहीं होती। हम इसे अपने बच्चों को विरासत में नहीं दे सकते। स्वतन्त्रता के लिए हर पीढ़ी को लड़ना होता है, उसे संरक्षित करना होता है, और आगे बढ़ाना होता है।

आज, भारत समस्या की स्थिति में है क्योंकि पिछली पीढ़ियों द्वारा, इसके बच्चों को नज़रअन्दाज़ किया गया है। इसे मैं मौजूदा पीढ़ी के लोगों की आवाज़ों में महसूस करता हूँ। हमारे देश में कुछ ही दूरदर्शी लोग हुए हैं, और विज़न तो उससे भी कम रहा है। बिना विज़न के देश का कोई भविष्य नहीं होता। दुनिया के सभी प्रगतिशील देश ऐसे इसलिए हैं क्योंकि उनकी प्रगति को हर पीढ़ी के दूरदर्शी लोगों के विचारों की योजना, और मार्गदर्शन से तय किया जाता है। प्रमुख स्वामीजी लगातार प्रयास कर रहे हैं कि इन उच्च आदर्शों को बढ़ावा मिले। वह कहते हैं, 'एक छोटा बच्चा मानवता के सम्पूर्ण इतिहास को बदल सकता है।' उनके ज़रिए, मैं यह भगवान स्वामीनारायण की कहानी जान पाया।

3 अप्रैल 1781 को रामनवमी के दिन अयोध्या के नजदीक छपैया में हरिप्रसाद पाण्डे और उनकी पत्नी प्रेमवती के घर एक बच्चे का जन्म हुआ। उन्होंने बच्चे का नाम घनश्याम रखा। दस साल की उम्र में घनश्याम को सभी हिन्दू शास्त्रों का ज्ञान हो गया और वह पिता के साथ काशी, जिसे अब वाराणसी कहते हैं, की यात्रा पर निकला। काशी के महाराज ने चन्द्रग्रहण के अवसर पर पूरे भारत के ब्राह्मणों को आमन्त्रित किया था और उनको अपने महल में ठहराया था। गंगा के किनारे गोमठ आश्रम में घनश्याम के पिता को एक शास्त्रार्थ की अध्यक्षता करने के लिए कहा गया। इस शास्त्रार्थ में द्वैतवाद, अद्वैतवाद तथा ईश्वर की उपासना के अन्य दर्शनों पर चर्चा हो रही थी।

घनश्याम ने अपने पिता से पूछा कि क्या वह इसमें बोल सकता है। तब उसने सबके सामने दर्शन के अपने सिद्धान्त रखे, जिसे बाद में 'स्वामीनारायण दर्शन' के नाम से जाना गया। द्वैत दर्शन में, एक उपासक ईश्वर की पूजा करता है जबकि बाकी चीजें उससे अलग मानी जाती हैं। जबकि अद्वैत में उपासक ईश्वर से एकाकार अनुभव करता है। एकेश्वरवाद का यह सिद्धान्त इस्लाम में भी माना जाता है। स्वामीनारायण दर्शन में यह एकेश्वरवाद कहता है कि ईश्वर उपासक के अन्दर ही निवास करते हैं और उपासक का ईश्वर के साथ दास-स्वामी सम्बन्ध होता है। यह युवा घनश्याम के जीवन में एक निर्णायक क्षण था, और इसी आयु में अपने आध्यात्मिक समझ की परिपक्वता का एक आश्चर्यजनक प्रदर्शन भी। पूरी सभा चकित रह गयी और उसने घनश्याम की स्थापना को स्वीकार किया। इस बात ने

उनके अभिभावकों को खुशी से भर दिया। घनश्याम के माता-पिता ने इस घटना के कुछेक महीनों बाद ही शान्ति से अपने प्राण त्यागे।

29 जून 1792 की बारिश भरी रात में, घनश्याम ने नंगे पाँव और महज एक लंगोटी में घर छोड़ दिया। उनके पास महज एक काष्ठदण्ड और शास्त्रों का हस्तलिखित सारांश और एक कमण्डल था। अब उन्हें नीलकण्ठ वर्णी के नाम से जाना जाता था जो भिक्षा और पेड़ से गिरे हुए फलों पर जीवित रहते थे। उन्होंने हिमालय की चोटियों का रास्ता तय किया और केदारनाथ तथा बद्रीनाथ धामों के दर्शन किये। वह बद्रीनाथ के भगवान नर-नारायण के धाम में तीन महीने रुके। फरवरी 1793 में नीलकण्ठ उच्च हिमालय की तरफ निकल पड़े और मानसरोवर झील के दर्शन के लिए गये। वहाँ उन्होंने पाँच दिनों तक ध्यान किया। उनके बद्रीनाथ वापस आने पर नीलकण्ठ की मुलाकात युवा महाराजा रंजीत सिंह से हुई, जो बाद में पंजाब और कश्मीर के राजा बने। नीलकण्ठ गाँगेय मैदान में वापस लौटे और फिर वहाँ से पुनः हिमालय की तरफ से आज के नेपाल पहुँचे।

अक्तूबर 1794 में, नेपाल के जंगलों में नीलकण्ठ की भेंट गोपाल योगी से हुई और वहाँ वह उनके सान्निध्य में अष्टांग योग सीखने के लिए करीब एक साल तक रहे। जब गोपाल योगी का देहावसान हो गया, नीलकण्ठ ने पूर्वी बंगाल (आज के बांगलादेश) का भ्रमण किया और फिर वहाँ से वह असम गये। गुवाहाटी में कामाख्या देवी मन्दिर में, नीलकण्ठ का सामना पीबैक से हुआ। पीबैक काला जादूगर था और उसने शहर के लोगों को आतंकित कर रखा था। नीलकण्ठ ने उसे बाध्य किया कि वह अपने गुमराह तरीके छोड़ दे। उसके बाद नीलकण्ठ दक्षिण की तरफ निकले और गंगासागर पर जाकर रुके। वह सुन्दरबन में कपिल मुनि के आश्रम में रुके।

आज के ओडिशा के जगन्नाथ पुरी के रास्ते में नीलकण्ठ ने ओडिशा के राजा राजाराम मुकुन्द देव को अपना अनुयायी बनाना स्वीकार किया। 26 जून 1797 को राजा ने नीलकण्ठ को वार्षिक रथयात्रा के दौरान भगवान जगन्नाथ के रथ पर बिठाकर सम्मानित किया। उसके बाद, नीलकण्ठ तैलंग की यात्रा पर निकले, जिसे आजकल तेलंगाना कहते हैं। इसके बाद नीलकण्ठ वेंकटाचल, यानी आज के तिरुपति और उससे आगे रामेश्वरम[12] तक की यात्रा पर रहे। अक्तूबर 1798 में (नवरात्र के दौरान) भारत के दक्षिणतम बिन्दु कन्याकुमारी तक पहुँचने के

बाद नीलकण्ठ ने उत्तर की तरफ वापसी की यात्रा शुरू की। कुल मिलाकर, सात साल तक नीलकण्ठ भारत को लम्बाई-चौड़ाई में नंगे पाँव ही नाप चुके थे, और उन्होंने तकरीबन 8000 मील (करीब 12,800 किलोमीटर) का सफ़र तय किया। आखिरकार, उनकी यात्रा गुजरात के जूनागढ़ रियासत के लोज गाँव में रामानन्द स्वामी[13] के आश्रम पर खत्म हुई।

जब नीलकण्ठ वर्णी लोज पहुँचे, रामानन्द स्वामी गुजरात के पश्चिमोत्तर में स्थित कच्छ में थे। नीलकण्ठ वर्णी मुक्तानन्द स्वामी[14] के साथ आश्रम में रुके। 28 अक्तूबर 1800 को रामानन्द स्वामी ने नीलकण्ठ को सहजानन्द स्वामी के तौर पर दीक्षा दी और एक वर्ष के बाद 16 नवम्बर 1801 को उन्हें अपने शिष्यों का प्रमुख घोषित कर दिया। इस अवसर पर, सहजानन्द स्वामी ने रामानन्द स्वामी से दो अनूठे वरदान माँगे।

अगर आपके अनुयायी के भाग्य में एक बिच्छू के डंक का दर्द लिखा हो, तो लाखों-लाख बिच्छुओं का दर्द मेरे शरीर के हर हिस्से में हो, लेकिन आपके भक्त को कोई दर्द न हो। और अगर आपके भक्त की किस्मत में भिक्षापात्र लिखा हो, तो वह भिक्षापात्र मेरे पास आये, लेकिन आपके किसी भक्त को खाने-कपड़े का कष्ट न हो। कृपया मुझे यह दो वरदान दें।

31 दिसम्बर 1801 को, सहजानन्द स्वामी ने अपने अनुयायियों को जाप करने के लिए स्वामीनारायण मन्त्र दिया। इसके बाद से वह भगवान स्वामीनारायण के नाम से प्रसिद्ध हुए। हर तरफ के सत्यान्वेषी उनके इर्द-गिर्द जमा हो गये। उनमें से कई पूरी तरह समर्पित सन्त हो गये, जिन्हें भगवान स्वामीनारायण ने देहातों में भ्रमण करने का निर्देश दिया ताकि वह लोगों के जीवन में शुद्धता और आध्यात्मिकता का समावेश कर सकें। इस तरह कईयों ने अपनी बुरी आदतों, पापाचरणों, नकारात्मक आदतों, और अनैतिक विश्वासों को छोड़ दिया, और उन लोगों ने सकारात्मक जीवन जीना शुरू कर दिया।

कालावणी शहर में सिर्फ एक रात में भगवान स्वामीनारायण ने 500 सन्तों को परमहंस बनाया था (प्रबुद्ध आध्यात्मिक शिक्षक)। वह नित्य उपवास और सख्त ब्रह्मचर्य जैसे आध्यात्मिक प्रयासों को प्रोत्साहित किया करते थे। उन्होंने सभी लोगों में सदाचार के उच्चतम मूल्यों को बढ़ाने तथा धैर्य और प्यार के सिद्धान्तों

का पालन करने का निर्देश दिया। प्रतिउत्तर में, सभी परमहंसों ने अन्तिम साँस तक अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने का वचन दिया।

1 जून 1830 को गधादा शहर में भगवान स्वामीनारायण का उनन्चास वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। अट्ठाइस वर्ष के छोटे अन्तराल में उन्होंने एक अद्वितीय आध्यात्मिक आन्दोलन की अलख जगा दी। इसके केन्द्र में उन सबका स्थायी आध्यात्मिक परिवर्तन था जो उनके दैवीय अनुयायियों के सम्पर्क में आते थे। उनके अनुयायी जीवन के हर क्षेत्र से थे—गृहस्थों से लेकर असम्पृक्त संन्यासियों तक, किसानों से लेकर धनिक राजाओं तक, अनपढ़ों से लेकर बहुश्रुत विद्वानों तक और सन्तों से लेकर डकैतों तक—उनके आशीष के लिए किसी किस्म की कोई सीमा या बन्दिश नहीं थी। भगवान स्वामीनारायण अपने सभी अनुयायियों की निजी रूप से देखरेख करते, उनकी प्रसन्नता और आध्यात्मिक प्रगति की देखभाल करते, और इस तरह उनको परिवर्तित कर देते थे।

बाल योगी नीलकण्ठ वर्णी का यह जीवन अपने आप में कालातीत कथा है जो हमारी दुनिया के बच्चों को प्रेरणा दे सकती है ताकि वह अपनी सरहदों से परे उठ सकें। लेबनानी कवि खलील जिब्रान की एक खूबसूरत कविता है :

तुम्हारे बच्चे, तुम्हारे नहीं हैं।
वे खुद जीवन की लालसा के बेटे और बेटियाँ हैं।
वे आये हैं तुम्हारे ज़रिए, लेकिन तुममें से नहीं आये,
और, हालाँकि वे हैं तुम्हारे साथ,
लेकिन वह नहीं हैं तुम्हारे

थोड़े हैरत की बात है कि प्रमुख स्वामीजी भी बच्चों के कायदे से लालन-पालन पर बहुत दिलचस्पी लेते हैं। उन्होंने विद्या मन्दिर बनवाये हैं : मूल्य-आधारित ग्रामीण, शहरी और अन्तरराष्ट्रीय स्कूल ताकि बच्चों को सही तरीके से ढाला जा सके। ताकि उनको कल की दुनिया का सामना करने के लिए तैयार किया जा सके और वे भविष्य की दुनिया की अगुआई और मार्गदर्शन कर सकें। यह एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। प्रमुख स्वामीजी की कोशिशों से, कई अभिभावकों को यह भान हुआ है कि उन्हें अपने बच्चों को ज्यादा प्यार और समझदारी से सँभालना ज़रूरी है।

गाँधीनगर-शाहीबाग़ हाई स्कूल, अहमदाबाद के नवीं कक्षा के एक चौदह साल के छात्र और सुवर्ण बाल महोत्सव में हिस्सा ले रहे कीर्तन पटेल ने मुझसे पूछा, 'राष्ट्रपति महोदय, जब आप पहली बार प्रमुख स्वामीजी से मिले थे तो आपके मन में आने वाले पहले विचार क्या थे?'

इस सवाल ने मुझे मौका दिया कि मैं प्रमुख स्वामीजी के बारे में अपनी असली भावनाएँ उनकी मौजूदगी में बता पाऊँ। यह एक ऐसी बात थी जिसके बारे में मैंने कभी सोचा भी नहीं था।

मैंने कीर्तन पटेल को बताया, 'देखो कीर्तन, प्रमुख स्वामीजी मानवता के बड़े द्वीपसमूहों के बीच के पुल हैं। द्वीपसमूह में बहुत सारे द्वीप होते हैं। मानवता ने भी खुद को सैकड़ों टापुओं में बाँट लिया है। यह टापू धार्मिक हैं। हर द्वीप एक खूबसूरत इलाका है, जिसमें बहुत सारी वनस्पतियाँ हैं, जीव हैं और रहवासी हैं, फिर भी यह दूसरे द्वीप से कटा हुआ है। प्रमुख स्वामीजी इन विभिन्न द्वीपों को प्यार और करुणा के पुल बनाकर जोड़ रहे हैं। जब बहुत सारे लोग पूछते हैं, "आप आध्यात्मिकता को समाज सेवा से कैसे जोड़ सकते हैं?" वहीं प्रमुख स्वामीजी पूछते हैं, "आप इन दोनों को अलग कैसे कर सकते हैं?"।'

प्रमुख स्वामीजी ने बीएपीएस को एक बड़े वैश्विक कुटुम्ब में बदल दिया है। व्यावहारिक आध्यात्मिकता के स्तम्भ पर स्थापित बीएपीएस आज आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक चुनौतियों तथा ऐसे मसलों का सामना करने के लिए हर तरफ पहुँच रहा है, जिसका हम अपनी दुनिया में सामना करते हैं। प्रमुख स्वामीजी ने बीएपीएस की प्रकृति और उद्देश्य की पवित्रता को इसकी ताकत बना दिया है। उनके नेतृत्व में, बीएपीएस का प्रयास है कि समाजों, परिवारों और लोगों की देखरेख करके विश्व की देखरेख करें। यह काम परियोजनाओं के माध्यम से—उनके वर्ग, नस्ल, रंग या देश से परे—सामूहिक प्रेरणा और वैयक्तिक ध्यान के ज़रिए सभी को ऊपर उठाने के लिए किया जाता है। विश्वव्यापी नेटवर्क के ज़रिए इनके सार्वभौमिक काम की संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी सराहना की है।

इस तरह प्रमुख स्वामीजी ने एक बेहतर और सुखी दुनिया बनाने पर ध्यान केन्द्रित किया। आज, दस लाख या ज्यादा कटिबद्ध स्वामीनारायण अनुयायी, जिनमें से बहुत सारे विदेशों में रहते हैं, अपने दिन की शुरुआत पूजा और ध्यान से करते हैं। वे ईमानदार जीवन जीते हैं, और दूसरों की सेवा में नियमित समय देते हैं।

न शराब, न कोई दूसरा नशा, न व्यभिचार, न मांसाहार और शरीर व मस्तिष्क में कोई अशुद्धि नहीं, यह उनके पाँच आजीवन व्रत होते हैं। प्रमुख स्वामीजी ने लाखों प्रवासी भारतीय परिवारों के बच्चों में शुद्ध नैतिकता और आध्यात्मिकता के बीज बोकर उनको नया भविष्य दिया है। यह एक मूल्य-आधारित शिक्षा क्रान्ति है जो आधुनिक मानव इतिहास में अद्भुत है, और इसके फायदे अगले दस से पन्द्रह साल के बाद दिखने लगेंगे।

5

कर सकने का विश्वास

"एक विचार लो। उस विचार को अपना जीवन बना लो – उसके बारे में सोचो, उसके सपने देखो, उस विचार को जियो । अपने मस्तिष्क, मांसपेशियों, नसों, शरीर के हर हिस्से को उस विचार में डूब जाने दो, और बाकी हर विचार को किनारे रख दो। यही सफल होने का तरीका है।"

—स्वामी विवेकानन्द

6 नवम्बर 2005 को, प्रमुख स्वामीजी ने दिल्ली में अक्षरधाम मन्दिर की प्रतिस्थापना की। यह विश्व में सबसे बड़े हिन्दू मन्दिर और नये सात अजूबों में से एक के रूप में माना गया। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह एवं विपक्षी दल के नेता लालकृष्ण आडवाणी के साथ मुझे उद्घाटन समारोह में आमन्त्रित किया गया। इस भव्य मन्दिर प्रांगण में 40,000 से अधिक लोग उपस्थित थे। पारम्परिक समर्पण समारोह, देशभक्ति गीतों और शानदार लाइटिंग के साथ सांस्कृतिक नृत्यों सहित समारोह का विश्व भर में सीधा प्रसारण किया गया।

1968 से योगीजी महाराज, जो उस समय बीएपीएस के आध्यात्मिक प्रमुख थे, का स्वप्न यमुना नदी के किनारे एक विशाल मन्दिर के निर्माण का था। उन्होंने अपने इस स्वप्न को दो या तीन भक्त परिवारों को बताया जो उस समय दिल्ली में ही रहते थे और इस परियोजना को शुरू करने के प्रयास किये गये। हालाँकि जमीन की कमी के कारण थोड़ी ही प्रगति हो पायी। 1971 में योगीजी महराज का निधन

हो गया। प्रमुख स्वामीजी ने अपने गुरु योगीजी महाराज के स्वप्न को पूरा करने का संकल्प लिया और लगातार अपने भक्तों को प्रेरित करते रहे।

जमीन के लिए सरकारी प्राधिकरणों से अनुरोध किया गया और गाजियाबाद, गुड़गाँव और फरीदाबाद सहित कई अलग-अलग स्थानों का सुझाव दिया गया। प्रमुख स्वामीजी यमुना के किनारे एक मन्दिर निर्माण के योगीजी महाराज की इच्छा को पूरा करने के लिए दृढ़ता से खड़े हो गये। अप्रैल 2000 में इस परियोजना हेतु दिल्ली विकास प्राधिकरण ने 60 एकड़ जमीन और उत्तर प्रदेश सरकार ने 30 एकड़ जमीन देने की पेशकश की। जमीन प्राप्त होने पर, प्रमुख स्वामीजी ने इस परियोजना की सफलता हेतु स्थल पर पूजा की। 8 नवम्बर 2000 को मन्दिर निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रमुख स्वामीजी की अवधारणा के अनुसार सम्पूरा और बीएपीएस साधुओं के द्वारा परिकल्पित किया गया, इसमें विश्व भर से 7,000 राज मिस्त्री और 4,000 स्वयंसेवक लिये गये, इस अद्भुत भवन को पाँच साल पूरा होने में मात्र दो दिन पहले तैयार कर लिया गया। भक्ति आन्दोलन की परम्परा में, मन्दिर मोक्ष या परम मुक्ति के रास्ते में ईश्वर के प्रति उचित भक्ति कायम रखने के माध्यम प्रदान करने हेतु स्थापित हुए। बीएपीएस मन्दिरों ने अक्षर पुरुषोत्तम उपासना हेतु भक्ति प्रतिबद्धता को सुगम बनाया, जिसमें अनुयायी अक्षरब्राह्मण (आदर्श भक्त बनना) के आध्यात्मिक आदर्श स्थिति में पहुँचने के लिए प्रयास करते हैं। इस प्रकार उन्हें परम देव, पुरुषोत्तम की आराधना करने की क्षमता प्राप्त होती है।

अक्षरधाम मन्दिर के उद्घाटन समारोह में अपने भाषण में मैंने घोषणा की, 'एक लाख श्रद्धालुओं और स्वयंसेवकों की प्रतिबद्धता और समर्पण से इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ में अक्षरधाम पूरा हो पाया है। आज जो अक्षरधाम में हुआ है उसने मुझे प्रेरित किया है और यह विश्वास दिया है कि हम यह कर सकते हैं। आपके जैसे लाखों प्रज्जवलित मन के साथ 2020 से पहले ही एक विकसित भारत की प्राप्ति निश्चित तौर पर सम्भव है। समारोह के बाद, मैंने स्वामीजी से कहा, 'स्वामीजी जब मैंने अक्षरधाम और आपके कार्य को देखा तो इस भव्य आध्यात्मिक केन्द्र में टीम भावना और हजारों की कड़ी मेहनत दिखाई दी। आपने कैसे ऐसे उत्साही और आध्यात्मिक कार्यकर्ताओं को आकर्षित किया? मैं इस प्रकार के आध्यात्मिक नेतृत्व—उद्देश्यपूर्ण नेतृत्व के बारे में सोचता ही सोचता रहा हूँ—जो कि भारत 2020 लक्ष्य : राष्ट्रीय आर्थिक विकास मिशन के लिए जरूरी है। स्वामीजी, आप

सच्चे आध्यात्मिकता के अवतार हैं। आपमें दिव्य आत्मा है। आपके पास इतनी दिव्य शक्ति है कि इस संसार में कुछ भी सम्भव है। मैं एक बेहतर भारत के लिए आपके साथ काम करना चाहता हूँ।'

प्रमुख स्वामीजी ने कहा, 'हमें मिलकर काम करना चाहिए। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप में भी यह आध्यात्मिक ऊर्जा हो और हो सके तो बढ़े। प्रारम्भ से ही आपका जीवन काफी धार्मिक रहा है।' मैंने मन्दिर परिसर में तमिल सन्त कवि तिरुवल्लुवर की प्रतिमा स्थापित करने का सुझाव दिया और इस अवसर हेतु रचित अपनी कविता द *मदर एम्ब्रैस हर चिल्ड्रैन* (अपने बच्चे को गले लगाती माँ) प्रमुख स्वामीजी के समक्ष प्रस्तुत की :

मेरी यात्रा मेरे पैतृक घर से शुरू हुई :
प्यारे परिवार,
कई पालने,
मेरे देश की सभ्यता।
मेरी माँ ने मुझे प्यार से पाला है,
मेरे पिता ने मजबूती के तौर पर अनुशासन दिया है,
मैं हमेशा वहाँ रहना चाहता हूँ,
लेकिन उन्होंने मुझे आगे बढ़ने और श्रेष्ठ होने के
लिए बाहर भेज दिया।
मुझे यहाँ मेरी माँ का संवेदनशील प्यार
और मेरे पिता की सीख याद आती है,
कि "भारत यह कर सकता है",
सभ्यता का नया सवेरा—अक्षरधाम।

प्रमुख स्वामीजी ने मेरी कविता सुनी और प्यार भरी करुणामयी नजरों से मेरी ओर देखा। साधु ब्रह्मविहारी दास, जो अनुवाद कर रहे थे, ने जोड़ा, 'प्रवासी भारतीयों के बीच भारतीय संस्कृति के मूल्यों और ज्ञान के संरक्षण की काफी जरूरत है। बीएपीएस यह सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जीवनाधार प्रदान करता है, अत: विश्व भर में इसका विकास स्वभाविक घटना है। भारतीय प्रवास प्रतिमानों के परिणामस्वरूप अफ्रीका, यूरोप, उत्तरी अमेरिकी और एशिया-प्रशान्त क्षेत्र में मन्दिरों की स्थापना की गयी। उत्तरी अमेरिका में सत्तर मन्दिर और

यूरोप में बारह मन्दिरों सहित पाँच महाद्वीपों में 1,000 मन्दिर फैले हुए हैं। प्रत्येक मन्दिर सामुदायिक गतिविधियों का एक केन्द्र है।

मुझे आगे बताया गया कि इन सभी मन्दिरों और गतिविधियों में ऊर्जा का स्रोत गुरु का आध्यात्मिक नेतृत्व था, जो अक्षर अवतार होते हैं। अक्षर का शारीरिक रूप गुरुओं के रूप में मौजूद होता है। ये गुरु ही हैं जिनके माध्यम से भगवान स्वामीनारायण धरती पर हमेशा उपस्थित रहते हैं। यह आध्यात्मिक परम्परा गुणातीनानन्द स्वामी से शुरू हुई और भगतजी महाराज, शास्त्रीजी महाराज और योगीजी महाराज से होते हुए चल रहा है। हालाँकि जो प्रमुख स्वामीजी ने कभी नहीं कहा—लेकिन मैं संकेत से समझ गया—वह था कि मैं अक्षर के प्रकट रूप के ठीक सामने बैठा था। मैंने प्रमुख स्वामीजी में दो सदियों से अधिक की आध्यात्मिक धरोहर और भगवान स्वामीनारायण की सीधी ऊर्जा महसूस और अनुभव की। यह सच में मेरे जीवन का धन्य क्षण था। मेरे लिए सबसे शिक्षाप्रद यह था कि मुझे अक्षरधाम : आध्यात्मिकता के माध्यम से 'कर सकते हैं' प्रकृति का एक प्रदर्शन, के निर्माण के महत्व का भी एहसास हुआ। यह उभरते प्रवासी भारतीय वैश्विक समुदाय के लिए बहुत जरूरी है।

सभी महान कार्यों की तरह, अक्षरधाम परियोजना में भी कठिनाईयाँ और चुनौतियाँ आयीं। प्रमुख स्वामीजी में जमीन प्राप्त करने के लिए बत्तीस साल तक दृढ़ धैर्य रखा। पाँच सालों में एक चमत्कार को पूरा करने के लिए 11,000 कारीगरों और स्वयंसेवकों को एकजुट रखने और तालमेल बनाये रखने के लिए सहनशीलता जिसके बारे में विशेषज्ञों का कहना है कि इसके निर्माण में पचास साल लगने चाहिए! यहाँ तक कि वित्तीय संसाधनों सहित नियोजन, निर्माण और कार्यान्वयन में विकट चुनौतियाँ उत्पन्न होनी चाहिएँ। हालाँकि इन सभी चुनौतियों और कई और अधिक पर काबू पाया गया और रचनात्मक, सकारात्मक और शान्तिपूर्ण तरीके से यह कार्य पूर्ण हो गया।

प्रिय पाठकों, मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या आप प्रतिरोध का सामना दृढ़ता से करते हैं? जब विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हैं तो क्या आप स्वयं को यह कहते पाते हैं, 'जब गुजारा मुश्किल हो, तो मुश्किल ही गुजारा है? क्या आप स्वयं को यह कहते पाते हैं कि 'जहाँ चाह है, वहीं राह है'? क्या आप उनमें से हैं जो चुनौतियों का सामना करते हैं? क्या चुनौतियाँ आपको सक्षम बनाती हैं? क्या

आप सक्षम हैं, सामर्थ्यवान हैं और साधारणतया अपने मार्ग में आयी बाधाओं पर विजय पाते हैं? क्या आप आमतौर पर एक यथार्थवादी प्रवृत्ति वाले व्यक्ति के तौर पर अपना परिचय देते हैं? क्या आप सफलता मिलने तक कभी हार नहीं मानना चाहते हैं? संकट अथवा आपदा का सामना होने पर, क्या आप समस्याएँ देखते हैं अथवा उनके समाधान?

क्या आप आमतौर पर, प्रमुख स्वामीजी की तरह कहते हैं, 'मैं ईश्वर के माध्यम से सब कुछ कर सकता हूँ जो मुझे मजबूत करते हैं'। क्या आपने उन महान आत्माओं के जीवनों के बारे में पढ़ा है जिन्होंने लम्बी बाधाएँ पार की या अत्यन्त कठिन परिस्थितियों से गुजरे? यदि ऐसा नहीं किया है तो शायद आपको ऐसा करना चाहिए; यह प्रेरक और ज्ञानवर्धक है।

अपनी किताब *इंडोमिटेबल स्प्रिट*[15] में मैंने युवाओं को सावधान किया : 'आपके पास सफलता केवल तभी आ सकती है, जब आप अपने सामने के काम को पूरी लगन से करते हैं... देश के इतिहास में उस एक पन्ने को तैयार करने के लिए आपको याद किया जायेगा—चाहे वह आविष्कार, नवाचार का पन्ना हो या अन्याय के खिलाफ लड़ाई का।'

मैंने सत्तावनवें गणतंत्र दिवस की पूर्व सन्ध्या पर राष्ट्र के नाम अपने राष्ट्रपति सन्देश से उद्धृत किया : 'सामाजिक या राजनैतिक सभी प्रणालियों का आधार मानव की अच्छाई पर टिका हुआ है। कोई भी राष्ट्र इसलिए महान नहीं है क्योंकि संसद ऐसा या वैसा करती है, बल्कि उसके लोग महान और अच्छे होते हैं।' 1910 से पहले, अन्तरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कोई भी भारतीय वैज्ञानिक नहीं थे, लेकिन प्रथम विश्व युद्ध के बाद, खासतौर पर 1920 से 1925 के बीच, राष्ट्रीय जोश से प्रेरित होकर—जे.सी. बोस, सी.वी. रमन, मेघनाद साह और श्रीनिवासन रामानुजन विज्ञान जगत के चमकते सितारों के रूप में उभरे। आत्म अभिव्यक्ति की जरूरत—खुद को दृढ़ता से कहने के लिए प्रेरित करना—युवाओं के बीच एक प्रमुख मकसद बन गया। यह तेजी से स्पष्ट हो गया कि पश्चिम के समक्ष हम खुद का लोहा मनवा सकते हैं।

मैंने नोबेल पुरस्कार विजेता सर सी.वी. रमन द्वारा 1969 में युवा स्नातकों के एक समूह को दिये सम्बोधन के शब्दों से *इंडोमिटेबल स्प्रिट* में निष्कर्ष निकाला : 'मैं विरोधाभास के डर के बिना दावा कर सकता हूँ कि भारतीय दिमाग की गुणवत्ता

किसी भी जर्मन, उत्तरी यूरोप के देशों या अंग्रेज़ दिमाग की गुणवत्ता के समान है। हममें शायद कमी है साहस की, हममें शायद प्रेरक शक्ति की कमी है, जो कहीं से भी ली जा सकती है। मेरे ख्याल से हम हीनभावना की दलदल में फँस गये हैं।

भारत के पास 2020 तक एक विकसित राष्ट्र बनने का लक्ष्य है। यह तभी सम्भव है यदि हम हमारी जनसंख्या के 22 प्रतिशत जो गरीबी रेखा के नीचे हैं, के उत्थान के साथ-साथ एक दशक तक 10 प्रतिशत की सतत सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) वृद्धि दर प्राप्त करें। और यदि हम शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, रोजगार, अवसंरचना और सुरक्षा के रूप में एक बेहतर तरीके की जिन्दगी का आनन्द ले सकें। प्रौद्योगिकी इस लक्ष्य को साकार करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

भारत विश्व भर के देशों के बीच एक अनोखी स्थिति में है। भारत सभी विकसित राष्ट्रों का ध्यान आकर्षित कर रहा है क्योंकि यह युवा बुद्धिमान दिमाग का सर्वश्रेष्ठ स्रोत केन्द्र है। भारत की ऐतिहासिक स्थिति, जो कि सभ्यता युग के दौरान प्रबल थी, वापस आयेगी जब समाज अपना ध्यान कृषि से ज्ञान की ओर स्थानान्तरित करेगा। ज्ञान हम सभी के लिए सबसे बड़ा लाभ है; यह भारत को आर्थिक शक्ति बनने और विकसित देश का दर्जा पाने के लिए बेहतरीन अवसर प्रदान करता है। भारत के 54 करोड़ मजबूत युवाओं के पास भारत के भविष्य को आकार देने की जबरदस्त जिम्मेदारी है। इस क्षमता का एहसास कराने के लिए विचारशील कार्रवाई आवश्यक है। प्रमुख स्वामीजी की जिन्दगी जीवन में सफल होने के लिए जरूरी तीन असल चरणों और किसी की क्षमता को पूरा करने के लिए एक शानदार उदाहरण है। ये हैं : (1) उच्च लक्ष्य, (2) ज्ञान की प्राप्ति, और (3) समस्याओं को दूर करने के लिए कड़ी मेहनत और दृढ़ता।

और जबकि स्वामीजी की महानता की बराबरी करना कई मायनों में अकल्पनीय लग सकता है, दूसरों के प्रति उनकी सेवा का आदर्श और आत्म बलिदान वे गुण हैं जो विकसित राष्ट्र का दर्जा हेतु हमारे देश की प्रगति में अत्यावश्यक हैं। रामानन्द स्वामी के द्वारा भगवान स्वामीनारायण को दिये गये दो वरदान को प्रमुख स्वामीजी के द्वारा पूरा किया जा रहा है। चूँकि उनके भक्त को एक बिच्छू के डंक से पीड़ित होना भाग्य में लिखा हुआ है, वे अपने शरीर के हरेक छिद्र में लाखों लाख बिच्छुओं के जहर का कष्ट महसूस करते हैं ताकि उनके भक्त को कोई दर्द कष्ट नहीं पहुँचाए। यदि उनके भक्त के भाग्य में भीख का कटोरा लिखा है

तो वह भीख का कटोरा उनके पास आये ताकि किसी भी वक्त उनका भक्त खाने या कपड़े की कमी से परेशान नहीं होना चाहिए।

प्रमुख स्वामीजी का जीवन प्रतिरोध के मुख में दृढ़ता का एक प्रमाण है। जब उनके सच्चे भक्त विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हैं, तो वे खुद से कहते हैं, 'जब गुजारा मुश्किल हो तो मुश्किल ही गुजारा है', और 'जहाँ चाह हैं, वहीं राह है।' वे चुनौतियों का सामना करने के लिए बढ़ते हैं ताकि चुनौतियाँ उनमें सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शित करें। साधन सम्पन्न होने के नाते, वे परिस्थिति के अनुकूल हो जाते हैं और आमतौर पर अपने मार्गों में बाधाओं के बीच रास्ते खोज लेते हैं। जब तक वे जीत नहीं जाते तब तक हार नहीं मानते हैं।

वह उदाहरण देते हैं कि 'मैं स्वामीजी के माध्यम से सब कुछ कर सकता हूँ, जो मेरी आत्मा को मजबूत बनाते हैं।' जबकि स्वामीजी हमेशा यही कहते हैं, 'भगवान के साथ सभी कुछ सम्भव है।'

मैं बीएपीएस जैसे जीवन्त एवं गतिशील संगठनों के निर्माण की जरूरत की पहले से कहीं अधिक सराहना करता हूँ, ताकि हम इस ग्रह की दूर-दराज के क्षेत्रों मानवीय जरूरतों की विस्तृत एवं मिश्रित किस्म का पता लगा सकते हैं। विश्व भर में गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ) निष्ठा, ईमानदारी और मानवता के सिद्धान्त पर स्थापित किये गये हैं—नि:स्वार्थ शासन और निरन्तर सेवा इस समय की जरूरत है। प्रमुख स्वामीजी वास्तव में प्रधान रसायनविद् हैं, जो ना केवल आम व्यक्ति को अच्छे व्यक्ति में बदलते हैं बल्कि अच्छे लोगों को विशाल संगठनों में मिला डालते भी हैं।

6

धर्म का सही मार्ग : आत्मानुशासन

'बुद्धिमान खुद को अनुशासित करते हैं, बुद्धिहीन दूसरों को।'

—प्रमुख स्वामीजी

साल 2006 में 'लाभ का पद' नामक शब्दावली भारतीय राजनीति में खूब चर्चा में रही। लाभ के पद का मतलब है कोई व्यक्ति ऐसा पद धारण करता हो जिससे उसे कुछ वित्तीय आय, फायदा या लाभ हो रहा हो। यह कोई पद या लाभ का स्थान हो सकता है जिसमें कुछ मानदेय, वित्तीय फायदा या किसी अन्य किस्म के लाभ हों। ऐसे लाभ की मात्रा का कोई मतलब नहीं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 102 (1)(ए) के तहत किसी संसद सदस्य या विधायक को भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के तहत ऐसे पदों के अलावा अन्य लाभ का पद लेने पर पाबन्दी है, जो संसद के किसी कानून द्वारा उसके धारक को अयोग्य न ठहराये गये हों। संसद ने पहले कुछ पदों को इस अनुच्छेद का अपवाद माना था, मसलन मंत्रीपद या विपक्ष नेता का पद।

बर्र के छत्ते में हड़कम्प तो तब मचा जब श्रीमती जया बच्चन को राज्य सभा की सदस्यता से अयोग्य ठहरा दिया गया। इसकी वजह रही कि वह उत्तर प्रदेश फिल्म विकास निगम की अध्यक्ष भी थीं। यह मामला सुप्रीम कोर्ट में पहुँचा, जिसने अयोग्य ठहराने के फैसले को चुनौती देने की उनकी याचिका खारिज कर दी। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि इस बात से कोई फर्क़ नहीं पड़ता कि व्यक्ति उस पद से कोई मानदेय लेता हो या धन सम्बन्धी कोई लाभ लेता हो या नहीं, लेकिन उस प्रासंगिक स्थिति में तथ्य यही है कि इस पद पर रहने वाले व्यक्ति की सदन से अयोग्यता उचित

है। सरकारें, खासकर गठबन्धन सरकारें, अपने पक्ष में सदस्यों को बनाये रखने के लिए हरमुमकिन काम करती हैं, और सांसदों को लुभावने पद देना उनके सम्भावित असन्तोष को रोकने का एक तरीका बन गया है।

विपक्ष ने इस अयोग्यता के मसले से निकले परिणाम को बड़े करीने से सत्ताधारी कांग्रेस पार्टी की अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गाँधी के मत्थे मढ़ दिया, क्योंकि वह राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् की अध्यक्ष भी थीं, जो कि लाभ का पद था। 23 मार्च 2006 को श्रीमती सोनिया गाँधी ने लोकसभा और राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के अध्यक्ष पद दोनों से इस्तीफ़ा दे दिया।

लेकिन विभिन्न पार्टियों के करीब चालीस सदस्यों पर संसद की अयोग्यता का खतरा मँडराने लगा और विभिन्न विधानमण्डलों में 200 सदस्यों पर भी ऐसा ही मामला बन रहा था, इस तरह सभी पार्टियों में यह सर्वानुमति बनी कि संविधान में संशोधन करना चाहिए। 17 मई 2006 को संसद ने एक विधेयक पारित किया जिसमें छप्पन पदों को इस अनुच्छेद में लाभ के पद का अपवाद माना गया था, जिसमें राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् का अध्यक्ष पद भी था, ताकि सांसदों की अयोग्यता का सवाल ही न उठे। राज्य सभा ने मत विभाजन के जरिए इसे पारित कर दिया।

जब संसद (अयोग्यता निरोधक) संशोधन विधेयक 2006, जिसे आमतौर पर लाभ का पद विधेयक कहा जाता है, मेरी अनुमति के लिए आया, मुझे लगा कि जिस तरीके से इन अपवादों को शामिल किया गया है वह मनमाना है। लाभ के पद की अवधारणा संविधान निर्माताओं ने विकसित की थी, जिन्हें विश्वास था कि संसद कार्यपालिका को उत्तरदायी बनाये रखे। लेकिन, जबसे मंत्री और कुछ सांसद कार्यपालिका के भी कुछ पदों पर आसीन होने लगे, तबसे कुछ पदों को चुनने और सावधानी भरे अपवाद बनाने के विचार कार्यरूपों को आकार दिया जाने लगा था। विधेयक में चालीस से अधिक अपवाद शामिल थे। ज्यादातर विशेषज्ञों ने मुझे सलाह दी कि विधेयक जिस तरह से ड्राफ्ट किया गया है, उसने सावधानी से चयन करें और छूट देने की मूल अवधारणा के पीछे के सिद्धान्त को विकृत किया है। मुझे लगा कि विधेयक में अपवादों की सूची जरूर किसी न किसी मकसद से होगी। अपने ही देश के संविधान को संशोधित किये जाने की क्या महज इसलिए जरूरत है ताकि कुछ राजनीतिज्ञों को ठीक पदों पर बिठाये रखा जा सके, जिनके सामने सदन

की सदस्यता खोने का खतरा है? हर योग्यता को खत्म कर देना—या इस मामले में अयोग्यता को—यही तो सत्ता के केन्द्रीकरण की बुनियाद है। मुझे यह प्रतीत हुआ कि विधायिका की सदस्यता की शुद्धता और स्वतंत्रता ही हर राजनीतिक दल का लक्ष्य होता है, ताकि उनके लोग 'अयोग्यता के खतरे' के बिना एक से अधिक पदों के मजे ले सकें। इसमें कांग्रेस या समाजवादी पार्टी ही नहीं, बल्कि सभी राजनीतिक दल एक ही नाव पर सवार थे।

तो इस तरह, इस मसले पर सभी पार्टियों में एक बेमिसाल एकता और सर्वानुमति बन गयी, ताकि वे अपने मौजूदा और आगामी राजनीतिक हितों की रक्षा कर सकें। और वे राजनीतिक दल जिन्होंने श्रीमती जया बच्चन और श्रीमती सोनिया गाँधी पर हमले बोले थे उन्हें तो संवैधानिक आदर्शों को विलीन करने के ऐसे समझौते करने का कोई नैतिक अधिकार भी नहीं था।

मेरे पास तीन विकल्प थे : विधेयक पर हस्ताक्षर कर देना, हस्ताक्षर करने से मना कर देना या विधेयक को संसद के पास इसमें कुछ परिवर्तन के लिए आग्रह करते हुए वापस भेजने के अपने अधिकार का प्रयोग करना। मेरे पास 'प्रधानमंत्री या मन्त्रिपरिषद् की सलाह पर काम करने' के सिवा विकल्प कम थे, लेकिन अनुच्छेद 111 के तहत, भारत के राष्ट्रपति को 'सलाह के मुताबिक' ही काम नहीं करना है बल्कि वह स्वतंत्र राय भी रख सकता है।

मैंने तीसरे विकल्प को चुना। मैंने संसद से कहा कि इस विधेयक पर विचार करे और इसके कानूनी पक्ष और विधेयक के पूर्वव्यापी औचित्य की समीक्षा करे। मेरे विचार से, विधेयक का ध्यान सिर्फ, अपवादों के लिए निष्पक्ष और उचित मापदण्ड विकसित करने पर होना चाहिए जिसे सभी राज्यों और संघ शासित प्रदेशों में लागू किया जाये।

दसअसल, मुझे बहुत आश्चर्य हुआ जब संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) सरकार ने विधेयक को बिना बदलाव के मेरे पास वापस भेज दिया। मैंने भावनाएँ बेहतर करने के लिहाज से कुल जमा सत्रह दिनों का इन्तजार किया लेकिन इस बात के कयासों के मद्देनजर कि मैं इस विधेयक को अपने कार्यकाल के अन्त तक अटकाये रखना चाहता हूँ, जो कि अगले साल खत्म होने वाला था, या कि मुझे कानूनी सलाह लेनी चाहिए, जिसकी माँग विपक्षी राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन (एनडीए) कर रहा था, अन्ततोगत्वा मैंने विधेयक पर हस्ताक्षर कर दिये। एक वजह

यह भी रही कि सरकार ने संयुक्त संसदीय समिति का गठन कर दिया था जो यह परिभाषित करने वाली थी कि संविधान के अनुच्छेद 102 के तहत लाभ के पद कौन से हैं। यह 18 अगस्त 2006 की तारीख थी।

इस अवधि में, मैंने गहरी नैतिक दुविधा महसूस की थी : क्या मुझे हस्ताक्षर कर देने चाहिएँ या फिर मुझे इस्तीफा दे देना चाहिए? इसके लिए मुझे दैवीय मार्गदर्शन की जरूरत थी : ताकि मुझे विधेयक पर हस्ताक्षर करने के फैसले पर आश्वासन मिल सके, जिसके कानून बनने को त्रुटिपूर्ण होने को लेकर मैं आश्वस्त था। प्रमुख स्वामीजी 1 सितम्बर 2006 को नयी दिल्ली आये। 11 सितम्बर को मैं उनसे मिलने अक्षरधाम पहुँचा। मैं अपनी कठिन परिस्थिति प्रमुख स्वामीजी से बताना चाहता था, लेकिन इससे पहले कि मैं इस मसले पर पहुँचता, मुझे उनकी उपस्थिति में अपने सारे प्रश्नों के उत्तर मिल गये।

अधरधाम मन्दिर में प्रमुख स्वामीजी के साथ टहलते हुए मैंने खूबसूरत गजेन्द्र पीठिका देखी, जिसमें पाँच दृष्टिहीन लोगों द्वारा हाथी का विवरण देने वाली कहानी उकेरी गयी थी। इनमें से कोई भी दृष्टिहीन व्यक्ति हाथी के सही आकार को बताने में समर्थ नहीं था।

उनके ब्योरे और परिभाषाएँ अधूरी और एकपक्षीय थीं। यह दृष्टान्त बता रहा था कि किसी का व्यक्तिपरक अनुभव सच हो सकता है, लेकिन ऐसे तजुर्बे दूसरों के सच या सच की समग्रता को ध्यान में रखने में नाकाम होने की वजह से सीमित होते हैं। विभिन्न समयों में, इस प्राचीन दृष्टान्त ने सत्य की अभिव्यक्ति में सापेक्षवाद, मतभेद और सीमाओं के मसले पर अन्तर्दृष्टि प्रदान की है। इसी तरह, विशेषज्ञों के विचार भिन्न हुआ करते हैं क्योंकि उनके पास विभिन्न दृष्टिकोण होते हैं। विधेयक पर दस्तखत करने की मेरी निजी दुविधा अधिक इसलिए थी क्योंकि मेरे पास विशेषज्ञों की सलाहों की भरमार आ गयी थी और उससे मैं सम्भ्रमित हो गया था—सारी सलाहें मानीखेज़ थीं, लेकिन सच को लेकर एकपक्षीय थीं। ऐसे में, संविधान के पालन का मेरा फैसला और संसद की सर्वोच्चता के समक्ष झुकने का निश्चय वास्तव में सही था।

मुझे बहुत राहत मिली थी और मेरे मन का हर भ्रम मिट गया, मैंने प्रमुख स्वामीजी को यह कहते हुए धन्यवाद दिया कि 'पश्येम शरदः शतम, जीवेम शरदः शतम।' यह एक वैदिक मन्त्र है जिसका अर्थ है, 'आप सौ वर्षों को देखें, आप सौ

वर्षों तक जियें।' स्वामीजी मुस्कुराए और बोले, 'मेरे साथ राष्ट्रपतिजी, आपको भी सौ सालों तक जीना होगा।'

तब वह बोले, 'यह आध्यात्मिक सत्य भगवद्गीता में उद्घाटित किया गया है, "ना जायते मृत्ये वा कदाचिन...आत्मा अमर है। यह न जन्म लेती है न कभी मरती है।"' उन्होंने बड़े गरिमापूर्ण ढंग से मेरे प्यार को स्वीकार किया, अपने प्यार का मुझ पर इजहार किया और फिर भी मेरी उस उम्मीद भरी शुभकामना को नामंजूर कर दिया, जिसमें मैंने उनके शतायु होने की कामना की थी।

प्रमुख स्वामीजी जटिल सत्य समझाने के लिए भी आसान मिसालें दिया करते थे। मैंने उनसे पूछा, 'कोई ईश्वर की चेतना से कैसे जुड़ सकता है?' प्रमुख स्वामीजी ने मुझे कहा, 'आप एक रॉकेट वैज्ञानिक हैं। आपसे बेहतर कौन जान सकता है कि जब तक गुरुत्वाकर्षण का खिंचाव रहेगा, हम जो भी फेंकेंगे वह नीचे ही आकर गिरेगा। लेकिन एक बार जब रॉकेट पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से बाहर निकल जाये, तो यह नीचे नहीं गिरता और अन्तरिक्ष में निकल जाता है। इसी तरह, जब तक हम इस देह के सुख, मन की इच्छाओं और इस भौतिक संसार से आकर्षित और जुड़े रहेंगे, तब तक हम जन्म-मरण के चक्र से छूट नहीं सकते। इससे बचने की कोई राह नहीं है। लेकिन चूँकि आपकी सांसारिक इच्छाएँ कम होती जाती हैं, आप दुनिया के खिंचाव से आगे बढ़ते चले जाते हैं और आखिर में ईश्वर से जुड़ जाते हैं।'

जीवन में बहुत पहले ही मैंने अपने पिता की दुआ से सादा रहन-सहन सीख लिया था। बाद में, मैंने पाया कि सादा रहन-सहन आजादी, आत्मज्ञान और आत्मबोध की चाबी है। मैंने सादा जीवन जीने वाले लोगों से प्रेरणा हासिल की। मेरे अपने स्तर की सादगी और न्यूनतम जरूरतों ने हमेशा मुझे काम जारी रहने की याद दिलायी है। अपनी किताब *'गाइडिंग सोल्स'* में मैंने खलीफा उमर के बारे में चर्चा की है। यह बेहद शक्तिशाली और अकूत दौलत वाले शख्स एक साधारण मिट्टी के झोंपड़े में रहते थे, जिसमें दरवाजे भी नहीं थे। वह हर रोज़ सड़कों पर टहलते थे। वह महज जौ की रोटी या खजूर पर जिन्दा रहते थे। वह पेय के रूप में सिर्फ पानी लेते और बारह जगहों से पैबन्द लगा चोगा पहनकर दरबार में बैठते थे। आत्मानुशासन ही धर्म का सही मार्ग है। यही जीने की सही और जिम्मेदार राह है।

प्रमुख स्वामीजी का आत्मानुशासन इतना सटीक था कि यह उनके अवचेतन का दूसरा स्वभाव बन गया था।

प्रमुख स्वामीजी में, मैंने सादगी को एक मुख्य मूल्य के रूप में देखा, जो कि साहस, सहिष्णुता, ईमानदारी और धैर्य के साथ मिश्रित था। जब लोग युवा होते हैं तो शायद सादगी पर उतना ध्यान नहीं देते। युवाओं को हजारों कारोबारी यह कहकर भरमा लेते हैं कि पैसे खर्च करना और भौतिक वस्तुएँ जुटाना ही खुशी का रास्ता है। जब मैं हजारों युवा भक्तों को अक्षरधाम में स्वयंसेवा के काम में लगा देखता हूँ, तो मुझे यकीन होता है कि अक्षरधाम ने क्या बेशक़ीमती सौगात आज के युवाओं को दी है, उन्हें उपभोक्तावाद, भौतिकवाद और पलायनवाद के दौर में एक वैकल्पिक जीवनशैली मुहैया कराई है।

दिल्ली अक्षरधाम मन्दिर में स्वामीजी से उस तनाव पर बात करने के बाद निकलते समय, मुझे तमिल सन्त कवि तिरूवल्लुवर की मूर्ति देखकर बहुत खुशी हुई। आध्यात्मिक ज्ञान और साहित्यिक कौशल के इस कालातीत प्रतिमान की प्रतिमा, मन्दोवर में स्थापित की गयी थी। यह मुख्य मन्दिर की बाहरी सजावटी दीवार थी, और इस बात की इच्छा मन्दिर के उद्घाटन के दिन मैंने ही जाहिर की थी। तब मैंने जाना कि प्रमुख स्वामीजी किस तरह से बातों पर गौर किया करते हैं। वह एक महान दूरदृष्टा हैं, लेकिन वह छोटी चीजें कभी नहीं भूलते। वह अपने वादे पर कायम रहते हैं, सिर्फ मेरे लिए ही नहीं, बल्कि हर किसी के लिए यह बात उतनी ही सच है। वह किस तरह हर किसी की जरूरत का ख्याल रखते हैं और हर किसी के निवेदनों को याद रखते हैं, और इसके बावजूद अपने आसपास की हर चीज़ को लेकर इतने जागरूक कैसे रहते हैं? ऐसा इसलिए क्योंकि वह ईश्वर में गहरे डूबे हैं और उन्होंने खुद को उनके आगे समर्पित कर दिया है। मुझे एक तिरूवल्लुवर कुरल (संक्षिप्त तमिल कविता) याद आ रही है, जिसमें प्रमुख स्वामीजी की महानता का सही वर्णन मिल सकता है।

वह सिर जो प्रार्थना में, आठ विशेषताओं वाले प्रभु के सामने नहीं झुकता, वह उस देह की तरह है जिसकी सभी इन्द्रियों ने काम करना बन्द कर दिया है। (कुरल 9)

चूँकि प्रमुख स्वामीजी का सिर हमेशा ईश्वर के पैरों में रहता है, मैं उन्हें आठ दैवीय विशेषताओं वाले सच्चे अवतार के रूप में देखता हूँ: आस्था, नैतिक उत्कृष्टता, ज्ञान, आत्म-नियन्त्रण, दृढ़ता, भक्ति, भ्रातृत्वपूर्ण दया और प्रेम।

7

जीवन में ईश्वरीय उत्तम से कम कुछ नहीं

'खुशी नहीं, पवित्रता ही आदमी का अन्तिम हासिल है।'

—ओसवाल्ड चैंबर्स

बीसवीं सदी के पूर्वार्ध के स्कॉटिश बैपटिस्ट

11 फरवरी 2007 की तारीख थी। मैं सुबह टहल रहा था। उससे पहले की शाम मैंने तिरानवे साल के मशूहर लेखक खुशवन्त सिंह के साथ गुजारी थी और वह मुलाकात बहुत शानदार रही थी। उनकी तबियत खराब होने की खबर सुनकर मैं उनसे मिलने उनके घर गया था। उन्होंने मुझसे पूछा, 'आप देश के प्रमुख हैं, आप एक कलमघिस्सू के पीछे अपना वक्त क्यों बरबाद करने चले आये?' खुशवन्त सिंह को सुखद आश्चर्य हुआ था जब मैंने उनको बताया कि मैंने उनके सिखों के इतिहास पर लिखी किताब के दोनों खण्डों को पढ़ा है। उन्होंने मुझे बताया, 'प्रेसिडेंट साहिब, जब मुझे आपकी किताब *'इग्नाइटेड माइंड्स'* समीक्षा के लिए मिली, मुझे लगा कि मुझे इसके टुकड़े-टुकड़े कर देने चाहिएँ। यही काम मुझे बेहतर आता है। लेकिन जब मैंने इसे पढ़ा, तो मेरा मन बदल गया। मैंने देखा कि आप एक बहुत बेहतर लेखक हैं। आप सामान्य बोध की बातें करते हैं, जो अब कोई नहीं करता।' एक विद्वान पत्रकार से संजीदा तारीफ पाकर मैं काफी भावुक हो गया, मैं सोच रहा था कि वह जल्दी अच्छे हो जायें ताकि मुझसे मिलने राष्ट्रपति भवन आ सकें, ताकि वह मेरे साथ खूबसूरत मुगल गार्डन के कुछ चक्कर काट सकें, और उन हिरणों और मयूरों से मिल सकें जो यहाँ के स्थायी निवासी हैं—राष्ट्रपति की तरह नहीं, जो पाँच साल का कार्यकाल पूरा करके यहाँ से चले जाते है। मेरा कार्यकाल कुछ महीनों बाद ही खत्म होने वाला था इसलिए मुझे लग रहा था कि यही सही वक्त है जब मैं

कुछ उम्दा लोगों को राष्ट्रपति भवन आमन्त्रित करूँ जिन्होंने मेरे विचारों को एक आकार दिया है और जिनसे अभी तक मैं मिल नहीं पाया हूँ।

जब मैं बागीचे में टहल रहा था, एक मयूर अचानक मेरे सामने आ गया और इसने अपने खूबसूरत पंख खोल दिये। मुझे अचानक लगा कि प्रमुख स्वामीजी के अब यहाँ आने में और ज्यादा देर नहीं होनी चाहिए। मैं राष्ट्रपति भवन में उनकी उनके 700 साधुओं समेत मेहमान नवाजी करना चाहता था। मैं चाहता था कि वह बैठें, बातें करें, घूमें, ध्यान करें; ताकि उस जगह पर अपनी आभा बिखेर सकें जहाँ राष्ट्रपति रहते हैं। लेकिन वह आयेंगे या नहीं? अगर वह इनकार भी कर देते हैं, तो भी मुझे लगा कि मुझे उनको आमन्त्रित जरूर करना चाहिए। वह हर प्रोटोकॉल से ऊपर हैं।

कुछ घण्टों के बाद, मैंने अपने दफ्तर से कहा कि वह प्रमुख स्वामीजी से मेरी बात करवायें। मुझसे कहा गया कि वह मुम्बई में हैं और अस्वस्थ हैं। मैंने सन्देश भेजा कि मैं उनसे बात करना चाहता हूँ। एक घण्टे के बाद हम दोनों फोन पर थे। उनकी आवाज़ सुनकर मुझे बहुत राहत मिली। जब मैंने उनसे उनकी सेहत के बारे में पूछा, स्वामीजी ने कहा, 'आपकी आवाज़ सुनकर अब मैं स्वस्थ भी हूँ और प्रसन्न भी। ईश्वर भी खुश हैं।'

मैंने उनसे कहा, 'स्वामीजी, क्या आप जानते हैं कि मैं आपको हर रोज़ क्यों याद करता हूँ? क्योंकि एक भी दिन ऐसा नहीं जाता कि कोई मेरे पास आकर अक्षरधाम की तारीफ न कर जाये। आपने हमारी सभ्यता की विरासत को फिर से जिन्दा कर दिया है। कोई भी इसे करने में सक्षम नहीं था! देश के हजारों लोग रोजाना अक्षरधाम को देखने आते हैं। उन सबको भारतीय होने पर गर्व होता है और उनको बेहतर मनुष्य बनने की प्रेरणा मिलती है। दूसरे देशों के लोग भी आकर अक्षरधाम की भव्यता के गवाह बनते हैं। सिर्फ मैं ही नहीं, पूरे देश में कई लोग हैं जो आपकी सलामती की दुआ कर रहे हैं।'

स्वामीजी ने मेरे इस आवेगपूर्ण एकालाप को सुना और फिर नर्म आवाज में बोले, 'हर चीज़ ईश्वर की इच्छा से होती है।' मैने बड़े प्यार से उन्हें सेहतमन्द होने के बाद राष्ट्रपति भवन पधारने का आमन्त्रण दिया। प्रमुख स्वामीजी का उत्तर देश और काल की सीमा से परे था। उन्होंने कहा, 'जब भी आप मुझे याद करते हैं मैं वहीं राष्ट्रपति भवन में उपस्थित होता हूँ।'

तब, अप्रैल 2007 में, यूरोपियन संघ के स्वर्ण जयन्ती समारोह में मुझे यूरोपीय संसद को सम्बोधित करना था। वहाँ आमन्त्रित किया जाना ही बहुत बड़ा सम्मान था। मैं प्रमुख स्वामीजी के सन्देश को वहाँ से देना चाहता था। मैं थोड़ा निराश भी था क्योंकि मैं उनकी सलाह लेने के लिए व्यक्तिगत रूप से उनसे मिल नहीं पा रहा था। लेकिन तब मुझे यह एहसास हुआ कि हम लोग एक दैवीय तार से जुड़े हुए हैं, और वास्तव में यह महत्वपूर्ण नहीं है कि हम एकदूसरे के आमने-सामने बैठें और बात करें। उनके बारे में सोचना ही उनके साथ होने जैसा था।

प्रमुख स्वामीजी का सन्देश क्या है? वह स्वामीनारायण सम्प्रदाय के जीवित प्रमुख हैं। यह एक भक्ति सम्प्रदाय है जो धर्म के तहत ईश्वर की आराधना करता है। ईश्वर सर्वोच्च है, दिव्य है, वही सबका कर्त्ता है और सर्वव्यापी है। प्रमुख स्वामीजी कहते हैं कि धर्म, सही ज्ञान, असंपृक्तता और भक्ति, ईश्वर से ईश्वर की इच्छा के मुताबिक ही ईश्वर की राह पर तालमेल करने के कई तरीके हैं। एक स्पष्ट तालमेल ही भक्त को आन्तरिक शान्ति, समरसता और सुख प्रदान करता है, वहीं तालमेल में कमी से निराशा, हताशा और विषादं मिलता है। मैं इस बात को दुनिया के सबसे नामचीन नेताओं और राजनीतिज्ञों तक कैसे पहुँचाऊँगा? क्या मैं अपने विचारों को व्यक्त कर पाऊँगा? क्या वे लोग मुझे सुनेंगे?

25 अप्रैल 2007 को मैंने यूरोपियन संसद को सम्बोधित किया, और मैंने प्रबुद्ध समाज के लिए आह्वान किया, ताकि मूल्य आधारित नागरिकता का विकास हो, जिससे एक समृद्ध और शान्तिपूर्ण विश्व की ओर बढ़ा जा सके। जब राष्ट्र आपस में एकजुट समाज बनाने के लिए आपस में हाथ मिलाते हैं, तो इस विकास का लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुँचना आवश्यक है। दुनिया भर में, गरीबी, निरक्षरता, बेरोजगारी, और वंचना की वजह से गुस्सेवर और हिंसक ताकतों को बल मिल रहा है। यह ताकतें आपस में कुछ वास्तविक या कथित ऐतिहासिक शत्रुता, अत्याचार, अन्याय, असमानता या जातीय मुद्दों को आधार बनाकर एकजुट हो जाती हैं। और धार्मिक कट्टरवाद से, ज़हरीला अतिवाद दुनिया भर में फूट पड़ता है।

अपने भाषण में, मैंने कहा, 'भारत और यूरोपीय यूनियन दोनों ने समाज के कुछ पथभ्रष्ट वर्ग के अप्रिय कार्यों को झेला है, और झेल रहे हैं। हमें मिलकर ऐसी घटनाओं के मूल कारणों का पता लगाना होगा ताकि शान्ति को बढ़ावा देने का दीर्घकालिक हल मिल सके।' एक मूल्य आधारित शिक्षा के विकास और धर्म के

विकास पर जोर देते हुए मैं एक कदम और आगे बढ़ गया और प्रमुख स्वामीजी जैसी महान आत्माओं के विचारों को प्रस्तुत करना शुरू कर दिया जो धर्म को आध्यात्मिक बल में बदलने पर जोर देते थे। उन्होंने अपना विश्वास जताया था कि विभिन्न धर्म आध्यात्मिक तत्वों के लिए पुल का काम कर सकते हैं। जब मैंने अपनी ही आवाज़ में यह विचार सुने तो मुझे लगा मानो प्रमुख स्वामीजी ही मेरे ज़रिए बोल रहे थे, 'आध्यात्मिक तत्व मानवों के उन मूल्यों को प्रसारित करते हैं जिसे भौतिक जीवन के दौरान ही मानव जीवन और समाज के कल्याण के लिए बढ़ावा दिया जाना चाहिए।' पूरी संसद ने खड़े होकर मेरा अभिवादन किया, बल्कि यूरोपीय संसद के अध्यक्ष ने तो यहाँ तक कह डाला, 'उन्होंने कभी ऐसा भाषण नहीं सुना था।' यह ईश्वरीय प्रेरणा थी!

इससे पहले, 29 अगस्त, 2000 को प्रमुख स्वामीजी ने संयुक्त राष्ट्र संघ के सहस्राब्दी विश्व शान्ति शिखर सम्मेलन में दुनिया के करीब 2000 धर्मनेताओं के सम्मुख धार्मिक एकता और आध्यात्मिक शुद्धता की जरूरत पर बल दिया था। उनके शब्द अभी भी मेरे जेहन में प्रतिध्वनित होते हैं : 'मानव इतिहास के इस मोड़ पर, हम धर्मनेताओं को दुनिया भर में सिर्फ एक ही धर्म का सपना नहीं देखना चाहिए, बल्कि हमें सपना देखना चाहिए कि दुनिया के सभी धर्म एक ही हैं—एक मंजिल के अलग-अलग रास्ते। विविधता में एकता ही जीवन का पाठ है।

एक साथ पल्लवित-पुष्पित होना शान्ति का रहस्य है...आइए हम इस विरासत को साझा करें और समस्त मानव जाति के खड़े होने के लिए मूल्यों का एक साझा मंच तैयार करें...आइये, अपने अनुयायियों को हम सिखाएँ कि धर्म संख्याबल पर नहीं बढ़ता, बल्कि आध्यात्मिकता की गुणवत्ता से बढ़ता है। लम्बवत् गहराई क्षैतिज् विस्तार से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है...अतएव, हम अपने अनुयायियों को मतान्धता से दूर करें और आस्था तथा शुद्ध जीवन की तरफ प्रेरित करें...आइये, हम खुद को और अपने अनुयायियों को सिर्फ सहिष्णुता की तरफ न बढ़ायें बल्कि दूसरे धर्मों का सम्मान भी सिखाएँ, सिर्फ अस्तित्व नहीं बल्कि सह-अस्तित्व सिखाएँ, सिर्फ जयकारे न लगायें बल्कि दूसरों की मदद भी करें। हमें दूसरों की कीमत पर क़तई तरक्की नहीं करनी चाहिए, बल्कि दूसरों की भलायी के लिए खुद का कुछ हिस्सा त्यागना चाहिए।' प्रमुख स्वामीजी का भाषण आध्यात्मिक एकता के लिए मैग्ना-कार्टा सरीखा था।

राष्ट्रपति के तौर पर मेरा कार्यकाल 25 जुलाई 2007 को खत्म हो गया। संसद में अपने विदाई भाषण में मैंने भारत का एक विज़न पेश किया, जिसे साल 2020 तक भारत में लागू किया जाना था। भारत को ऐसा राष्ट्र बनना है—जहाँ ग्रामीण और शहरी विभाजन बहुत कम हो, जहाँ संसाधनों का बराबर बँटवारा हो और सबके लिए ऊर्जा और सेहत के लिए सुरक्षित पानी उपलब्ध हो, जहाँ खेती, उद्योग और सेवा क्षेत्र एक साथ मिलकर काम करें, जहाँ मूल्य आधारित शिक्षा से किसी मेधावी छात्र को सिर्फ सामाजिक या आर्थिक गैर-बराबरी के आधार पर वंचित न किया जा सके, जो प्रतिभावान विद्वानों, वैज्ञानिकों और निवेशकों के लिए सर्वश्रेष्ठ जगह हो, जहाँ सबके लिए बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध हों, जहाँ प्रशासन जवाबदेह, पारदर्शी और भ्रष्टाचार-मुक्त हो, जहाँ गरीबी का पूरी तरह से उन्मूलन कर दिया गया हो, निरक्षरता को खत्म कर दिया गया हो और जहाँ महिलाओं और बच्चों के प्रति अपराध न हों, जहाँ समाज में कोई अपने आप को अलग-थलग महसूस न करे, जो कि समृद्ध, स्वस्थ, सुरक्षित, आतंकवाद से मुक्त, शान्त और सुखी हो, जो सतत विकास के पथ पर बढ़ता रहे, और सर्वोपरि रूप से, जो जीने के लिए सर्वश्रेष्ठ जगहों में से एक हो, जो संसद, राज्य विधानसभाओं और अन्य संस्थाओं में अपने रचनात्मक और प्रभावी नेतृत्व पर गर्व करे।

इससे पहले कि मेरा कार्यकाल समाप्त होता, राजनीतिक हलकों में यह चर्चा होने लगी कि मेरा दोबारा चुनाव हो, ऐसी ही कई गप्पें और कानाफूसियाँ शुरू हो गयीं। कुछ हलकों से विचार आये कि मुझे राष्ट्रपति के रूप में दूसरा कार्यकाल जरूर लेना चाहिए। देश के दो कार्यकाल पूरे करने वाले एकमात्र राष्ट्रपति—वास्तव में उनका कार्यकाल दो से अधिक था, उनका कार्यकाल बारह साल तक था—देश के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद थे। वह 30 जनवरी 1950 से 13 मई 1962 तक राष्ट्रपति रहे थे। हालाँकि, राष्ट्रपति की भूमिका गैर-राजनीतिक होती है, कुछ-कुछ संवैधानिक राजतन्त्र जैसा, लेकिन वह राजनीतिक तन्त्र के हिस्सा थे। ऐसे में, उनके निर्वाचन और पुनर्निवाचन राजनीतिक निर्णय थे। मैंने इस बारे में प्रमुख स्वामीजी को फोन किया जो उस वक्त अमेरिका में थे। उन्होंने कहा, 'कलाम साहब, पुनर्निवाचन की मत सोचिये। जाने दीजिये! जाइये और लोगों की सेवा कीजिये। निस्वार्थ सेवा के ज़रिए एक व्यक्ति किसी भी पद से ऊपर आरोहित का जाता है, चाहे वह पद कितना भी ऊँचा क्यों न हो।'

25 जुलाई 2007 को मैं अपने उन दो पुराने बक्सों के साथ राष्ट्रपति भवन से बाहर निकल आया, जिनके साथ में पाँच साल पहले भीतर गया था। मुझे एक साधु की तरह ही महसूस हो रहा था। मुझे साधुओं का विचरना हमेशा अच्छा लगता था। अब, स्टेट प्रोटोकॉल और सुरक्षा की बाध्यताओं से मैं मुक्त था। अब कोई भी रीति-नीति मुझे सफ़र करने से रोक नहीं सकती थी : मैं जहाँ चाहे वहाँ जा सकता था। मैंने युवा मस्तिष्कों को जगाने का अपना संकल्प वापस दोहराया जिसे मैंने 30 जून 2001 की रात में प्रमुख स्वामीजी की उपस्थिति में लिया था। मैंने भारत राज्य की अगुआई राष्ट्रपति के रूप में की थी। अब मैं भारत का नेतृत्व एक बुज़ुर्ग नागरिक के तौर पर कर सकता था। मैं उन आमन्त्रणों की संख्या और ई-मेलों की लगातार बढ़ती संख्या देखकर हैरान था। दिल्ली में मेरा घर हजारों लोगों के लिए तीर्थस्थान की तरह बन गया था, जो किसी काम से दिल्ली आते तो मिले बिना न जाते थे। 'सिर्फ एक ईश्वर' पर यकीन, सिर्फ कर्मयोगी बनाना और मेरे सारे कामों को ईश्वर की इच्छा पर छोड़ देना, अब यही मेरा प्रक्षेप-पथ बन गया था।

15 अक्तूबर 2008 को मेरे जीवन के सतहत्तर साल पूरे हो गये। जन्मदिन मनाना मेरी आदत में नहीं है। इस दिन को भी मैं साल के दूसरे दिनों की ही तरह मानता हूँ, और जब भी मुमकिन होता है इसे चुपचाप बीत जाने देता हूँ। शाम के वक्त, मुझे बड़ी इच्छा हुई कि मुझे प्रमुख स्वामीजी से बात करनी चाहिए। वह उस वक्त गोंडल में थे। मैंने साधु ब्रह्मविहारी दास को फोन किया, 'कृपया प्रमुख स्वामीजी से कहें कि अब मैं भी एक साधु की ही तरह एक से दूसरी जगह पर घूम रहा हूँ।' प्रमुख स्वामीजी ने कहा, 'एक दिन साल 2001 में मैं आपसे मिला था। तब मैंने आपसे कहा नहीं था कि आप एक ऋषि हैं? प्राचीन काल के ऋषियों के लम्बे बाल हुआ करते थे, वह सब महान वैज्ञानिक हुआ करते थे, वह अविवाहित होते थे और महान मूल्यों के साथ कड़ी मेहनत किया करते थे। आप बिल्कुल वैसे ही हो। आप सादा जीवन और उच्च विचार के जाज्वल्यमान उदाहरण हैं।'

अपने खास अन्दाज में प्रमुख स्वामीजी ने मुझे अवाक् कर दिया था। लेकिन मैंने बात को यों ही नहीं जाने दिया। मैंने पूछा, 'क्या प्रमुख स्वामीजी यह सत्यापित करेंगे कि मैं एक साधु हूँ?' स्वामीजी ने कहा, 'हाँ। आप एक साधु हैं।' मैं आनन्दित हो उठा, 'प्रमुख स्वामीजी से मिला यह प्रमाण मेरे लिए ईश्वरीय उपाधि तुल्य था।'

हमारा लगाव गहरा होता जा रहा था, और अब मैं प्रमुख स्वामीजी की अनुपस्थिति में भी उनकी मौजूदगी का अहसास कर सकता था। एक ऐसे वक्त में, जो लोगों को बदलने के तरीकों और तकनीकों से भरा हुआ है—जो उनके बरताव पर असर डालने, और नयी चीजें करने और नयी बातें सोचने के लिए होता है—मुझे प्रमुख स्वामीजी से यह अनूठा उपहार मिला था। हमेशा के लिए।

8

परिवर्तन ही अनन्त, सतत, अमर है

तुम्हें ही वह परिवर्तन बनना पड़ेगा जो तुम दुनिया में देखना चाहते हो।

—महात्मा गाँधी

प्रमुख स्वामीजी एक दिव्य उद्देश्य के पथिक हैं। वे 17,000 से अधिक गाँव घूम चुके हैं और 750,000 से अधिक घरों को पवित्र कर चुके हैं। उन्होंने सही मायने में शानदार अक्षरधामों के लिए राह दिखाई लेकिन कभी भी कहीं भी स्थायी रूप से नहीं ठहरे। पूरे जीवन भारत और सम्पूर्ण विश्व में एक से दूसरी जगह घूमते रहे। वे अपने शिष्यों के महलों, घरों, उनकी झोपड़ियों में ठहरे और प्रभावी नेताओं और आम जनता से सम भाव से घुलमिल गये। मैंने भी काफी यात्राएँ की हैं, लेकिन वह मुझसे दस साल बड़े हैं और हालाँकि मुझे यात्रा के कष्ट को सहने की उनके शरीर की क्षमता को लेकर चिन्ता थी, फिर भी मैं जानता हूँ कि वे एक ही स्थान पर नहीं ठहर सकते। उनमें अलौकिक ऊर्जा है और अब उनका जीवन किसी भी मानवीय समय निर्धारण और हस्तक्षेप के परे है।

18 जुलाई 2010 को मैं अक्षरधाम, दिल्ली में प्रमुख स्वामीजी से मिला और एक सप्ताह बाद 20 जुलाई, 2010 को मैंने गाँधीनगर में अक्षरधाम की यात्रा की। मैंने वहाँ मनमोहक सत-चित आनन्द वाटर शो देखा। प्रदर्शनी में नचिकेता की कहानी के माध्यम से भारत के आन्तरिक प्रकाश के प्राचीन रहस्य को प्रकट किया गया। यह कहानी कथोपनिषद् की है। बालक नचिकेता मृत्यु के राजा यम से मृत्यु के बाद क्या होता है इसका रहस्य बताने को कहता है। यम इन प्रश्नों के उत्तर देने के इच्छुक नहीं थे; उन्होंने कहा कि यह देवताओं तक के लिए एक रहस्य बना हुआ

है। उन्होंने नचिकेता से कोई अन्य वरदान माँगने को कहा और कई भौतिक लाभों की पेशकश की। लेकिन नचिकेता ने जवाब दिया कि भौतिक चीजें क्षणभंगुर होती हैं। यमराज अन्दर-ही-अन्दर नचिकेता से प्रसन्न हो गये और उन्होंने मृत्यु से परे आत्मा की वास्तविक प्रकृति को सविस्तार बताया। इसके बोध की कुंजी यह है कि यह आत्म (आत्मा) सर्वोच्च सर्वशक्तिमान और इस ब्रह्माण्ड के रचयिता और प्राणशक्ति परमात्मा का ही एक हिस्सा है।

सत-चित-आनन्द वाटर शो के कई तकनीकी तत्व इसे देश में सही मायने में अनूठा बनाते हैं जिसमें 130 फुट चौड़े और 70 फुट ऊँचे वाटर स्क्रीन, लगभग 4,000 नलिकाएँ, 2,000 लाइट, 100 से अधिक पम्प, कई आग के गोले और तीन शक्तिशाली लेजरों के साथ 160 फुट लम्बा 'अग्नि समुद्र' (पानी में फैली आग) शामिल हैं जो सभी 7.1 सराउण्ड साउण्ड सिस्टम से जुड़े हैं। ये सभी प्रत्येक प्रभाव के सेकेण्डों में संचालित होने के साथ अत्यन्त सटीकता से नियन्त्रित किये जाते हैं। मुझे बताया गया कि यह प्रदर्शनी यवेस पेपिन के नेतृत्व में और 400 पेशेवर स्वयंसेवकों, जिन्होंने इस आश्चर्य को सम्भव बनाने के लिए अपनी प्रतिभा, समय, श्रम और पैसा दिया, के समर्थन से फ्रांस की विश्व प्रसिद्ध क्रिऐटिव एजेंसी ईसीए2 के द्वारा निर्मित की गयी है।

मैंने प्रमुख स्वामीजी से टेलीफोन पर बातचीत की जो उस समय दिल्ली में थे। मैंने कहा, 'इस वाटर शो के कारण भारत में हजारों नचिकेता तैयार होंगे। मुझे इस शो को देखने के दौरान एक पुस्तक लिखने का विचार आया।' प्रमुख स्वामीजी ने कहा, 'हम आभारी है कि आपने हमारे निमन्त्रण का सम्मान किया। मैं आपकी पुस्तक व आपके स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करता हूँ और आप भारत की सेवा करने में सक्षम रहें।' उसी दिन यह पुस्तक मेरी चेतना में पड़ गयी थी। बेशक, इसे अपने वर्तमान रूप में अंकुरित होने और सामने आने में अगले पाँच साल लगे।

जब भी मुझे स्वामीजी के स्वास्थ्य का पता चला मैंने उनसे टेलीफोन पर बात की। उन्होंने हमेशा मेरी आशंकाओं को शान्त किया और पलटकर मेरे स्वास्थ्य और खुशहाली के लिए अपना आशीर्वाद दिया। धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य गिरता गया और प्रमुख स्वामीजी ने सारंगपुर को इस जीवन का अपना अन्तिम निवास स्थान बनाने का निर्णय लिया। उनके समर्पित साधुओं ने वहाँ उनकी देखभाल के लिए सबसे आधुनिक चिकित्सा सुविधाएँ बनायीं और उनके सैंकड़ों हजारों

श्रद्धालुओं ने स्वामीजी के महान व्यक्तित्व की झलक पाने के लिए सारंगपुर का दौरा करना शुरू कर दिया।

11 मार्च 2014 को मैं भी अपने मित्र अरुण के साथ प्रमुख स्वामीजी से मिलने सारंगपुर गया। वाई. एस. राजन पहले से ही वहाँ थे। प्रमुख स्वामीजी ने खाना छोड़ दिया था, कभी-कभार तरल पदार्थ पीते थे और चिकित्सकीय देखभाल में थे। लेकिन वे खुश और दीप्तिमान थे। शान्ति और आत्मज्ञान का प्रसार कर रहे थे। मैंने उनमें दर्द की एक झलक या किसी भी शिकायत का भाव नहीं देखा। वे बोले नहीं लेकिन 10 मिनट से अधिक मेरे हाथ को पकड़े रहे। उन्होंने हम तीनों को माला दी और उपस्थित सभी साधुओं की ओर प्रसन्नता से मुस्कुराए। बाद में मैने वहाँ मौजूद 2,000 साधुओं, हरिभक्तों और विद्यामन्दिर के छात्रों को सम्बोधित किया।

मुझे नवम्बर 2005 को नयी दिल्ली में अक्षरधाम सांस्कृतिक प्रांगण की अपनी यात्रा याद है। उस दिन, मुझे इस प्रश्न का उत्तर मिला : आप अध्यात्म और समाजसेवा को कैसे जोड़ सकते हैं? जवाब यह था कि वे वास्तव में अविभाज्य थे। वे जो ईमानदारी से समाज की सेवा करना चाहते हैं आत्मिक रूप से शुद्ध होने ही चाहिएँ, और तभी वह ईमानदारी से समाज की सेवा कर सकते हैं। उसके बाद मैंने सभा को एक घटना सुनाई, जिसे घटित हुए पचास साल से अधिक समय हो चुका है। उस घटना ने एक महान संस्था के निर्माण की शुरुआत की थी।

1962 में, विक्रम साराभाई भूमध्यवर्ती क्षेत्र में एक अन्तरिक्ष अनुसन्धान केन्द्र की स्थापना के लिए स्थान ढूँढ रहे थे। वे कई जगह गये। केरल में थुम्बा उन्हें आदर्श लगा क्योंकि यह भूमध्यवर्ती इलेक्ट्रोजेट (ईईजे) के सबसे नजदीक था, जो धरती के आयनमण्डल के भूमध्यवर्ती क्षेत्र में दिन के समय पूर्व की ओर बहने वाली हवा धारा की एक संकीर्ण पट्टी है। यह ऊपरी वायुमण्डल में आयनमण्डल अनुसन्धान को सुगम बना सकता था। लेकिन यहाँ पल्लिथुरा क्षेत्र में, कई गाँव और हजारों मछुआरे समुदाय के लोग रह रहे थे। यह एक प्राचीन सन्त मेरी मगदलीन चर्च की स्थली और बिशप का निवास स्थान भी था।

कोई भी राजनेता या नौकरशाह वैज्ञानिक उद्देश्य हेतु इस जमीन के अधिग्रहण के लिए तैयार नहीं हुआ। दृढ़प्रतिज्ञ विक्रम साराभाई ने तिरुवनन्तपुरम के बिशप के समक्ष इस मामले को स्वयं पेश करने का निर्णय लिया। उस समय रेवरेंड फादर

बर्नार्ड बिशप थे। विक्रम साराभाई शनिवार को उनके घर गये। बिशप ने धैर्यपूर्वक उनकी बातें सुनी और रविवार प्रात: सर्विस के लिए उन्हें गिरजाघर में आमन्त्रित किया। बिशप ने सभा से कहा, 'मेरे बच्चों, मेरे साथ एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक हैं जो अन्तरिक्ष विज्ञान अनुसन्धान के कार्य हेतु हमारा चर्च और यह स्थान चाहते हैं। प्रिय बच्चों, विज्ञान उस सत्य को ढूँढता है जो मानवीय जीवन को समृद्ध बनाता है। आध्यात्मिकता सर्वोच्च स्तर का धर्म है। मेरे जैसे आध्यात्मिक प्रचारक मानव मन में शान्ति के लिए परमात्मा की मदद माँगते हैं।

संक्षेप में, जो विक्रम कर रहे हैं और जो मैं कर रहा हूँ, वह समान है— विज्ञान और आध्यात्मिकता दोनों मानव मन और शरीर में समृद्धि के लिए परमात्मा का आशीर्वाद माँगते हैं। हमारे निवास स्थान और चर्च अन्य स्थान पर नये बनाकर हमें दिये जायेंगे। बच्चों, क्या हम इन्हें एक वैज्ञानिक मिशन के लिए ईश्वर का निवास स्थान, मेरा घर और आपके घर दे सकते हैं?' वहाँ पूरी शान्ति थी उसके बाद सभा ने हार्दिक 'आमीन' कहा जिससे पूरा चर्च गूँज उठा। तिरुवनन्तपुरम के बिशप ने हमारे राष्ट्रीय वैज्ञानिक लक्ष्यों के सम्मान में भारतीय अन्तरिक्ष अनुसन्धान संगठन (इसरो) की स्थापना के लिए चर्च को समर्पित करने का महान निर्णय लिया। मैंने उस परिवर्तित चर्च भवन में काम किया है जो हमारा डिजाइन केन्द्र था। हमने वहाँ रॉकेट का समायोजन शुरू किया और एफआरपी उत्पादों हेतु फिलामेंट वाइण्डिंग मशीन डिजाइन की। बाद में, थुम्बा इक्वेटोरियल रॉकेट लॉन्चिंग स्टेशन से विक्रम साराभाई अन्तरिक्ष केन्द्र (वीएसएससी) और देश भर में कई अन्तरिक्ष केन्द्रों की स्थापना हुई। जब मैं उस घटना के बारे में सोचता हूँ, मैं महसूस करता हूँ कि कैसे आध्यात्मिक और वैज्ञानिक नेता मानव जीवन के सत्यार्थ के प्रति सम्मान देने में झुक सकते हैं। टीईआरएलएस और उसके बाद वीएसएससी के जन्म ने देश को विश्व स्तरीय रॉकेट प्रणालियों को डिजाइन करने, विकसित करने और तैयार करने की क्षमता प्रदान की।

इसके बाद, भारत में भू-समकालिक, सूर्य-समकालिक और मौसम विज्ञान अन्तरिक्षयान, संचार उपग्रह और दूरसंवेदी उपग्रहों को लांच करने की क्षमता विकसित हुई।

इन्होंने त्वरित संचार, मौसम की भविष्यवाणी और देश के लिए जल के स्रोतों को खोजने की क्षमता प्रदान की है। आज, न तो विक्रम साराभाई और न ही

रेवरेंड फादर पीटर बर्नार्ड परेरा हमारे बीच हैं लेकिन उनकी महानता और मन की एकता का साक्ष्य अब भी है और पीढ़ियों तक चलता रहेगा।

यहाँ मैं *सतसंग*[16] पुस्तक से एक अंश उद्धृत करना चाहता हूँ 'जो मुनष्य अपना सब कुछ दे देता है उसके पास क्या बचता है? कुछ भी नहीं! लेकिन वास्तव में यह कुछ भी नहीं सबकुछ हो जाता है। यह अच्छाई, पवित्रता और मानवता का समुद्र हो जाता है, आध्यात्मिकता का एक सार बन जाता है जो लाखों को प्रेरित करने के लिए काफी है।' प्रमुख स्वामीजी अब मानवता की सर्वोच्च अवस्था में पहुँच चुके हैं जिसे किसी पद, किसी पहचान; यहाँ तक कि किसी सम्मान की जरूरत नहीं है। अब वे उस जागृत अवस्था में रहते हैं, जहाँ से कहीं भी जाना नहीं, किसी से कुछ भी कहना नहीं, कुछ भी करना नहीं और फिर भी उन सभी चीज़ों की देखरेख करना जिनकी योजना बनाई जा रही है, तैयार किया गया और प्रबन्धित किया गया है। इनका जीवन नि:स्वार्थ सेवा और उत्कृष्टता के सृजन का एक अतुलनीय उदाहरण है। इनकी उपस्थिति में मैं अपनी असल आत्मा के बारे में अधिक जागरूक हो गया हूँ।

आपके जीवन की परिस्थितियाँ आपसे जो कुछ भी माँगे, अपने स्वयं के व्यक्तिगत प्रमुख स्वामीजी के जोशपूर्ण तरीके से उनके प्रति काम करें। कोई और बनने की कोशिश में समय बर्बाद नहीं करें। हम यहाँ किसी और का अनुभव लेने नहीं आये हैं। हमारे पास यहाँ भगवान की इच्छा अनुसार अपने खुद के ज्वलन्त अनुभव हैं। इसलिए जो हुआ और जो नहीं हुआ उसे कल से नहीं जोड़ें। यह सभी अनुभवात्मक शिक्षण था। और आज को कल से नहीं आँकें। हर नया दिन एक नयी कक्षा है—नया सबक है, नया अनुभव है। चलिए हम आज के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ दें; चलिए हम आज पूरी तरह जीयें! पल दर पल, प्रत्येक चरण केवल एक चरण है—वास्तव में यह यात्रा शाश्वत है।

मैं नहीं जानता कि मैं और प्रमुख स्वामीजी दोबारा कब मिलेंगे। लेकिन उनके शब्द हमेशा मेरी यादों में सदा संरक्षित रहेंगे। हमारे बीच एक दिव्य सम्बन्ध स्थापित हो गया है जो हमेशा रहेगा। मैं अपने पर प्रमुख स्वामीजी के प्रभाव को कैसे संक्षेप में प्रस्तुत करूँ? उन्होंने वास्तव में मुझे बदला है। वे मेरे जीवन में आध्यात्मिक आरोहण के उच्चतम स्थान पर हैं, जो मेरे पिताजी से शुरू होता है, उसके बाद डॉ. ब्रह्म प्रकाश और प्रो. सतीश धवन के द्वारा जारी रहा था; अब, अन्त

में प्रमुख स्वामीजी ने मुझे देवीय समकालिक कक्षा में बैठा दिया है। अब किसी भी और कर्म क्रिया की जरूरत नहीं बची है, क्योंकि अमरत्व में मैं अपने आखरी पड़ाव पर पहुँच चुका हूँ।

इस किताब के दूसरे भाग में मैं बोचासनवासी श्री अक्षर पुरुषोत्तम स्वामीनारायण संस्था के द्वारा किये गये कार्यों को शामिल करने और संगठन के लक्ष्य के पीछे की अन्तर्दृष्टि और औचित्य को पेश करने का प्रयास करूँगा। स्वामीनारायण सम्प्रदाय वैष्णव मत का एक रूप और हिन्दू धर्म का आधुनिक सम्प्रदाय है। भगवान स्वामीनारायण (1781-1830) इस संगठन का मुख्य चेहरा हैं। शास्त्रीजी महाराज द्वारा 5 जून 1907 को एक संगठन के रूप में बीएपीएस की स्थापना की गयी। संस्थापक के इस सैद्धान्तिक रुख पर इसकी स्थापना हुई कि स्वामीनारायण ने अक्षर के व्यक्ति में प्रकट रहने का वादा किया था, एक शब्द जिसका इस्तेमाल उनके प्रमुख भक्त और स्वामीनारायण के निवास स्थान के लिए इस्तेमाल किया गया।

गुणातीतानन्द (1785-1867) को भगवान स्वामीनारायण के पहले आध्यात्मिक उत्तराधिकारी के रूप में स्वीकार किया गया, उनके बाद आये भगतजी महाराज (1829-1897), शास्त्रीजी महाराज (1865-1961) और फिर उनके बाद योगीजी महाराज (1892-1971)। प्रमुख स्वामी महाराज बीएपीएस के मौजूदा गुरु और आध्यात्मिक नेता हैं। उनके अनुयायी मानते हैं कि वे भगवान स्वामीनारायण और सात्विक रूप से, अक्षर की अभिव्यक्ति हैं और भगवान स्वामीनारायण के शाश्वत निवास से निरन्तर जुड़े हैं। प्रमुख स्वामी महाराज के नेतृत्व में बीएपीएस तेजी से एक वैश्विक हिन्दू संगठन के रूप में बढ़ा है और कई मानदण्डों में इसका महत्वपूर्ण विस्तार दिखा है। वर्तमान में, बीएपीएस में दस लाख भक्त, 950 से अधिक साधु, कई महाद्वीपों में 1,100 मन्दिर, 3,900 केन्द्र, 12,000 से अधिक साप्ताहिक सभाएँ और समागम और मानवीय और धर्मार्थ गतिविधियों की मेजबानी शामिल है। यह वास्तव में अच्छे कार्यों की एक शानदार मिसाल है।

भाग़ दो

व्यवहार में आध्यात्मिकता

मानव सेवा से बड़ा कोई धर्म नहीं है। जनहित के लिए काम करना ही सबसे बड़ा धर्म है।

—वूड्रो विल्सन
अमेरिका के 28वें राष्ट्रपति

9

अदृश्य का द्वार

उपस्थिति अदृश्य की झलक मात्र है।

—ऐनाक्सागोरस

सुकरात से पूर्व के यूनानी दार्शनिक

मेरा जन्म रामेश्वरम में तेजस्वी मन्दिर की छाया तले मस्जिद मार्ग पर हुआ। रामेश्वरम का संस्कृत अर्थ 'भगवान राम के स्वामी' है; यह रामनाथ स्वामी मन्दिर के इष्ट देव शिव का एक विशेषण है । रामेश्वरम टापू से 22 किलोमीटर पहले सेतुसराय एक जगह है, कहा जाता है कि भगवान राम ने यहीं से पत्थरों का तैरता हुआ पुल बनाया था—रामसेतु—जो रामेश्वरम के धनुषकोडी से लेकर श्रीलंका के तलैमन्नार तक बना है। रामेश्वरम् में सैकड़ों-हजारों श्रद्धालु आते हैं। इस टापू की पूरी अर्थव्यवस्था उनको बुनियादी सुविधाएँ प्रदान करने पर टिकी हुई हैं—खाना और रसद, परिवहन और कुली सेवाएँ और नौकाएँ—और सीप से बनी हुई कलाकृतियों को बेचना।

मन्दिर के प्रमुख पुजारी, पक्षी लक्ष्मण शास्त्रीगल, मेरे पिताजी के अच्छे मित्र थे। उनका नियमित रूप से साथ उठना-बैठना और देर तक बातें करना मुझे आज भी अच्छी तरह याद है। उन दिनों बाहर निकलने पर सर ढँकना अनिवार्य था, मेरे पिता सर पर गोल टोपी लगाते थे और शास्त्री जी पगड़ी बाँधते थे। जब मैं छोटा था तो यही सोचता था कि पहला मन्दिर कब और कैसे बना होगा? किसने समन्दर से घिरे इस टापू पर पत्थरों की यह विशाल इमारत बनायी होगी? क्या भगवान राम खुद यहाँ आये थे? क्या सच में हनुमान जी और वानर सेना ने तैरते पत्थरों से पुल बनाया था? पत्थर में तराशी गयी गाथाएँ बड़ी आकर्षक थीं। मस्जिदों में मूर्तियाँ क्यों नहीं होतीं?

बाद में मेरे अध्यापक, शिवा सुब्रह्मण्यम् अय्यर ने मुझे बताया कि वैदिक काल तक कोई मन्दिर नहीं था, यानी वह युग जो 500 ईसा पूर्व के आसपास खत्म हुआ था। वैदिक मन्त्रों में वर्णित देवी-देवताओं की छवियों को सजाने का चलन वैदिक काल के अन्त में आया होगा। मेरे अध्यापक ने बताया कि अधिकतर यह माना जाता है कि भक्ति सम्प्रदाय के प्रभाव के कारण वैदिक काल की यज्ञशाला का स्थान महाकाव्य काल में मन्दिरों ने ले लिया। शुरुआती दौर के मन्दिर लकड़ी और मिट्टी से बनाये जाते थे। गुफा मन्दिर और वो मन्दिर जो पत्थरों से काटकर या ईंटों से बनाये गये, बाद में आये। रामेश्वरम् के शिव मन्दिर की तरह के भारी पत्थरों की संरचनायें, जिनमें वास्तुकला और मूर्तिकला का प्रयोग किया गया, बाद के समय में बने।

रामेश्वरम् मन्दिर 17वीं शताब्दी में बना। टापू के पूर्वी हिस्से में समुद्र के पास बसा यह मन्दिर अपने 1200 विशाल ग्रेनाइट स्तम्भों के लिए प्रसिद्ध है। 54 मीटर लम्बा गोपुरम, 1,220 मीटर के शानदार गलियारे और आकर्षक रूप से नक्काशी किये हुए स्तम्भ मन्दिर को सुशोभित करते हैं और उसकी सत्यता को बढ़ाते हैं। यह भी आश्चर्यचकित करने वाली बात है कि मन्दिर के बाईस पवित्र कुओं में से हर कुएँ के पानी का स्वाद अलग है।

भारत देश के इतने बड़े क्षेत्रफल को देखते हुए यह भी असाधारण है कि मन्दिर बनाने का तरीका हर जगह लगभग वही है।

लेकिन आधारभूत संरचना एक होने के बावजूद विविधताएँ भी दिखती हैं। अलग-अलग जगहों पर मन्दिर वास्तुकला की विभिन्न शैलियों का विकास हुआ है।

मोटे तौर पर इन्हें दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है, पूर्वी भारत शैली और दक्षिण भारत शैली। गोल स्तम्भ पूर्वी भारत शैली के प्रतीक हैं। जबकि दक्षिण भारत शैली में स्तम्भ कटे हुए पिरामिड की तरह होते हैं। जब मैं साल 2001 में प्रमुख स्वामीजी से मिला था तब उन्होंने दिल्ली में बनने वाले अक्षरधाम मन्दिर की संरचना और प्रांगण की चर्चा की थी। स्वामी जी ने कहा था, 'अक्षरधाम भगवान स्वामीनारायण का दैवीय निवास है। यह चिरस्थायी शान्ति और आत्मज्ञान की अविनाशी जगह है।' मन्दिर दिखने में कैसा होगा, वहाँ का माहौल कैसा होगा उसकी सारी जानकारी मुझे विस्तार से बतायी गयी थी। मैं इसकी संरचना में छुपे

सन्देश और इसके लिए की गयी कुशल योजना से चकित था। मैने पूछा, 'मन्दिर में आने वाले हर व्यक्ति को वहाँ से कौन-सा एक सन्देश लेना चाहिए?' साधुओं ने मुझसे विनम्रता से पूछा वो कौन-सा एक प्रमुख सन्देश होना चाहिए। मैं मुस्कुराया, 'हर भारतीय को एक भारतीय होने पर गर्व होना चाहिए।'

कुछ सालों बाद वह चित्र वास्तविकता बन गया, अक्षरधाम ने वास्तव में सभी तीर्थयात्रियों का गौरव और उद्देश्य बढ़ाया और यह सभी भारतीयों को गौरवान्वित कर सकता है। साधुओं ने बताया कि मन्दिर का गुलाबी बलुआ पत्थर भक्ति का प्रतीक है, परमात्मा की भक्ति। और इसका सफेद संगमरमर शुद्धि और शान्ति का प्रतीक है। इसकी आश्चर्यजनक वास्तुकला को गहन शोध करके बनाया गया है और यह अत्यधिक प्रामाणिक और अपनी प्राचीन विरासत को बरकरार रखे है। यह पारम्परिक आकृतियों और डिजाइनों से सुसज्जित है, चित्र और चाँदी के लेस का काम, स्तम्भ और बरामदे, और अविश्वसनीय चौबारे और गुम्बद। लगभग 7000 कुशल कारीगरों और 4000 समर्पित स्वयंसेवकों ने पत्थरों को तराश कर उन पर बारीक नक्काशी की थी।

अक्षरधाम का निर्माण अपने-आप में कला का बड़ा पुनरुद्धार है और यह मानव ऊर्जा और कौशल की एकजुटता का एक अनूठा संगम है।

'मन्दिर क्यों बनाये जाते हैं? इसके पीछे का उद्देश्य क्या है?' मैंने प्रमुख स्वामीजी से पूछा। उन्होंने समझाया, 'मन्दिर अदृश्य का भौतिक रूप है।'

मैंने उनके इस छोटे-से उत्तर पर विचार किया और समझा कि मानव की धारणा कुछ ऐसी है कि जो उन्हें दिखायी देता है, या वो जिससे जुड़े हुए हैं, उन्होंने जिसका अनुभव किया है बस वही सच होगा। अधिकतर लोग लगभग पूरी जिन्दगी अपनी पाँच इन्द्रियों के मायाजाल में ही उलझे रहते हैं। और उन्हें बस वही सच लगता है और उसके परे कुछ भी नहीं सूझता। क्योंकि हमारी इन्द्रियाँ बस वही समझ सकती हैं जो भौतिक है। हमारी धारणा हमारी पाँच इन्द्रियों तक ही सीमित है, क्योंकि अपने जीवन में हम जो कुछ भी जानते हैं वो सब कुछ केवल भौतिक रूप में है : हमारा शरीर, हमारा मन, हमारी भावनाएँ और हमारे जीवन की सभी ऊर्जाएँ भौतिक ही हैं। जब हम ऊपर देखते हैं, ऊपर बड़ा खालीपन लगता है लेकिन वहाँ पर ही हम भौतिकता को पहचानते हैं। हम रात में तारे और चाँद देखते हैं और दिन में सूरज को, यह सभी भौतिक हैं।

एक मन्दिर या मस्जिद या प्रार्थना का कोई भी स्थल वास्तविकता में भौतिकता से परे की दुनिया से जुड़ने का माध्यम है। साधु ब्रह्मविहारी दास ने समझाया, 'एक सच्चा आध्यात्मिक स्थान हमें मानवीय दुनिया को पार करने में, ईश्वर से जोड़ने में और ज्ञान प्राप्त करने में मदद करता है। इसके अलावा, नियमित और सच्चे मन से की गई प्रार्थनाएँ मन को ऊपर उठाती हैं और दैवीय अनुभव करने में मदद कर सकती हैं। एक अन्य अवसर पर साधु ईश्वरचन्द्र दास ने समझाया, 'आत्मा ही हमारी सच्चाई है। अक्षर हमारी आत्मा से भी कहीं ऊपर अस्तित्व में होते हैं। यह हमारे अस्तिव का दैवीय कारण है, सभी रोशनियों का स्रोत और हम सभी के अन्दर के जीवन का सार भी। जब हम खुद को अक्षर के साथ पहचान लेते हैं, तब हम पुरुषोत्तम, सर्वोच्च दैवीयता को भी सीधे पहचान सकते हैं और उनका प्रत्यक्ष अनुभव कर सकते हैं।'

मैं समझ सकता हूँ कि जब हम स्वयं को परमात्मा के सम्मुख समर्पित करते हैं हम उनसे मार्गदर्शन ले सकते हैं : शान्ति, सौहार्द्र और रोशनी को प्रज्ज्वलित करने का मार्गदर्शन ले सकते हैं। हम आसानी से भौतिक दुनिया के आकर्षणों से खुद को दूर रख सकते हैं और खुद को प्रकाश, प्रेम और परमात्मा की शक्ति में सराबोर कर सकते हैं।

इस सम्बन्ध के माध्यम से हम सम्भावनाओं की इस दुनिया में काम कर सकते हैं और अपनी सर्वोच्च राह पर चल सकते हैं। परमात्मा हमें पीछे ले जाने वाले और संकीर्ण पथ पर फँसा रखने वाले सभी भ्रमों और इच्छाओं से मुक्त कर देता है। हमारे पास सीमित, असीमित ऊर्जा और उसके रूपों को पहचानने की क्षमता आ जाती है। यह सम्बन्ध हमें न केवल इन सीमितताओं से बचाता है, बल्कि यह हमें इन ऊर्जाओं को निकालने के लिए शक्ति, बुद्धि और दृष्टि भी देता है।

आपका दिव्य स्वरूप हमेशा आप तक पहुँचने की कोशिश करता है, आपको शक्ति देने के लिए, प्रकाश देने के लिए, प्रेम और बुद्धि देने के लिए, आपके जीवन में उच्च रूपों को, विचारों को, भावनाओं को और स्थितियों को लाने के लिए। आपका दिव्य रूप बुद्धिमान है; इसे सबकुछ पता है और यह आपको हमें एक आसान, बेहतर और ज्यादा खुशहाल जीवन जीने का रास्ता दिखाता है। आपका दिव्य रूप आपके व्यक्तित्व की सीमाओं और आत्म-अवधारणाओं को तोड़ने में सक्षम है और आपको जीने के और होने के नये रास्ते दिखाता है। परमात्मा के साथ

जुड़ना प्रवाह की एक भावना, प्रवाह के साथ बहने और ऊपर की ओर बढ़ने की भावना लाता है।

जब हम किसी विद्वान के वैज्ञानिक ज्ञान और व्यक्तित्व का आंकलन करना चाहते हैं तो हम उनके काम का अध्ययन करते हैं और उनको गहन जाँच की प्रक्रिया से गुजारते हैं। इसी प्रकार, किसी कलाकार की प्रतिभा और क्षमता का आंकलन करने के लिए हमें उसकी रचनाओं का अध्ययन करना होता है। ठीक उसी प्रकार, हम रचयिता के शुद्ध सार के गुण और विशेषताओं को भी समझ सकते हैं, उन गुणों और सुव्यवस्था—और सूक्ष्मता और सटीकता—से जिसमें सभी घटनाएँ व्याप्त हैं। इस तरह, हमारे जानने और समझने की क्षमता के द्वारा निर्धारित सीमा के अन्तर्गत ही हम ईश्वर के ज्ञान, बुद्धिमत्ता, जीवन और शक्ति को समझ सकते हैं। यदि यह ईश्वर के पूरे और व्यापक ज्ञान का प्रश्न होता तो जाहिर है कि हमें स्वीकार कर लेना चाहिए कि इंसान की बुद्धि ज्यादा विस्तृत नहीं है। ईश्वर की विशेषताएँ किसी सीमा के अन्दर नहीं रखी जा सकतीं; इसलिए हम चाहे जो भी तुलना करें या उपमा दें वह मिथ्या ही होगी।

विज्ञान के तहत सोचा-समझा जा सकने वाला और जो कुछ भी प्राकृतिक दायरे में सोचा जा सकता है, वह ईश्वर का बनाया हुआ है। उसकी इच्छा और आज्ञा से हुआ है, जहाँ भी उसका सार प्रकृति का हिस्सा नहीं है वह बनायी हुई चीजों के दायरे में नही आता। इसलिए, इंसान, चाहे तुलना से या फिर सादृश्य से, परमात्मा का सार पूरी तरह नहीं समझ सकता। भक्तों को मार्गदर्शन केवल ईमानदार प्रार्थना से ही मिल सकता है।

जब भी हम किसी मन्दिर, मस्जिद या चर्च में जाते हैं, प्रार्थना या इच्छा के चिन्तन से, चेतना, ज्ञान और सामंजस्य जो जीवों में होने के लिए जरूरी है उनके उदाहरण जीवन की कई घटनाओं में मिलते हैं, इससे अच्छी तरह से साफ हो जाता है कि सबकुछ रचयिता की इच्छा से ही होता है।

इसके अलावा, ये सारे गुण, रचना के दूसरे तत्वों के साथ उसकी व्याख्या करते हैं, दिशा और उद्देश्य हमें अवश्य इस निष्कर्ष पर ले जाते हैं कि यह सभी रचयिता के सच्चे रूप हैं जो सृजन में साफ दिखायी देते हैं। हालाँकि हम रचयिता के गुणों को उनके काम से देख और समझ सकते हैं, जो ईश्वर को समझ लेता है और उसके अस्तित्व को महसूस कर सकता है वह सोच की सबसे बड़ी शक्ति है।

यह एक ऐसा प्रकाश है जो एक अनन्त स्रोत से आया है जो किसी पदार्थ में गिरता है और उसे ज्ञान प्राप्त करने और सच्चाई की तरफ जाने की क्षमता देता है। इसी दैवीय भेंट के अन्दर ही ईश्वर का ज्ञान छुपा हुआ है। पवित्र कुरान इसके बारे में बहुत सुन्दरता से बताती है (सूरा बकरा; आयत 163-64) :

आपका ईश्वर केवल एक ही है। उसके सिवा दूसरा कोई नहीं, जो दयालु और कृपालु है। स्वर्ग और धरती को बनाने में, रात और दिन के प्रत्यावर्तन में, उन जहाजों में जो तैरते हैं, समुद्र जो मनुष्य को फायदा पहुँचाता है, उस पानी में जो स्वर्ग से आता है। धरती से, उसकी मृत्यु के बाद फिर से बनाने के लिए, धरती में फैली हुई जानवरों की अलग-अलग प्रजातियों में, हवा के बहाव में, बादलों में जो ईश्वर के आदेश के अधीन हैं। स्वर्ग और धरती के बीच में इन सभी के बीच में उन आदमियों के लिए हिदायतें छिपी हैं जो अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हैं।

प्रार्थना के स्थान आदमी के लिए भगवान की रचना की बौद्धिक धारणा का ही रूप हैं। जिस प्रकार रचयिता की विशेषताएँ हमारे ब्रह्माण्ड में अमिट हैं उसी प्रकार उनके गुण भी अमिट हैं जो उनकी रचना में प्रार्थना स्थल बनाते हैं। अक्षरधाम मन्दिर की शानदार रचना में मैं मानव बुद्धि की उत्कृष्टता, संगठनात्मक कौशल, शिल्प कौशल और परमात्मा की दृष्टि देख सकता हूँ।

प्रार्थना का स्थान अदृश्य को देखने का एक द्वार भी है। अक्षरधाम शायद धरती में हमारी प्राचीन विरासत और स्वर्ग में परमात्मा के लिए सबसे बेहतरीन और शानदार प्रवेश द्वार हैं।

अक्षरधाम की अति सुन्दर संरचना—जो कि प्रमुख स्वामी जी के समय की स्मारकीय वास्तुकला का एक विशेष रूप है और बीएपीएस के निवेश को दर्शाती है—लगभग एक सहस्राब्दी पुराने मन्दिरों की याद दिलाती है।

बीएपीएस के पहले अस्सी सालों में इसके मन्दिरों की संरचना काफी सरल थी; लेकिन दिल्ली के अक्षरधाम मन्दिर की संरचना, दसवीं से बारहवीं शताब्दी के पश्चिम भारत के दिलवाड़ा, मोधेड़ा और किराड़ू में मरू-गुरजारा मन्दिरों की बारीक नक्काशी की तरह दिखती है। और इन मध्यकालीन मन्दिरों की तरह यह लोहा या स्टील का प्रयोग किये बिना सिर्फ पत्थर से बना है। प्रमुख स्वामीजी ने वो बनाया है जो भारतीय सभ्यता के इतिहास में कुछ ही राजा बना पाये थे।

जब मैंने प्रमुख स्वामीजी से कहा था कि यह अक्षरधाम अप्रतिम है, तो उन्होंने कहा, 'केवल ईश्वर अप्रतिम है है। उत्कृष्टता को पूर्णता के साथ मत मिलाओ। उत्कृष्टता इंसान प्राप्त कर सकता है जबकि पूर्णता ईश्वर का काम है।' उनकी उपस्थिति में, मैंने इंसान में दैवीय शक्तियों को महसूस किया है।

10

प्रकाश के योद्धा

'आशा देख सकती है कि सम्पूर्ण अँधेरे के बावजूद प्रकाश है।'

—आर्चबिशप एमेरिटस डेसमंड टूटू
दक्षिण अफ्रीकी सामाजिक अधिकार कार्यकर्ता

अपने राष्ट्रपति काल के दौरान 18 सितम्बर 2004 को मैंने दक्षिण अफ्रीका के पीटरमैरिट्ज़बर्ग का दौरा किया। 7 जून 1893 को इसी पीटरमैरिट्ज़बर्ग रेलवे स्टेशन पर जोहानिसबर्ग जाने के रास्ते में आधी रात को गोरों ने महात्मा गाँधी को प्रथम श्रेणी के डिब्बे से बाहर फेंक दिया था, यह जानते हुए भी कि उनके पास उचित टिकट था। उस रात मानव इतिहास के एक सार्वकालिक नायक का जन्म हुआ था। वास्तव में इस घटना से एक राजनैतिक कैरियर की शुरुआत हुई, जिसका समापन भारत की आजादी के साथ हुआ।

शुरुआत में भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के रूप में दक्षिण अफ्रीका आये।[17] उन्हें यहाँ बसने और आजीविका के लिए संघर्ष करना पड़ा। उन्हें बँधुआ मज़दूरी की बेहद कठोर शर्तों और गोरे उपनिवेशवादियों के नस्लवाद से जूझना पड़ा, जो इन्हें केवल 'श्रम की इकाई' के रूप में देखते थे। इन्हें श्रम आपूर्ति हेतु दक्षिण अफ्रीका लाया गया था और यही एकमात्र उद्देश्य था।

गिरमिटिया मजदूरों को बमुश्किल ही इंसान माना जाता था और उनके साथ अजनबियों जैसा व्यवहार किया जाता था। उनसे एक निर्धारित समय में खास मात्रा में काम करने और उसके बाद भारत लौट जाने की उम्मीद की जाती थी। अपने पाँच या दस साल की बँधुआ मजदूरी में उन्होंने मार-पिटाई, बदतर जीवन हालात, परिवार के सदस्यों से अलग रहने और सप्ताह के सातों दिन नौ घण्टे काम करने

सहित अविश्वसनीय कठिनाइयों का सामना किया। वास्तव में कुछ लोगों ने अपने मूल स्थान पर लौटने की सोची भी लेकिन अधिकतर वहीं के हो कर रह गये और अन्य व्यवसायों में धीरे-धीरे फैलने से पहले बागवानी और फल एवं सब्जी बेचने का काम करने लगे।

1863 में अबू बकर झावेरी नाम का एक नवयुवक, जो असल में काठियावाड़ प्रायद्वीप के पोरबन्दर का रहने वाला था, मॉरीशस के रास्ते नेटाल पहुँचा। कड़ी मेहनत और व्यवसायिक कौशल के सहारे वह समृद्ध हो गया और उसका व्यापार फैल गया। वह जल्द ही डरबन की खाड़ी में सेलिसबरी द्वीप पर भारतीयों द्वारा ठीक से रखी सूखी मछलियों को अपने खुद के जहाजी बेड़ों से भारत निर्यात करने लगा। इसने 1869 में तथाकथित 'यात्री' भारतीयों—ऐसे लोग जिन्होंने नेटाल के लिए अपने तरीके से भुगतान किया—के प्रथम आगमन के साथ भारतीय आव्रजन की एक नयी लहर पैदा की। ये अधिकतर भारत के पश्चिमी तट-खासतौर पर मुम्बई से थे; ये मुख्य रूप से गुजराती व्यापारी थे जिन्होंने पहले से नेटाल में रह रहे भारतीयों के बीच भाषाओं और रीति-रिवाजों के उदार मिश्रण में अपनी समृद्ध संस्कृति को जोड़ दिया।

ये नये आगन्तुक जल्द ही पूरे देश में फैल गये। जुलूलैंड के दूर-दराज के हिस्सों में कारोबार स्थापित किये और यहाँ तक कि ट्रांसवाल या दक्षिण अफ्रीकी गणराज्य (जेडएआर) में भी चले गये। यहाँ भी वो निखरे क्योंकि तब तक सोने के खनन उद्योग का विस्तार शुरू हो गया था और खासी मात्रा में पैसा देश में प्रवाहित होने लगा था।

आमतौर पर ये अप्रवासी युवा थे, जो अकेले आये थे। जैसे-जैसे वे सफल होते गये और उनके व्यवसाय समृद्ध होने लगे, वे दुकानों के ऊपर या पीछे आवास बनाने लगे। जब ये व्यापार के लिए तैयार हो जाते थे तो वे अपने परिवारों को लाने के लिए भारत लौट जाते थे। अनुकूल आर्थिक और राजनैतिक हालात के कारण पूर्वी अफ्रीका में निर्मित व्यापार सम्भावनाओं ने अधिक-से-अधिक भारतीय अप्रवासियों को अपनी ओर खींचा। उनमें से कई तो बार-बार की महामारी, सूखा और अकाल की वजह से गुजरात में आर्थिक मन्दियों के कारण भी वहाँ छोड़कर यहाँ बसने के लिए मजबूर थे। बाद में पूर्वी अफ्रीका के गुजराती व्यापारियों और

अन्य भारतीय अप्रवासी बूढ़े परिजनों सहित अपनी पत्नियों और बच्चों को भी ले आये।

1885 तक, देश में आ गये भारतीयों की संख्या वोकस्राड (संसद) की चिन्ता का कारण हो चुकी थी। गोरों के इस डर के चलते उस वर्ष अधिनियम सं. 3 पास हो गया, जिसने जेडएआर में जमीन खरीदने के 'कुलियों, अरब और अन्य एशियाइयों' के अधिकार को छीन लिया। इस अधिनियम के तहत सरकार के पास कुछ क्षेत्रों में 'साफ-सफाई के प्रयोजनों हेतु' उनके आवागमन को रोकने का भी अधिकार था।

23 साल के बैरिस्टर के रूप में दक्षिण अफ्रीका पहुँचने के एक साल बाद, गाँधीजी ने खुद को भारतीय समुदाय की सेवा हेतु समर्पित करने का फैसला लिया, वे गोरे शासकों के अन्दर अपने लोगों के प्रति निरन्तर नस्लीय भेदभाव और अपमान से पीड़ित थे।

वह 1894 में नेटाल भारतीय कांग्रेस और 1903 में ट्रांसवाल ब्रिटिश भारतीय संघ की स्थापना में सहायक थे। एक दशक से अधिक तक उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के हितों हेतु प्राधिकरणों के प्रमुख प्रतिनिधिमण्डलों को कई याचिकाएँ एवं ज्ञापन दिये, प्रेस को पत्र लिखे और दक्षिण अफ्रीका के साथ-साथ भारत और ब्रिटेन में जनता की समझ और समर्थन को प्रोत्साहित करने की कोशिश की। उनकी वकालत भी काफी हद तक इस हित को समर्पित हो गयी।

उस समय गाँधी जी को ब्रिटिश सभ्यता एवं ब्रिटेन के राजशाही सिद्धान्तों में विश्वास था। लेकिन 1906 तक यह स्पष्ट हो गया कि अपील और याचिकाएँ अप्रभावी थीं और सरकारी अधिकारियों के लिए वादे तोड़ देना सामान्य बात थी। 1906 के ट्रांसवाल एशियाई अध्यादेश, जिसमें सभी भारतीयों को पंजीकृत करने और पास लेकर चलने की जरूरत थी, थके ऊँट पर लदा अन्तिम तिनका साबित हुआ। गाँधी जी ने इस अन्यायपूर्ण और घातक विधेयक को लागू नहीं होने देने का संकल्प लिया। प्रान्त में भारतीय समुदाय ने इस कानून का विरोध करने के लिए 31 जुलाई 1906 को एक विशाल बैठक में महत्वपूर्ण शपथ ली।

सभी धर्म को मानने वाले लोग—हिन्दू, मुस्लिम, पारसी और ईसाइ—और विभिन्न व्यवसायों के लोग—व्यापारी, फेरीवाले, पेशेवर, कामगार और गिरमिटिया मजदूर—इस सच्चे संघर्ष में एक साथ आये।

गाँधीजी और उनके सहयोगियों को लम्बे समय के कारावास की सज़ा सुनाई गयी। हड़ताल करने वाले नेतृत्वविहीन हो गये। सेना, पुलिस और कर्मचारी कामगारों को विवश करने और हड़तालों को दबाने के अपने प्रयासों में क्रूर हो गये। हड़ताली खनिज मजदूरों को खदान मैदानों को जेल में तब्दील कर वहीं कैद कर दिया गया और क्रूरता से मारा-पीटा गया। चीनी मिलों के गिरमिटिया मजदूरों को पीटा और नौकरी से निकाल दिया गया। कुछ कामगारों की हत्या भी कर दी गयी। लेकिन हड़ताली फिर भी दृढ़ और अनुशासित रहे और अहिंसा से भटके नहीं।

जॉन दुबे, अफ्रीकी नैशनल कांग्रेस के पहले प्रेसिडेंट जनरल ने एक घटना का प्रत्यक्ष विवरण दिया जिसमें फीनिक्स में 500 हड़ताली हिले तक नहीं। कोड़े से मारने, लाठियों और राइफल के बटों से पीटने, उनके बीच से अँधाधुँध घोड़ों को दौड़ाने, उनके नेता को प्रताड़ना और मारने तथा अँधाधुँध गोलियाँ चलाने के बावजूद भी वे डिगे नहीं थे। 20 अप्रैल 1921 को बाद में गाँधी जी ने *यंग इण्डिया* में याद किया कि 'पूरा समुदाय एक बढ़ती लहर की तरह उठ खड़ा हुआ। बिना किसी संगठन, बिना किसी प्रचार के लगभग 40,000 लोग कारावास में डाल दिये गये। लगभग 10,000 लम्बे समय तक बन्दी बने। एक रक्तहीन क्रान्ति आत्म-पीड़ा से निकले जबरदस्त अनुशासन में से प्रस्फुटित हो उठी।'[18]

गाँधीजी भारत जाने के रास्ते में जुलाई 1914 में इंग्लैंड के लिए रवाना हो गये। मोहनदास गाँधी के दक्षिण अफ्रीका में गुजारे इक्कीस साल उनमें बदलाव और जीवन के उनके दर्शन को दृष्टिकोण देने में मददगार साबित हुए। बाद में जब मैं नेल्सन मण्डेला से मिला, उन्होंने मुझसे कहा, 'राष्ट्रपति महोदय, आपने हमें एक वकील भेजा था और हमने आपको एक महात्मा वापस किया।' लेकिन कई ऐसे थे जो वापस नहीं गये। उन्होंने अफ्रीकी देशों को अपना देश बना लिया। जब ये देश आखिरकार अपने औपनिवेशिक शासकों से आजाद हुए, तथापि, नयी सरकारें और यहाँ तक कि कुछ घरेलू लोग भी इन भारतीयों के शत्रु बन गये। नये अफ्रीकी राष्ट्र में एक केनियाई भारतीय द्वारा लिखी कविता मुझे याद आती है। इसने स्वतन्त्रता पश्चात नागरिकता पर नस्लीय बहस के द्वारा उत्पन्न किये गये दवाब को इतने अच्छे तरीके से समाहित किया, जो तीनों पूर्वी अफ्रीकी देशों में नाराजगी को बयाँ करती है :

अतीत खुद पर उबला हुआ है
हम तो अब भाप हैं जिसे उड़ना पड़ेगा।[19]

इसके बावजूद, गिरमिटिया मजदूरों की गरिमा को स्वतन्त्र और मजबूत करने और मुक्त अप्रवासी में गाँधीजी की प्रभावशीलता का, बाद की पीढ़ियों पर दूरगामी प्रभाव रहा। दक्षिण अफ्रीका में गाँधीजी के अभियानों से उभरी पहचान और स्वाभिमान ने बाद में अफ्रीकी महाद्वीप में बीएपीएस के कार्यों के रूप में अभिव्यक्ति पायी और औपनिवेशक शासन के पश्चात के कष्टों के बावजूद टिके रहे अफ्रीकी-भारतीयों को संगठित किया। गाँधीजी के आन्दोलन की तरह बीएपीएस का कार्य ईश्वर-प्रेरित था। गाँधीजी निरन्तर आन्तरिक आवाज के बारे में बात करते थे और जब अवाक राजनीतिज्ञ उनके लिए अनोखे फैसले पर सवाल उठाते थे तो वे इसका सन्दर्भ देते थे। गाँधीजी भगवान के बारे में बताते हैं कि ... उनके लिए ईश्वर एक निजी भगवान हैं जिन्हें ईश्वर की व्यक्तिगत उपस्थिति की जरूरत है। जिनको उनके स्पर्श की जरूरत है वह उनमें सन्निहित है। ईश्वर शुद्धतम तत्व है। वह बस उन लोगों के वास्तविक है जो उस पर विश्वास करते हैं। वह हम में हैं पर हमसे परे भी हैं... अगर हम चाहें तो उन्हें महसूस कर सकते हैं लेकिन खुदी की कैद से निकल कर।[20]

यह मेरा विश्वास है कि व्यक्ति की अन्तरात्मा की आवाज उसी गति से विकसित होती है जिस गति से ईश्वर के साथ उसका सम्बन्ध विकसित होता है। और जैसे ही दोनों विकसित होते हैं—जो हम सभी में मौजूद हैं—किसी योजनाओं पर कार्य हेतु मजबूत और अधिक भरोसेमन्द ताकत बनता जाता है।

गाँधीजी ने अफ्रीकी महाद्वीप में मौन स्वीकृति से परिवर्तन हेतु प्रवासी भारतीयों की चेतना को जगाया। हरमनभाई पटेल उनमें से एक थे जिन्होंने इस परिवर्तन को सन्निहित किया। उनके पिताजी 1896 से 1901 के बीच युगाण्डा रेलवे निर्माण के हेतु पूर्वी अफ्रीका आये। रेलवे का काम 1898 में मोम्बासा से शुरू हुआ। शायद पिछले औपनिवेशिक शासकों पुर्तगालियों के साथ अपने कपटपूर्ण सम्बन्ध के कारण स्थानीय लोगों ने अंग्रेजों के लिए काम करने से मना कर दिया। आगे देश के भीतरी भाग के कम्बा, किकूयू और मसाई जनजाति के लोग अपने आत्मनिर्भर खेतों और पशुओं से तृप्त थे और मजदूरी के लिए काम करना उन्हें गवारा नहीं था। उस क्षेत्र पर कुछ समय के लिए शासन कर चुकी ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका कम्पनी ने इस गतिरोध को 30,000 भारतीय गिरमिटिया मजदूरों को ठेके

पर भेजने के रूप में भुनाया। गुजरात की जीवनजी एण्ड कम्पनी लिमिटेड ने कुशल और अकुशल कामगार उपलब्ध कराये। बरसों बाद जबरेलवे का काम पूरा हो गया, कई गिरमिटिया मजदूरों ने भारत से अपने परिवारों को लाने और उस समय के पूर्वी अफ्रीका संरक्षित राज्य में बसने की ठान ली।

शुरुआती एशियाइयों, जो अधिकतर गुजरात से आये थे, ने नये ब्रिटिश क्षेत्र में मौजूद रोजगार के नये अवसरों को आत्मसात कर लिया। अधिकतर लोग नैरोबी के नये शहर में बस गये जो 1905 तक ब्रिटिश क्षेत्र की राजधानी थी। काले अफ्रीकियों से भिन्न एशियाइयों को नैरोबी में कानूनी रूप से बसने की अनुमति दे दी गयी जो उस समय तेजी से बढ़ रहा गोरों से बसा शहर था। पूर्वी अफ्रीका में कुछ अनिश्चित सामाजिक और आर्थिक हालात के कारण बहुत कम महिलायें ही अफ्रीका में काम कर रहे अपने पुरुषों के साथ गयीं। उन्होंने बूढ़ों और बढ़ते बच्चों की देखभाल के लिए अपने गाँवों में ही रहना बेहतर समझा। उनके पति हर साल अपने परिवारों से मिलने और समुदाय के साथ व्यापारिक सम्बन्ध बनाने साल में कई बार भारत आते और सामान लाते ले जाते। सच में, अफ्रीका के लिए गुजराती आव्रजन के पहले चरण में अरब सागर से होकर आने और जाने वाले लाखों मूल्य के विशुद्ध मसालों के साथ उनका सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार भारत बन गया।

शुरुआती प्रवासियों की इन सामाजिक एवं व्यापारिक यात्राओं ने एक बड़ी अर्थव्यवस्था की नींव रखी। साझा परिवार के जो पुरुष अफ्रीका नहीं गये उन्होंने अपने पुश्तैनी व्यवसायों को अफ्रीकी कमाई से बढ़ाया और अपने व्यापारी सम्बन्धियों के साथ न केवल सुरक्षित बैंकिंग बल्कि भू-सम्पदा के रूप में सहायक होकर सम्पर्क बनाये रखा।

यह आवागमन जो चाहे शादी के लिए या फिर अपने परिवारों से मिलने के लिए या फिर माल लाने ले जाने के जरिये समय के साथ-साथ बढ़ता और मजबूत होता गया। जो पूर्वी अफ्रीकी भारतीय भारत की यात्रा नहीं कर सकते थे वे भी अपनी मातृभूमि से जुड़े रहे। उनके घर का लक्ष्य संयुक्त परिवार संरचना को पुन: तैयार करना हो गया; वे निरन्तर गुजराती बोलते रहे; उन्होंने भारतीय परम्पराओं को संजोए रखा—और वे निष्ठापूर्वक शाकाहारी बने रहे। चैरिटी और प्रतिष्ठानों की स्थापना की गयी। दूसरे शब्दों में उन्होंने अपनी संस्कृति को कभी नहीं छोड़ा और घर हमेशा उनके दिलों में बसा रहा।

यह पूर्वी अफ्रीका में भारतीय समाज की स्थिति थी जब हरमनभाई पटेल ने स्वामीनारायण सम्प्रदाय पर ध्यान दिया था। पूर्वी अफ्रीकी भारतीय सम्पन्न, सक्रिय और उद्यमशील—हालाँकि कुछ हद तक खिन्न—अफ्रीकी महाद्वीप में भारतीय संस्कृति से दूर रह रहे थे। 1928 में, हरमनभाई भारत में शास्त्रीजी महाराज से मिले और भगवान स्वामीनारायण की कुछ मुद्रित तस्वीरों के साथ अफ्रीका लौट गये। ये तस्वीर भारतीय प्रवासियों को आकर्षित करने का केन्द्र बनी, उसके बाद उन्होंने आध्यात्मिक विचारों और भावनाओं के आदान-प्रदान करने के लिए नियमित बैठकें शुरू की, जो सत्संग कहलाता था—धर्मपरायण लोगों का भाईचारा। 1932 में, हरमनभाई दोबारा भारत आये। इन दिनों के दौरान वे शास्त्रीजी महाराज के देवत्व और प्रसन्नचित भावना से इतने आकर्षित हुए कि उन्हें लगा जीविका कमाने की खातिर अफ्रीका लौटने का कोई मतलब नहीं था। वह शास्त्रीजी महाराज के अमूल्य और दिव्य सानिध्य को कैसे छोड़ सकते थे? हरमनभाई शास्त्रीजी के साथ रायपुर गये। वहाँ, उन्होंने प्रकट किया, 'स्वामी जी, मैं अफ्रीका लौटना नहीं चाहता हूँ। वहाँ लोगों का आध्यात्मिकता की ओर झुकाव नहीं है।' लेकिन शास्त्रीजी महाराज ने उन्हें वहाँ सत्संग के प्रसार के लिए पूर्वी अफ्रीका लौटने का निर्देश दिया।

हरमनभाई एक बदले हुए व्यक्ति के रूप में लौटे; अब वह एक मिशन के साथ आये व्यक्ति थे। धीरे-धीरे स्वामीनारायण हिन्दू धर्म के सन्देश ने जड़ जमा ली और पूरे पूर्वी अफ्रीका : केन्या, युगाण्डा और टैंगानिका (अब तंजानिया) में सत्संग फैल गया। जब कुछ गुजराती युगाण्डा पहुँचे तो उन्होंने बहुतायत में खास लाल और काली मिट्टी वाली कृषि योग्य, उपजाऊ भूमि खोजी। तुरन्त खेती के लिए उसकी क्षमता को पहचानते हुए उन्होंने वहाँ उन्नतिशील कृषि उद्यमों की स्थापना की। वे बड़े पैमाने पर कपास, गन्ना, सिसल, चाय और कॉफी उगाने लगे। 1938 तक तीन लाख एकड़ में केवल कपास की खेती होने लगी। युगाण्डा को 'अफ्रीका के कश्मीर' के नाम से जाने जाना लगा।

केन्या और टैंगानिका की तुलना में कृषि से भरपूर फायदे के साथ युगाण्डा में सत्संग तेजी से बढ़ने लगा। 1950 में, युगाण्डा के सबसे बड़े शहर और राजधानी कम्पाला में भक्तों ने शास्त्रीजी महाराज का पच्चासीवाँ जन्मदिन मनाने के लिए एक समारोह का आयोजन किया। इस भव्य सम्मेलन के लिए लोग 600 मील दूर से आये। निर्गुणदास स्वामी जो शास्त्रीजी महाराज की देखरेख में सेवारत एक

वरिष्ठ शिष्य साधु थे, उन्होंने लम्बे पत्रों के पत्राचार के माध्यम से अफ्रीका में भक्तों को आध्यात्मिक पोषण प्रदान किया, ये पत्र कभी-कभी सत्तर से 100 पन्नों के भी हो जाते थे। इन पत्रों ने विश्वास के पन्थ, भक्ति और महिमा को सविस्तार बताया। प्रत्येक शब्द उत्साह और प्रतिबद्धता की एक नयी शक्ति जगाता था। ये पत्र रेलवे कर्मचारियों के माध्यम से, शायद उसी तरह बाँटे गये जैसे शुरुआती ईसाई समुदाय में तत्परता से सन्त पॉल के पत्र बाँटे गये थे। जल्द ही अन्य शहरों और गाँवों में सत्संग केन्द्र खुलने लगे थे। लोगों ने धूमधाम और उत्साह के साथ त्योहार मनाने शुरू किये। उदासी और निराशा आशा और विश्वास में तब्दील हो गयी।[21]

अप्रैल 1955 में योगीजी महाराज पहली बार अफ्रीका आये और उन्होंने भारत के बाहर मोम्बासा में प्रथम बीएपीएस मन्दिर प्रतिष्ठित किया। योगीजी महाराज ने अफ्रीका भर में गाँवों और शहरों की बड़े पैमाने पर यात्रा की और हजारों प्रार्थियों को सत्संग के लिए प्रेरित किया। अक्तूबर 1959 में योगीजी महाराज ने प्रमुख स्वामीजी, सन्त वल्लभ स्वामी और बालमुकुन्द स्वामी के साथ पूर्वी अफ्रीका की अपनी दूसरी यात्रा की। वे टैंगानिका, युगाण्डा, केन्या, मध्य अफ्रीका, रोडेशिया और न्यासालैंड (अब मालावी) घूमे। उस यात्रा के दौरान योगीजी महाराज ने कम्पाला, जिंजा और टोरोरो में मन्दिर प्रतिस्थापित किये। एक दशक के बाद योगीजी फिर अफ्रीका महाराज लौटे और 10 फरवरी 1970 को नैरोबी में एक मन्दिर स्थापित किया। उसके बाद, 23 जनवरी 1971 को अपनी आध्यात्मिक विरासत प्रमुख स्वामीजी को सौंपकर वह मुम्बई में इस नश्वर संसार से चले गये।

दो दिनों बाद 25 जनवरी 1971 को जब राष्ट्रपति मिल्टन ओबोटे राष्ट्रमण्डल शिखर बैठक में भाग लेने देश से बाहर गये हुए थे, ईदी अमीन ने सैन्य तख्तापलट की अगुवाई कर युगाण्डा में सत्ता हथिया ली। उसने तुरन्त खुद को युगाण्डा का राष्ट्रपति घोषित कर दिया। अगस्त 1972 को अमीन ने 'आर्थिक युद्ध' घोषित कर दिया। फरमान के ज़रिए उसने कुछ 80,000 एशियाई लोगों को निर्वासित कर दिया—जो भारतीय थे उन्हें पूरी तरह से निकाला—और उनकी सम्पत्तियों और व्यवसायों पर कब्जा कर लिया।

कुछ 30,000 लोग जिनके पास ब्रिटिश पासपोर्ट थे, उन्हें इंगलैंड किंगडम भेज दिया गया। अन्यों ने ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, भारत, केन्या, पाकिस्तान, स्वीडन, तंजानिया और अमेरिका में शरण ली। अमीन ने बड़े पैमाने पर कब्जाए उद्यमों और

कम्पाला, जिंजा और टोरोरो में छह अच्छी तरह से स्थापित बीएपीएस मन्दिरों को अपने समर्थकों में बाँट दिया।

देश की आर्थिक भलाई में युगाण्डा के भारतीयों का मूल्य उनकी अनुपस्थिति से जल्द ही प्रकट होने लगा। कुप्रबन्धित व्यवसाय बन्द हो गये और प्रशासन एवं रखरखाव की कमी से बुनियादी ढाँचा ढह गया। इसके अलावा, देश ने पेशेवरों का एक महत्वपूर्ण वर्ग खो दिया : युगाण्डा के डॉक्टरों, शिक्षकों, वकीलों और लेखपालों में भारतीयों का महत्वपूर्ण हिस्सा था। आवश्यक वस्तुओं की कमी और 1,000 प्रतिशत मुद्रास्फीति होने से पहले से ही दुर्बल अर्थव्यवस्था बिखर गयी। अमीन के नस्लवादी शुद्धीकरण का शुद्ध परिणाम आर्थिक और सामाजिक अवनति के रूप में सामने लाया। अन्तत: युगाण्डा हिंसक अराजकता की ओर बढ़ने लगा जिसके फलस्वरूप आठ साल से अधिक की अवधि में करीब 5,00,000 लोगों की जानें गयीं। युगाण्डा में अमीन का शासन बर्बरता का पर्याय बन गया। शायद युगाण्डा से निवार्सित भारतीयों के लिए सान्त्वना यही थी कि वे सभी इस रक्तपात से बच गये थे।

हम केवल उन भारतीयों की पीड़ा की कल्पना ही कर सकते हैं, जिनका परिवार कई पीढ़ियों से युगाण्डा में रहता था। अपनी अपनायी मातृभूमि से उखाड़ फेंके और निकाल दिये कई लोगों ने ईश्वर में अपने विश्वास के भरोसे एक छोटे बक्से में सिमट गयी सम्पत्ति के साथ शरणार्थी शयनकक्षों में अपनी नयी जिन्दगी की शुरुआत की। उनके हौसले और ईश्वर में विश्वास, उनके भाग्य में निर्णायक कारक साबित हुए, क्योंकि उन्होंने विदेशी जमीनों में अपनी नई जिन्दगी का सफलतापूर्वक निर्माण किया। सांस्कृतिक सम्बन्ध उन्हें अपनी मातृभूमि की पुरानी परम्पराओं से जोड़े हुए थे, जिन्हें उन्होंने अपने नये देशों में भी बनाये रखा था और अब निर्वासन में यह उन्हें प्रेरित कर रहे थे।

उनकी धार्मिक संस्कृति की ताकत और युगाण्डा के निर्वासित भारतीयों के विपरीत परिस्थितियों का सामना करने की दृढ़ता ने वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी और युगाण्डा पुनर्वास बोर्ड के अध्यक्ष सर चार्ल्स कनिंघम को काफी प्रभावित किया था। *लाइफ एण्ड फिलोसोफी ऑफ श्री स्वामीनारायण*[23] की प्रस्तावना में सर चार्ल्स ने 1971 में शरणार्थी के रूप में इंग्लैंड आये हजारों भारतीयों के पुनर्वास में मुख्य कारक ईश्वर में विश्वास को माना था।

सांस्कृतिक एवं धार्मिक निरन्तरता से शक्ति खींचने की यह क्षमता आधुनिक जीवन के अप्रत्याशित परीक्षणों का सामना करने में मदद कर सकती है। जब लगभग तीस हजार लोग अचानक युगाण्डा से निर्वासित हो गये और ग्रेट ब्रिटेन में एक नयी जिन्दगी शुरू करने के लिए कंगाल होकर आये तो उनकी शान्ति, गरिमा, कठिनाई को स्वीकार करने की उनकी तत्परता ने हमें काफी प्रभावित किया। इनमें से कई तो नामी सफल और समृद्ध थे, उनकी शून्य से शुरुआत करने की अडिग चाह से यह स्पष्ट था कि वे गहरी धार्मिक आस्था के कारण सँभल पाये थे, जिसने उन्हें विपरीत परिस्थितियों को स्वीकार करने और उससे ऊपर उठने में सक्षम बनाया था। उन्होंने निरन्तर इस आस्था को बनाये रखा, वहाँ पहले से रह रहे उनके धर्म के लोगों ने दूरदराज के पुनर्वास केन्द्रों और देश भर में वे जहाँ गये उन कई क्षेत्रों में उनकी सहायता की। कई—शायद अधिकतर—जो युगाण्डा से यहाँ आये थे वे हिन्दू थे, जो उन्नीसवीं सदी में भगवान स्वामीनारायण द्वारा स्थापित धर्म की शाखा से सम्बन्ध रखते थे, जिनकी शिक्षा और उपदेश उनकी जिन्दगियों को अब भी संचालित कर रहे थे।

जैसा कि सर चार्ल्स कनिंघम ने बताया कि इन शरणार्थियों का एक महत्वपूर्ण भाग समर्पित बीएपीएस भक्तों का था। उन्होंने धीरे-धीरे अपने जीवन को पुनर्निर्मित किया और अन्त में 1995 में पश्चिमी गोलार्द्ध में प्रथम पारम्परिक पत्थर के मन्दिर के निर्माण में सहायता करने के द्वारा अपने विश्वास को मूर्त रूप दिया : नेसडेन, लन्दन में विश्व प्रसिद्ध स्वामीनारायण मन्दिर के रूप में। इस मन्दिर ने युगाण्डा के भारतीयों की त्रासदी के सुखद अन्त की मेजबानी की। अक्तूबर 1997 में भाग्य बदलने या आस्था के आनन्द के साथ युगाण्डा सरकार के द्वारा उनकी बेदखली के पच्चीस साल बाद, युगाण्डा के राष्ट्रपति मुसेवेनी ने व्यक्तिगत तौर पर प्रमुख स्वामीजी को युगाण्डा में चार बीएपीएस मन्दिर लौटाये। उन्होंने यह गहरा प्रतीकात्मक और सुलह का काम लन्दन में स्वामीनारायण मन्दिर में 5,000 से अधिक भारतीयों की मौजूदगी में एक सार्वजनिक समारोह में किया।

बाद में, राष्ट्रपति मुसेवेनी ने युगाण्डा के भारतीयों को उनकी सुरक्षा एवं बचाव के आश्वासन के साथ दोबारा बसने के लिए आमन्त्रित किया। बाद में उन्होंने सम्पत्तियों और व्यवसायों को लौटाने और क्षतिपूर्ति का वादा भी किया। यह बीएपीएस सदस्यों और जिनको एक पीढ़ी पहले युगाण्डा से निर्वासित कर

दिया गया था उनके लिए जैसे गहरे घाव भरने की घटना थी। जिम्मेदारी ली गयी और सुलह हासिल की गयी। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि यह क्षमा पर टिकी और वास्तव में क्षमा के कारण सम्भव एक घटना थी। जिसने 'अन्त भले का भला' की उक्ति को सत्यापित किया।

अतीत को भूलकर और भविष्य का सामना करते हुए 2010 में बीएपीएस ने युगाण्डा में सत्संग के पचास वर्ष को आनन्द से मनाया। मैंने नेल्सन मण्डेला से सीखा कि साहस, भय की अनुपस्थिति नहीं बल्कि उस पर जीत होता है। साहसी व्यक्ति वह नहीं होता जो डर महसूस नहीं करता बल्कि वह होता है जो डर से लड़ता है। हालाँकि, प्रमुख स्वामीजी ने मुझे कुछ और भी सिखाया : विश्वास के माध्यम से क्षमा कर डर पर जीत पाओ। रोशनी दो तरीके से चमकती है : खुद मोमबत्ती के द्वारा या उस दर्पण के द्वारा जो उसे प्रतिबिम्बित करता है। प्रमुख स्वामीजी दिव्यत्ता के चिराग और मानवता का दर्पण हैं।

11

आत्माओं का चिकित्सक

'खुशियाँ भौतिक साधनों और स्वर्ण में नहीं, आत्माओं में बसती हैं।'

—डेमोक्रीटस

सुकरात के पूर्व के यूनानी दार्शनिक

2007 की जुलाई। प्रेस ने बहुत उदारता से लिखा कि मैंने खुद को सबसे अधिक लोकप्रिय, मुखर, तटस्थ और दूरदर्शी राष्ट्रपति साबित किया है। कुछ ने तो मुझे मेरे दर्शन की वजह से भारत की भावी पीढ़ियों के लिए एक आदर्श भी बताया। मैं ऐसी सम्मानजनक और उदार बातें सुनकर बेहद विनम्र महसूस कर रहा था। कुछ पलों के लिए, मुझे अपने अभिभावक बहुत याद आये। मुझे लगा कि इस वाह-वाही को सुनकर और पढ़कर उन्हें बहुत गौरव महसूस होता। मेरे पिता ने मुझसे बहुत सपाट तरीके से कहा था, 'अब्दुल, अगर तुम अपने चारों तरफ अच्छे और धार्मिक लोग रखोगे, तभी तुम आगे बढ़ पाओगे। लेकिन अगर तुम साधारण लोगों के बीच रहोगे, तो वे लोग तुम्हें सामान्यता के निराशावाद में खींच ले जायेंगे। जब तक तुम इसकी इजाज़त दोगे तब तक वे तुम्हें वहीं बनाये रखेंगे।' अपने पिता की कही बातों की प्रतिध्वनि हमेशा सुनते हुए मैंने इसकी कभी इजाज़त नहीं दी।

अपने पूरे कार्यकाल में, मेरा पूरा ध्यान साल 2020 तक भारत को एक विकसित देश बनाने का था। मैंने कभी-कभार राजनीति के गिरते स्तर पर अपनी चिन्ता जाहिर की। मैं हमेशा एक मजबूत और आत्मनिर्भर देश के पक्ष में रहा। मैं गरीबी के खिलाफ बोला। मैंने खेती और अर्थव्यवस्था में गुणवत्ता लाने और स्वदेशी हथियारों की वकालत की। मैंने इस दिशा में महत्वपूर्ण कोशिशें भी कीं। मुझे हमेशा लगा कि देश का भविष्य बच्चे ही हैं, और मैंने हमेशा उनके खिलाफ

बढ़ती जा रही ज्यादतियों पर अपनी चिन्ता जाहिर की। मैंने भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, राजनीतिक झाँसापट्टी और साम्प्रदायिकता का विरोध किया।

3 जुलाई 2007 को भारतीय संसद ने केन्द्रीय कक्ष में मेरे लिए एक विदाई समारोह आयोजित किया। इस घटना से पहले, मेरे मन में विचार था : 'वहाँ मैं क्या कहूँगा?' हमारा देश कामयाब लोगों से भरा हुआ है—इनमें नेता भी हैं जो उस आयोजन में बैठे होंगे—जिन्होंने दूसरों को फायदा पहुँचाने के मुकाबले अपने लिए बहुत कुछ हासिल किया है। मुझे लगा कि मुझे सिर्फ इन लोगों से ही बात नहीं करनी है बल्कि इस पीढ़ी और अगली पीढ़ी के भारतियों के लिए और उनकी तरफ से भी बोलना चाहिए। इसके लिए मुझे राष्ट्र के भविष्य की जरूरतों को अपने भाषण में परिभाषित करना होगा। और एक राष्ट्र को न तो उसकी जीडीपी से और न ही उसके सामाजिक कल्याण के कार्यक्रमों के जरिए परिभाषित किया जा सकता है। बल्कि, एक राष्ट्र उन लोगों से परिभाषित होता है जो एक मूल्य और एक उद्देश्य के लिए एकजुट हुए हैं, और जो वैसे समाज के लिए अपने दृष्टिकोण को लेकर प्रतिबद्ध हैं जैसा वह भावी पीढ़ियों के लिए बनाना चाहते हैं।

भारत क्या हो सकता है? मैंने इस बारे में सोचते हुए बहुत समय बिताया है। आखिरकार, मैंने 2020 के भारत के लिए एक अलग ही प्रोफाइल को संहिताबद्ध किया और अपने विदाई समारोह में इसे पेश किया। मैंने सांसदों से अपील की कि वे लोग भारत निर्माण के लिए काम करें।

1. एक राष्ट्र जहाँ ग्रामीण और शहरी भारत के बीच विभाजन बहुत कम हो।
2. एक राष्ट्र जहाँ ऊर्जा और स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित पानी की बराबरी से उपलब्धता हो।
3. एक राष्ट्र जहाँ खेती, उद्योग और सेवा क्षेत्र एक साथ मिलकर काम करें।
4. एक राष्ट्र जहाँ मूल्य आधारित शिक्षा हो और कोई मेधावी छात्र सामाजिक या आर्थिक गैर-बराबरी की वजह से इससे वंचित न रहे।
5. एक राष्ट्र जो किसी प्रतिभाशाली विद्वान, वैज्ञानिक या आविष्कारक के लिए सबसे बेहतर जगह हो।

6. एक राष्ट्र जहाँ दुनिया की सबसे बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध हों।
7. एक राष्ट्र जहाँ प्रशासन उत्तरदायी, पारदर्शी और भ्रष्टाचारमुक्त हो।
8. एक राष्ट्र जहाँ गरीबी का पूरी तरह उन्मूलन हो जाये, निरक्षरता खत्म हो, महिलाओं और बच्चों के खिलाफ अपराध न हों और समाज में किसी को अकेलापन महसूस न हो।
9. एक राष्ट्र जो समृद्ध हो, सेहतमन्द हो, सुरक्षित हो, जहाँ आतंकवाद न हो, शान्तिपूर्ण और सुखी हो, और जो सतत विकास की राह पर लगातार चले।
10. एक राष्ट्र जो दुनिया में रहने के लिए सर्वश्रेष्ठ हो और जो संसद, राज्य विधानसभाओं और राज्य की दूसरी संस्थाओं में रचनात्मक और प्रभावी नेतृत्व के ज़रिए गौरवान्वित हो।

मैं सांसदों के साथ बहुत भावना के साथ बोला, 'हालाँकि हमने अपने आर्थिक प्रदर्शन में खास बढोत्तरी दर्ज की है, लेकिन पूर्ण विकसित राष्ट्र का दर्जा हासिल करने के लिए मानव विकास और प्रशासन के संकेतकों में खास वृद्धि करने की जरूरत है। दुनिया भर के भावी राजनीतिक नेतृत्व को वृद्धि, विकास, पर्यावरणीय सुधार और संसाधनों की सततता बनाये रखने की चुनौती स्वीकार करते हुए आगे आना होगा। सम्माननीय सदस्यों, आपको इक्कीसवीं सदी की भावी पीढ़ी का नेतृत्व तैयार करने, देश के युवाओं में नैतिक बल बढ़ाने में मिशनरी उत्साह दिखाना होगा और अपने लोगों में सुरक्षा और समृद्धि बढ़ाने में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी।

'हम लोग अतीत की कामयाबियों पर सन्तुष्ट होकर नहीं बैठ सकते और हमें इक्कीसवीं सदी की तकनीकी, औद्योगिक, कृषि, व्यापार प्रशासन के तन्त्र, और नेतृत्व के तरीके की चुनौतियों का सामना करना होगा। राष्ट्रीय नेतृत्व को चाहिए कि वह हमारे लोगों में आत्मविश्वास का संचार करे : कि "हम कर सकते हैं"। एक विकसित भारत के विज़न 2020 में एक चुनौती यह भी है कि हम प्रशासन और विधायी कार्यों के हर क्षेत्र में नवाचारों के लिए अवसर मुहैया करा सकें। जब हम इक्कीसवीं सदी के लिए प्रशासन और विधायी प्रक्रिया के तन्त्र की समीक्षा करेंगे, तो इसके लिए तकनीकी क्रान्ति के फायदों और निहितार्थों, राष्ट्रीय और वैश्विक

कनेक्टिविटी, वैश्वीकरण और अन्तरराष्ट्रीय सहयोग और प्रतियोगिता को भी ध्यान में रखना होगा।'

भारत 15 अगस्त 2007 को अपनी आजादी के साठ साल मनायेगा। *पॉडयूनिवर्सल*, भारत के पहले पॉड मैगजीन ने मेरे विचारों को राष्ट्र के लिए मुख्य दस चुनौतियों में शामिल किया कि नौजवान किस तरह इन चुनौतियों को स्वीकार करते हैं ताकि देश को 2020 तक विकसित बनाया जा सके। इसरो और डीआरडीओ जैसे बड़े संस्थानों में युवा वैज्ञानिकों के साथ काम करने के अपने तजुर्बे से मैं जानता था कि बेशकीमती नौजवान दिल को बहुत ज्यादा दिनों तक नहीं खींचा जा सकता। युवाओं में चरित्रों की शुद्धता और कमजोरी होती है, जिसे एक दफा छू दिया जाये या अशुद्ध कर दिया जाये तो उसे कभी भी वापस नहीं लाया जा सकता। यह किसी तुषारापात से बनी आकृतियों के नाजुक किनारे हैं, जो अगर टूट जायें तो ऐसी नक्काशी दोबारा मुमकिन नहीं होती। इंग्लैंड के दो बार प्रधानमन्त्री रहे बेंजामिन डिजरायली के शब्द, 'राष्ट्र के युवा भावी पीढ़ियों के ट्रस्टी हैं,' यही मेरे दिमाग में आये। इन विचारों के साथ, मैंने देश के युवाओं के लिए सात बिन्दुओं वाला एक संकल्प तैयार किया :

1. मुझे महसूस हुआ है कि मुझे जीवन में एक लक्ष्य तय करना चाहिए : ज्ञान हासिल करने का, उपलब्धि हासिल करने के लिए कड़ी मेहनत करने का, और जब समस्याएँ आयेंगी मैं उनसे उबर जाऊँगा।
2. मैं साहस के साथ काम करूँगा ताकि अपने हर काम में कामयाबी हासिल कर सकूँ और दूसरों की कामयाबी का भी मैं लुत्फ लूँगा।
3. मैं अपने आप को, अपने घर को, और पड़ोस को हमेशा साफ-सुथरा रखूँगा।
4. मुझे महसूस हुआ है कि हृदय की धार्मिकता चरित्र की खूबसूरती को बढ़ाती है; चरित्र की खूबसूरती घर में समरसता लाती है; घर में समरसता देश में समन्वयता होती है, जिससे दुनिया में शान्ति होती है।
5. मैं अपनी जिन्दगी ईमारदारी से बिताऊँगा, हर तरह के भ्रष्टाचार से मुक्त रहूँगा और अपने परिवार समेत मैं दूसरों के लिए एक मिसाल कायम करूँगा, ताकि लोग जीवन मे सही राह अपना सकें।

6. मैं देश में ज्ञान का दिया जलाऊँगा और यह सुनिश्चित करूँगा कि यह लगातार जलता रहे।
7. मैं संकल्प करता हूँ कि मैं जो भी काम करूँगा, अगर मैं ठीक से काम कर पाया, तो मैं विकसित भारत के विज़न 2020 में अपना योगदान करूँगा।

15 अक्तूबर 2007 को मेरे अठहत्तरवें जन्मदिन पर मैंने रामेश्वरम में अपने बड़े भाई को कॉल किया और उनसे कुछ पुरानी यादें ताजा कीं। शाम को मेरी दिवंगत बहन ज़ोहरा का पोता ग़ुलाम मेरे पास आया, और अचानक मुझे लगा कि हम सब समकालीन हैं और पृथ्वी नाम के अन्तरिक्षयान में सफर कर रहे हैं। मैंने यह तुलना उसको बतायी, और उसने मुझे एक बहुत असुविधाजनक उत्तर दिया। उसने मेरे लिए *बरीड चाइल्ड्स*[24] नाम के नाटक का कुछ हिस्सा पढ़ा, '... आप देख सकते हैं कि आपकी ही आँखों के आगे चीजें बिगड़ती जा रही हैं। हर चीज़ ढलान पर लुढ़कती जा रही है। युवाओं के बारे में सोचना भी बेवकूफाना है।'

इस निराशा से युवाओं को उबरने में मदद कौन करेगा? यह कैसे होगा? यही सब विचार मेरे मन में घुमड़ रहे थे, जब मैं यूके और अमेरिका जाने के लिए विमान में बैठ रहा था।

21 अक्तूबर 2007 को मैं नेस्डेन, लन्दन के स्वामीनारायण मन्दिर में गया। वैदिक मंत्रों का जाप करते बच्चों के बीच साधु योगविवेकदास बड़े प्रेम से मेरे स्वागत के लिए खड़े थे। मन्दिर की भव्य वास्तुकला ने मुझे प्रेरणा से भर दिया। किसी विदेशी धरती पर कैसे हो पाया यह? मैंने साधु योगविवेकदास से पूछा। उन्होंने मुझे एक बहुत दिलचस्प किस्सा सुनाया, जो मैं आपको जरूर बताना चाहूँगा।

लन्दन में स्वामीनारायण हिन्दू मिशन की जड़ें 1950 के दशक से हैं। लन्दन उस वक्त द्वितीय विश्वयुद्ध के झटके से उबर ही रहा था। भारतीय लोग डरे हुए थे और इधर-उधर बिखरे हुए थे। शास्त्रीजी महाराज, महेन्द्रभाई पटेल (जिन्हें आमतौर पर बैरिस्टर के नाम से पुकारा जाता था) पुरुषोत्तम भाई पटेल और अन्य भक्तों ने सत्संग के लिए आपस में लन्दन में मिलना शुरू किया। बाद में, भक्तों ने पूर्वी लन्दन के इस्लिंगट्न में सैंट जोसफ बैपिटिस्ट चर्च खरीद लिया, और 14 जून 1970 को योगीजी महाराज ने इसको बीएपीएस मन्दिर के रूप में पवित्र किया। रोज-ब-रोज बढ़ते सत्संग के लिए प्रमुख स्वामीजी ने नेस्डेन में 7 जुलाई 1991 को एक नये और

भव्य शिखरबद्ध मन्दिर की आधारशिला रखी। इसका काम 1992 के नवम्बर में शुरू हुआ और तीन साल की बेहद संक्षिप्त अवधि में 20 अगस्त 1995 को प्रमुख स्वामीजी ने इस मन्दिर का उद्घाटन किया।

इस बीच, ब्रेंटफील्ड रोड के उस पार स्लेडब्रुक स्कूल को भी 1992 की शुरुआत में खरीद लिया गया और इसे नये रूप में *स्वामीनारायण इण्डिपेंडेंट डे स्कूल* के नाम से दोबारा शुरू किया गया। और इस तरह चार दशक पहले मुट्ठी भर भक्तों के साथ शुरू हुआ बीएपीएस सत्संग अब बढ़कर एक बेहद विशाल सामाजिक-आध्यात्मिक संगठन में बदल चुका था जिसमें युवाओं और बच्चों के फोरम और महिलाओं का विंग है। यह एक तेजस्वी, दयालु, आध्यात्मिक और समाजसेवी आन्दोलन बन गया है। योगीजी महाराज और प्रमुख स्वामीजी की कोशिशों और आशीर्वाद से एक सपना वास्तविकता में तब्दील हो गया।

मुझे बताया गया कि 14 सितम्बर 1994 को, जब *वर्ल्डवाइड टेलिविज़न चैनल* के रिपोर्टर ने प्रमुख स्वामीजी से पूछा कि वह लन्दन में एक मन्दिर क्यों बनवा रहे हैं, स्वामीजी ने उत्तर दिया, 'मन्दिर भक्तों को भावनाएँ और समर्पण प्रदान करता है। उनकी इच्छा ऐसे पूजा स्थलों की रहती है। यह मन्दिर उनकी आध्यात्मिक प्यास बुझायेगा और उन्हें प्रेरणा देगा कि वह शुद्ध समर्पण की ऊँचाईयों तक पहुँचें।'

वह जिज्ञासु रिपोर्टर सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने पूछा, 'मन्दिर का आध्यात्मिक महत्व क्या है?' प्रमुख स्वामीजी ने विवेचना की, 'हर धर्म पूजा के स्थलों के महत्व में विश्वास करता है। अगर कोई आदमी अपने हृदय में आस्था लेकर मन्दिर जाता है, तो वह एक शान्तिपूर्ण मनो-मस्तिष्क का अनुभव कर सकता है। शास्त्रों में कहा गया है कि ईश्वर के मार्ग पर चलकर, साधुओं के पवित्र वचन सुनने से और प्रार्थना से दिमागी शान्ति हासिल की जा सकती है। हर धर्म अपनी परम्पराओं के हिसाब से अपने मन्दिर और पूजा के स्मारक स्थल बनाते हैं। पूजा घर लोगों को प्रेरणा देते हैं।'

वास्तव में, यह ईश्वर की आराधना के ऐसे स्थान हैं जो ईश्वर में आस्था को मजबूती प्रदान करते हैं, हमारे समाज को मजबूत बनाते हैं और हमें एक दूसरे पर विश्वास करना और विश्वसनीय बनना सिखाते हैं। स्कूलों में दिमाग को शिक्षित किया जा सकता है, लेकिन आत्माओं को शिक्षित कौन करेगा? अस्पताल टूटी हुई हड्डी को जोड़ सकते हैं, लेकिन टूटी उम्मीदों को कौन जोड़ेगा? सिनेमा, मनोरंजन

के आर्केड, डिस्कोथे इन्द्रियों को उत्तेजित कर सकते हैं, लेकिन मानसिक शान्ति के लिए इंसान कहाँ जायेगा? प्रमुख स्वामीजी आगे विस्तारित करते हैं, 'पूजास्थल आत्मा की शुद्धि करते हैं और उसे रोगी होने से बचाते हैं। कुछ बीमारियाँ दिखती नहीं हैं, सिर्फ महसूस की जा सकती हैं। हमारे शास्त्रों ने इसकी दवा पूजास्थलों को बताया है। लेकिन यह सब कहने का मतलब यह नहीं है कि स्कूलों और अस्पतालों की जरूरत नहीं है। बिलकुल है। लेकिन उतनी ही जरूरत पूजास्थलों की भी है। मनुष्य के पास देह के साथ आत्मा भी है। किसी की उपेक्षा नहीं की जा सकती।'

वास्तव में, नीस्डेन में स्वामीनारायण मन्दिर पृथ्वी और स्वर्ग का एक अद्भुत संयोग है। यह सिर्फ खूबसूरत या आध्यात्मिक ही नहीं है, बल्कि सामाजिक और पर्यावरण-हितैषी भी है। इसे इसके पर्यावरण-हितैषी डिजाइन के लिए 1995 में ब्रेंट *ग्रीन लीफ* अवॉर्ड प्रदान किया गया और 1996 में सर्वाधिक उद्यमी बिल्डिंग का पुरस्कार भी मिला। यह पुरस्कार रॉयल फाइन आर्ट कमिशन प्रदान करता है। इसे बनाने में यूके के सबसे बड़े अल्युमिनियम केन रिसाइक्लिंग प्रोजेक्ट को शामिल किया गया था। हजारों प्रेरित बच्चे, किशोर, युवा और बालिगों ने एक साल के भीतर सत्तर लाख अल्युमिनियम केन इकट्ठे कर लिये! प्रमुख स्वामीजी ने परिवर्तन के विज़न के साथ नयी पीढ़ी को प्रेरित और शामिल किया था।

अगले दिन जब मैं अमेरिका के लिए अपनी फ्लाइट में बैठ रहा था, तो मेरे पास मेरे सवालों के जवाब आ चुके थे। युवाओं को एक विज़न की ज़रूरत होती है। युवाओं को विश्वसनीय मार्गदर्शन की जरूरत होती है। सबसे बड़ी बात, युवाओं को एक मिसाल की जरूरत होती है। महापुरुष यह तीनों उपलब्ध कराते हैं। एक समृद्ध और शान्तिपूर्ण मानवता का विजन, बीएपीएस जैसी महान संस्थाओं के आदर्शों के मार्गदर्शन और त्रुटिहीन सेवा की मिसालें आत्माओं को निराशा और हताशा के बीच, चाहे तूफानी सागर कितना भी गहरा और अँधेरा क्यों न हो, प्रकाशस्तम्भ का काम करती हैं। जब मैंने लियो तॉल्सतॉय की किताब द *किंगडम ऑफ गॉड* खोली, जिसे मैं अपने केबिन बैगेज के रूप में ट्रांस अटलांटिक फ्लाइट में लम्बे सफर को काटने के लिए ले जा रहा था, मेरे सामने एक बेहतरीन कविता नमूदार हुई :

जहाँ है आस्था, वहाँ प्रेम है
जहाँ है प्रेम, वहाँ शान्ति है

जहाँ है शान्ति, वहाँ ईश्वर हैं
जहाँ भी हैं ईश्वर, वहाँ कोई ज़रूरत बाकी नहीं है![25]

मैं ईश्वर में भरोसा करता हूँ। और मुझे भरोसा है कि मानवता का असली कल्याण ईश्वर की इच्छा से ही हो सकता है। आगे, टॉल्सटॉय ने *वेन मैन लिव ब्राई एण्ड अदर टेल्स* में लिखा है, 'एक मनुष्य अपने पिता या माँ के बिना जीवित रह सकता है, लेकिन ईश्वर के बिना कोई जीवित नहीं रह सकता।'[26]

12

एक दुनिया : असमान्तर

यदि एक रगड़ से आप परेशान होने लगे, तो आपकी पॉलिश कैसे हो पायेगी?

—रूमी

तेरहवीं सदी के फारसी कवि

फरवरी 2008 में मैं इज़रायल में एयरोस्पेस विज्ञान पर 48वें वार्षिक सम्मेलन में मुख्य भाषण देने गया था। मैंने इस अवसर का उपयोग विश्व अन्तरिक्ष विज़न 2050 पेश करने और इसे प्राप्त करने के लिए विश्व ज्ञान मंच बनाने की जरूरत पर प्रकाश डालने के लिए किया। राष्ट्रपति शिमॉन पैरेज ने मेरे लिए डिनर का आयोजन किया था। 28 फरवरी को मैं दुनिया के सबसे पुराने शहर येरूशलम गया। यह तीन प्रमुख इब्राहिमी धर्मों—यहूदी, ईसाई और इस्लाम के लिए पवित्र माना जाता है। लेकिन एक शान्तिपूर्ण जगह होने के बजाय इस शहर ने सबसे बुरे मानव संघर्ष और हिंसाएँ झेली हैं। इसके लम्बे इतिहास के दौरान येरूशलम दो बार तबाह हुआ, 23 बार घेरा गया, 52 बार इस पर हमला हुआ और 44 बार इसे कब्जाया और आज़ाद कराया गया।

मैंने दीवारों के बीच बसे इस शहर का पैदल भ्रमण किया जिसे तुर्क साम्राज्य के 10वें और सबसे ज्यादा समय तक राज करने वाले महान राजा सुलेमान ने 15वीं शताब्दी में बनवाया था।

19वीं शताब्दी की शुरुआत से ही इस शहर को चार भागों में विभाजित कर दिया गया है : आर्मेनियाई, ईसाई, यहूदी और मुस्लिम हिस्से।

मैं पवित्र क़ब्र के चर्च के मुख्य द्वार के सामने बनी खलीफा उमर की मस्जिद में गया। ईसाई-अरब परम्परा के अनुसार जब खलीफा उमर को ईसाइयों के सबसे पवित्र स्थल, पवित्र कब्र पर प्रार्थना करने के लिए लाया गया तो उन्होंने ऐसा करने से मना कर दिया ताकि इसकी बाबत आगे चल कर मुस्लिम चर्च को मस्जिद में तब्दील करने के लिए न कहने लगें।

उन्होंने चर्च के बाहर खुले स्थान पर प्रार्थना की जहाँ बाद में मस्जिद का निर्माण हुआ। इसके बाद मैं मस्जिद अल अक्सा गया जहाँ पैगम्बर मुहम्मद ने, शान्ति की प्रार्थना की। मैंने मस्जिद में नमाज़ अदा की और कुछ देर ध्यान में बैठा। वहाँ बिना किसी कारण के मेरी आँखों में आँसू आ गये। मुझे लगा कि जैसे मेरे माता-पिता मेरे पास ही हों। मुझे पिताजी के द्वारा सुनाई गयी एक कहानी याद आयी। खलीफा उमर के समय में अबु उबयदाह के नेतृत्व में मुस्लिम फौज ने यारमुक की लड़ाई में दमिश्क पर कब्जा करने के बाद येरूशलम की घेराबन्दी की।

शहर के कुलपति सोफरोनिस ने कहा कि वो केवल खलीफा उमर से बातचीत करेंगे और उनसे पहले येरूशलम में कोई नही घुसेगा। यह सुनने के बाद खलीफा उमर अपने एक सेवक के साथ ऊँट पर येरूशलम की तरफ बढ़े, हालाँकि वो तय मानकों के अनुसार शहर में शानदार तरह से धरती को हिला देने वाली पैदल सेना के साथ जा सकते थे। लम्बी यात्रा के दौरान दयालु और न्यायप्रिय खलीफा उमर ने अपने सेवक के साथ बारी-बारी से ऊँट पर सवारी की। जब उनका सेवक ऊँट पर बैठा तो उमर ने पैदल चलते हुए ऊँट भी हाँका।[27]

इत्तेफ़ाक यूँ हुआ कि येरूशलम पहुँचने के वक्त, ऊँट पर चढ़ने की बारी सेवक की थी। सेवक ने सम्मान दिखाते हुए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि लोग खलीफा उमर को देखें उसने खलीफा को ऊँट पर चढ़ने के लिए कहा। खलीफा उमर ने मना कर दिया, और पैदल चलते हुए येरूशलम में घुसे जबकि उनका सेवक ऊँट की सवारी कर रहा था। राजा सोफरोनिस सहित सभी यह देख की चकित और हैरान रह गये।

वो ईसाई जिन्होंने येरूशलम की दीवार से यह नज़ारा देखा वो उमर की अनोखी सादगी से चकित थे, उन्हें यह विश्वास ही नहीं हुआ कि यह साधारण आदमी पराक्रमी सेनाओं का प्रमुख था। खलीफा की विनम्रता से प्रभावित होने के बाद और उनके द्वारा दिये गये आश्वासनों से राजा सोफरोनिस ने अपने लोगों से यह

कहकर आत्मसमर्पण कर दिया कि दुनिया में कोई भी राजा ऐसे नेकदिल राजा के सामने नहीं टिक सकेगा।

क्या आज ऐसा कोई नेता जीवित है? जितने नेताओं से मैं मिल चुका हूँ और जिनके बारे में पढ़ चुका हूँ उनमें से कोई भी खलीफा उमर इब्न अल-खत्ताब के दर्जे का नहीं है। इज़राइल के दौरे के दो महीने बाद मैं कनाडा गया। मैंने वॉटरलू विश्वविद्यालय में 'कनाडा और भारत : विश्व के विकास के लिए साझेदारी' और टोरण्टो विश्वविद्यालय में 'सिविल सोसायटी के विकास में प्रौद्योगिकी' पर व्याख्यान दिया। मैंने इस बात पर जोर दिया कि किसी भी देश के विकास का आधार ज्ञानवान समाज है।

तकनीकी विकास और सामाजिक समानता साथ-साथ चलने चाहिएँ ताकि गरीबों और अमीरों दोनों को समान लाभ मिलें। मैंने गाँव में रहने वाले करोड़ों लोगों तक पहुँचने और उनको पढ़ाने के लिए गाँवों में शहरी सुविधाएँ देने की संकल्पना की व्याख्या की। मैने नॉलेज इकोनॉमी के घटकों के बारे में बात की और विकास के लिए बायो-नैनो-आईटी को एक साथ लाने का प्रस्ताव रखा। नॉलेज इकोनॉमी और बायो-नैनो-आईटी का संगम भारत को एक विकसित देश बनाने में बड़ी भूमिका अदा करेगा। सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में भारत की सफलता यह दिखाती है कि हम एक क्रान्ति की शुरुआत में हैं। यहाँ हम विश्व के सबसे युवा समाज की शक्ति, ज्ञान और आकांक्षा का उपयोग नये और रोमांचक उद्योगों में कर सकते हैं जिसकी कल्पना अभी तक शायद ही किसी ने की होगी। और उनके बिना भारत का इतनी विशाल क्षमता प्राप्त करना लगभग नामुमकिन होगा।

इसके अलावा, ऐसे नेताओं को अपने-आपको नेतृत्व कार्यों के लिए उसी विनम्रता और आध्यात्मिक जागरूकता से समर्पित करना चाहिए जैसे खलीफा उमर ने येरूशलम में अपने ऊँट का नेतृत्व किया था। और उमर का सबसे ज्यादा विवादित शहर का न्यायपूर्वक शासन करने का उदाहरण— और दूसरे धार्मिक गुटों के साथ शान्ति बनाए रखना—आज के प्रेरित नेताओं के लिए एक मिसाल है।

19 अप्रैल 2008 को मैं टोरण्टो में स्वामीनारायण मन्दिर गया। साधु ज्ञानप्रियदास ने वहाँ हज़ारों जवान और बूढ़े इण्डो-कनाडाइयों की तालियों की गूँज के बीच, फूलों और तिलक से मेरा स्वागत किया। बीएपीएस के ट्रस्टी ने मुझे और ओन्टारियो के अटॉर्नी जनरल क्रिस बेन्टले को मन्दिर में स्थित इण्डो-कनाडाई

सांस्कृतिक विरासत का कनाडा संग्रहालय दिखाया। संग्रहालय में घूमते हुए मैंने प्रमुख स्वामी जी में नेतृत्व की झलक देखी। वह मानवीय चेतना में मँडरा रहे सांसारिक और अपवित्र बादलों को हटाकर मानवीय आत्मा के देवत्व तक पहुँच सकते हैं। वहाँ कोई निर्देश, आदेश या अनुनय नहीं है बल्कि साधारण प्रकाश है जो अज्ञान के अँधेरे को हटा देता है। जब मैंने वहाँ मौजूद लोगों को सम्बोधित किया तो मैंने उन्हें यह दोहराने के लिए कहा :

वहाँ, जहाँ मन में धर्म है,
वहीं चरित्र में सुन्दरता है।
जब चरित्र में सुन्दरता है,
तो घर में सामंजस्य है।
जब घर में सामंजस्य है,
तो देश में व्यवस्था है।
जब देश में व्यवस्था है,
तो दुनिया में शान्ति है।

नीतिपरायणता क्या है? न्यायसंगत होने का क्या मतलब है? हमारे अन्दर पूरी तरह से नीतिपरायणता कैसे आती है। नीतिपरायणता एक विकल्प है जो हम अपने व्यवहार में चुनते हैं, जब हम अपने मन से कुछ करते हैं। नीतिपरायणता कुछ ऐसी चीज़ नहीं है जो हम पर आती है क्योंकि हम कुछ शब्द कहते हैं। नीतिपरायणता हमारे जीवन में हमारे कार्यों की वजह से आती है। पवित्र बाइबल में हमें नीतिपरायणता धारण करने के लिए कहा गया हैं (ईसाइया 59:17, एफेसियनस 6:13-18). इसका मतलब यह है कि हमें इसे कपड़ों की तरह धारण करना चाहिए। जो कपड़े कोई पहनता है वो अलमारी से निकलकर खुद ही किसी के शरीर में नहीं जाते हैं। किसी को जागरूकता से सोच-समझकर उन्हें पहनने का चुनाव करना होता है। हमें रोज़ नीतिपरायणता को धारण करने के लिए अपनी इस चुनने की ताकत का प्रयोग करना होता है—हमारे शिष्टाचार में, हमारे व्यवहार में और हर परिस्थिति में हमारे आचरण में जिसमें हम अपने आप को खोज पाते हैं। पर यह कौन है जो इस ताकत का इस्तेमाल करता है। हमारे दिमाग में कई आवाजें हैं। कौन-सी आवाज़ सही है?

2003 में मै अरुणाचल प्रदेश के तवांग में गेलुग बौद्ध मठ गया। अरुण मेरे साथ थे। यह समुद्र तल से 3500 मीटर की ऊँचाई पर था। मैंने पूरा दिन मठ में बिताया। मैने हर उम्र के भिक्षुओं में एक शान्ति की अवस्था देखी। इतना ही नहीं, वहाँ इकट्ठा हुए आम लोगों में भी खुशी साफ झलक रही थी। अरुण ने मुझसे पूछा इस जगह की ऐसी क्या अनूठीं खासियत है जो लोगों और भिक्षुओं का शान्ति देती है। जब मौका मिला तो मैंने मुख्य भिक्षु से पूछा कि ऐसा क्या है कि तवांग के गाँवों के सभी लोगों से और इस मठ से शान्ति और खुशी झलकती है। मुख्य भिक्षु मुस्कुराए और कुछ देर रुकने के बाद बोले, 'आप देश के राष्ट्रपति हैं, आपको हमारे और पूरे देश के बारे में सबकुछ पता होगा।' मैंने उत्तर दिया, 'यह मेरे लिए बहुत जरूरी है—कृपया मुझे विचार करके अपना विश्लेषण दें।'

शान्ति और मुस्कान झलकाती हुई बुद्ध की स्वर्णिम मूर्ति के सामने मुख्य भिक्षु ने लगभग सौ जवान और अनुभवी भिक्षुओं को जमा किया। मैं और मुख्य भिक्षु बीच में बैठे थे। मुख्य भिक्षु ने एक छोटा-सा प्रवचन दिया जो मैं यहाँ साझा करना चाहूँगा। उन्होंने कहा, 'आज की दुनिया में हमारे सामने अविश्वास और दुख के हिंसा में परिवर्तित होने की समस्या है। मठ यह सन्देश फैलाता है कि : यदि तुम अपने मन से "मैं" और "मेरा" जैसे शब्द निकाल दो तो तुम अहंकार को खत्म कर दोगे; यदि तुम अहंकार से मुक्ति पा गये तो बाकी लोगों के लिए तुम्हारी घृणा खत्म हो जायेगी; यदि मन से घृणा खत्म हो गयी तो, सोच और कर्म दोनों से हिंसा खत्म हो जायेगी; यदि हमारे मन से हिंसा खत्म हो गई, इंसान के मन में शान्ति का वास हो जाता है। फिर शान्ति और केवल शान्ति ही समाज को आगे बढ़ायेगी।' मैने शान्तिपूर्ण जीवन के इस सुन्दर समीकरण का मतलब समझ लिया लेकिन किसी भी इंसान के लिए कठिन मिशन यह है कि 'मैं' और 'मेरा' के स्वभाव को कैसे दूर किया जाये।

मैंने इसका जवाब कई सालों बाद *सर उल-इसरार* में पाया जो कि हज़रत शेख अब्दुल कादरी अल-जिलानी द्वारा लिखी गयी एक महान किताब है, मैंने इसका जिक्र अपनी किताब *स्क्वायरिंग द सर्किल* में भी किया था।

'मैं' का मॉडल अपने-आप को एक पहचान देने का है। यह किसी को जीवन की गतिशीलता में स्वयं को कहीं स्थापित करने में मदद करता है और स्थितियों को और अपनी क्षमता को समझने में मदद करता है। यह भेदभाव तर्क और प्रेरणा

समझ है। यह अहंकार है। और यही पाँच इन्द्रियों का संसाधक है और खुद भी एक भावना है।

इस्लामिक परम्परा में पाँच कहानी हिस्सों के बारे में बताया गया है। एक रूह है, दिव्य सांस; दूसरा कुल्ब है, भावुक हृदय; फिर है सऱ्, अहंकार और अन्त में नफ, प्रसन्नता चाहने वाली पाँच इन्द्रियाँ।[29] स्वभाव से इंसान मासूम है; वह सही करने का इच्छुक है शालीनता के लिए अधिक संवेदनशील है। यही उसका असली स्वभाव है जैसे भेड़ का बच्चा बड़ा शान्त होता है और घोड़े का बहुत तेज। लेकिन इंसान स्वार्थी इच्छाओं की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है (हिजाब-अल-नफ्स, इंसान की खुद की कामुक और मानसिक पहलुओं का परदा); रिवाज (हिजाब-अल-रुसूम, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और धार्मिक वातावरण का प्रभाव) और झूठी सीख और अँधविश्वास (हिजाब-अल-मरीफत)। कोई भी आध्यात्मिक विकास खुद की शुद्धि के साथ शुरू होता है (तज़किया-ए-नफ्स)। इसका मतलब है अपनी कामुकता से निजात पाना, जो नैतिक रूप से घृणित, निन्दनीय और पाशविक प्रवृत्ति का है और खुद में प्रसंशनीय दिव्य भावों और गुणों को लाना। इसके बाद आता है हृदय को साफ करना (तज़किया-ए-कुल्ब)। इसका मतलब है कि हृदय से उसके अल्पकालिक दुनिया के लिए प्रेम और उसके दुख और दर्द के लिए चिन्ता को मिटाकर उसकी जगह केवल ईश्वर के लिए अनन्य भक्ति पैदा करना। इन दोनों प्रक्रियाओं के खत्म होने के बाद सऱ् को खाली करना (तखिलिया-ए-सऱ्) शुरू होता है। पद, ओहदा, अधिकार, विशेषाधिकार, अभिमान के विचार मन से निकल जाने चाहिए।

यदि कोई इन तीनों कामों में कामयाब हो जाता है तो रूह में रौशनी आना (तजलिया-ए-रूह) खुद-ब-खुद हो जाता है। आत्मा ईश्वर के प्रकाश और उसके प्रेम के उत्साह से भर जाती है।

शेख अब्दुल कादिर ने 12 विशेष गुण बताये हैं जो एक नीतिपरायण इंसान के चरित्र में पूरी तरह समाहित होने चाहिएँ। उन्होंने लिखा है :

जहाँ तक अल्लाह (ऊँचा वो है) से आये दो गुणों का सवाल है, जिसके पास वो गुण हैं वो क्षमा करने के लिए हमेशा तैयार रहेगा (सत्तार), माफी देने के लिए हमेशा तैयार रहेगा (गफ्फार)।

दो गुण पैगम्बर (ईश्वर उन्हें आशीर्वाद दे और शान्ति दे) के वचन हैं, एक इंसान जिसे ये मिले हैं वो सहानुभूतिपूर्ण (शफीक) होगा और दयालु (रफीक) होगा।

दो गुण अबू बकर से हैं (ईश्वर उनसे खूब खुश हो), एक इंसान जिसे ये मिले हैं वो सत्यवादी (सादिक) और दानी (मुतासादिक) होगा।

दो गुण उमर से हैं (ईश्वर उससे खूब खुश हो) एक इंसान जिसे ये मिले हैं वो सही और न्यायसंगत (अम्मार) है उसका आदेश देने में तत्पर होगा और गलत और अनैतिक (नाह्हा) है उसे रोकने में तत्पर होगा।

दो गुण उथमान से हैं (ईश्वर उनसे खूब खुश हो), एक इंसान जिसे ये मिले हैं वो दान देने में (मिताम) तत्पर हो और जो रात में प्रार्थना (मुसल्ली) करने के लिए तत्पर हो, जब और सभी लोग सो रहे होते हैं।

और दो गुण अली से हैं (ईश्वर उससे खूब खुश हो), एक इंसान जिसे ये मिले हैं वो पढ़ा लिखा (अलीम) होगा और साहसी (शूजा) होगा।

अगर हमारे बीच इस स्तर का और उदारता से भरा कोई नेता है तो ऐसे प्रमुख स्वामीजी हैं। गाँधीनगर में आतंकवादी एवं अमानवीय हमले पर उनका जवाब क्षमा का प्रतीक था। उनके भक्त उनकी संवेदनशील और दयालु स्वभाव की कसमें खा सकते हैं। दुनिया भर में दिमाग और हृदय को मिलाकर आध्यात्मिक केन्द्र बनाकर उन्होंने अटूट सद्भाव और सच्चाई को बढ़ावा दिया है। अच्छे स्कूल, अस्पताल और धर्मार्थ संगठन स्थापित करके प्रमुख स्वामीजी सच्चे मुत्सादिक (दानी) बनकर उभरे हैं। उन्होंने बीएपीएस का नेतृत्व, सही और न्यायसंगत (अम्मार) आदेश देकर और गलत और अन्याय को रोककर, मजबूत और न्यायसंगत हाथों से किया है।

आम लोगों की समस्याओं के लिए प्रमुख स्वामीजी अक्सर रातभर प्रार्थना के लिए बैठते हैं। मैंने भी यह आदत सीख ली है। वह दुनिया के सबसे प्रबुद्ध लोगों को आकर्षित करते हैं—विद्वानों, वैज्ञानिकों, विचारकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, व्यवसायियों और नेताओं को—और आपदा के वक्त उन्होंने समाज की भी सेवा की है : भुखमरी में, बाढ़ में और सुनामी के दौरान। और अच्छे वक्त में भी, प्रमुख स्वामीजी ने महान स्वामीनारायण परम्परा का पालन किया कि भिक्षु और भक्त सारे मेहमानों को खाना परोसें। प्रमुख स्वामीजी मानवता के कार्यों के हिमालय हैं और शान्ति के महासागर हैं। वो पूरी तरह से बेजोड़ हैं।

मैंने यह कविता उनसे आखिरी मुलाकात की रात सारंगपुर में लिखी थी :

आपके प्रयास, दृढ़ता और सन्तोष ने
दिया आपको वह क़द
जिसकी नहीं कोई प्रतिलिपि
प्राचीन काल का जाज्वल्यमान सूर्य
आपके रूप में आया है वापस
जिसकी कक्षा है उच्चतम,
और जो चमकेगा अनन्त काल तक।

सन्तों के इतिहास में प्रमुख स्वामीजी बिल्कुल अनूठे हैं, पूर्णता के व्यापक दायरे में शामिल है उनका स्वामीनारायण सम्प्रदाय, उनका पूरा विकास, उनकी दया, धर्म के बारे में उनका ज्ञान और शास्त्रों का अनुपालन, और परमात्मा के बारे में उनका निजी और सीधा ज्ञान, उनका अक्षरधाम मन्दिरों का निर्माण एक भौतिक दायरे में सभी दुनियाओं के ईश्वर का आवास।

13

अन्तर्नाद

'हम लोगों को कुछ नहीं सिखा सकते; हम उन्हें उनके भीतर खोजने में सिर्फ उनकी मदद कर सकते हैं।'

—गैलीलियो गैलिली

सोलहवीं सदी के इतालवी दार्शनिक

अक्तूबर 2009 में, मुझे लुइज़ियाना के कांग्रेस ऑफ न्यूरोलॉजिकल सर्जन्स, न्यू ऑर्लियान्स से अन्तरराष्ट्रीय लीडरशिप व्याख्यान में सम्बोधन का आमन्त्रण मिला। गवर्नर पीयूष 'बॉबी' जिन्दल भी वहाँ थे। मैं वहाँ डॉ. जेम्स रूटका से मिला जो टॉरन्टो, कनाडा के एक बेहद मशहूर न्यूरो सर्जन हैं। हमने आपस में मस्तिष्क और मन के रिश्तों पर अपने विचार साझा किये। दर्शन, धर्म, मनोविज्ञान और संज्ञानात्मक विज्ञान में जिज्ञासा की लम्बी परम्परा है, जिसने मन की समझने की शक्ति विकसित की है। लेकिन असली प्रश्न मन की प्रकृति और भौतिक मस्तिष्क तथा तन्त्रिका तन्त्र के साथ इसके रिश्ते को लेकर है, जो अभी तक अनुत्तरित ही है। इस पर विभिन्न मत हैं कि क्या मन, मस्तिष्क क्रिया विज्ञान का एक उत्पाद है या फिर यह भौतिक अस्तित्व से अलहदा है? इसे लेकर कम-से-कम तीन बड़े दार्शनिक विचार हैं : द्वैतवाद, भौतिकवाद और अध्यात्मवाद। द्वैतवाद कहता है कि मन का मस्तिष्क से अलग अस्तित्व है; भौतिकवाद कहता है कि मानसिक परिघटनाएँ तन्त्रिका परिघटनाओं से मिलती-जुलती होती हैं, अध्यात्मवाद कहता है कि सिर्फ मानसिक परिघटनाओं का ही अस्तित्व होता है, बाकी सब माया है।

मानव मस्तिष्क की वही सामान्य संरचना होती है जो बाकी के स्तनधारी प्राणियों में होती है। लेकिन मनुष्यों में इसका कॉर्टेक्स बाकियों के मुकाबले अधिक विकसित होता है। सबसे अधिक विस्तार दिमाग के उस हिस्से में हुआ है जिसे सेरेब्रल कॉर्टेक्स कहा जाता है। इसमें भी खासकर ललाट खण्ड में, जो कि काम करने से जुड़ा है मसलन आत्म-नियन्त्रण, योजना बनाना, तर्कशक्ति और निष्कर्ष चिन्तन। सेरेब्रल कॉर्टेक्स का हिस्सा, जो दृष्टि से सम्बन्धित है वह भी मानवों में बहुत बड़ा है। मस्तिष्क और मन के बीच के रिश्ते को समझना बहुत बड़ी चुनौती है। यह सोचना ही बेहद कठिन है कि किस तरह एक मानसिक परिघटना, मिसाल के तौर पर एक विचार या भावना को न्यूरॉन या सिनाप्सेस जैसे भौतिक निकायों द्वारा या किसी अन्य तरीके से कार्यान्वित किया जाता है। यद्यपि, इंसानी दिमाग शरीर के वजन का महज 2 फीसदी होता है, लेकिन इसे हृदयी निर्गम का 15 फीसदी; शरीर की कुल ऑक्सीजन खपत का 20 फीसदी; शरीर की कुल ग्लूकोस खपत का 25 फीसदी हासिल होता है। दिमाग ग्लूकोज का ज्यादातर इस्तेमाल ऊर्जा के लिए करता है, और ग्लूकोज की कमी से इन्सुलिन के उपचार पर चल रहे डायबिटीज के मरीजों को हाइपोग्लूकीमिया की स्थिति हो सकती है, जिसमें मरीज भ्रमित और अचेतन तक हो सकता है।[31]

चेतना क्या है? अमेरिकी दार्शनिक डाना जोहर कहते हैं कि चेतना शास्त्रीय विश्व और सूक्ष्म विश्व के बीच का पुल है। द *क्वांटम सेल्फ* में वह तर्क देते हैं कि आधुनिक भौतिकी की अन्तर्दृष्टि हमारे रोजमर्रा के जीवन पर रोशनी डाल सकती है—हमारे खुद के साथ हमारे रिश्ते, दूसरों के साथ, और मोटे तौर पर पूरी दुनिया के साथ। जोहर वास्तविकता का एक मॉडल पेश करते हैं जिसमें ब्रह्माण्ड के पास खुद की एक चेतना होती है, जिसमें मानवीय चेतना महज एक अभिव्यक्ति भर है। जोहर इसके लिए बोस-आइंस्टीन संघनन सिद्धान्त का हवाला देते हैं, जो बुनियादी तौर पर मस्तिष्क/शरीर की द्वैतता को तरंग/कण द्वैतता तक ले जाता है।

कणों को फर्मियॉन्स (मिसाल के तौर पर, इलेक्ट्रॉन, प्रोटोन और न्यूट्रॉन) और बोसोन (फोटोन, ग्रैविटॉन और ग्लूऑन) में विभाजित किया जाता है। बोसोन रिश्तों के कण हैं, क्योंकि वह अन्तर्क्रिया करते हैं। जब दो तन्त्र अन्तर्क्रिया करते हैं (विद्युत, गुरुत्व या कुछ और) तो उनमें बोसोन का विनिमय होता है। फर्मियॉन्स सुपरिभाषित स्वत्व निकाय हैं, बड़े पैमाने वाले पदार्थों जैसे ही। लेकिन बोसोन पूरी

तरह विलय होकर एक निकाय बन सकते हैं, जैसे कि पदार्थ की सचेत अवस्थाओं में होता है। जोहर की कल्पना है कि इस तरह का घनीभूतीकरण ही चेतना की एकता प्रदान करने की आदर्श स्थिति है।[32]

जापानी-अमेरिकी सैद्धान्तिक भौतिकीविद मिसियो काकू ने हाल ही में चेतना के एक नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है जो विकास शास्त्र पर आधारित है। उन्होंने चेतना को एक फीडबैक लूप के रूप में परिभाषित किया है, जिसकी जरूरत किसी को अन्तरिक्ष में किसी अन्य जीवों के मुकाबले अपनी स्थिति बनाये रखने के मॉडल के लिए होती है और यह स्थिति अन्ततः समय के सापेक्ष होती है। वह कहते हैं कि थर्मोस्टेट की भी एक इकाई चेतना होती है। यह चेतना चारों तरफ के तापमान के प्रति होती है। फूल की ही मिसाल लीजिए। एक फूल में हो सकता है कि चेतना की दस ईकाइयाँ हों। इसे तापमान का ज्ञान होना चाहिए, मौसम, नमी, और गुरुत्व... का ज्ञान होना चाहिए। और तब आगे बढ़कर हम सरीसृपों के दिमाग की बात करें, जिसे वह स्तर एक की चेतना कहते हैं। सरीसृपों को अन्तरिक्ष में अपनी स्थिति की बहुत उम्दा समझ है, खासकर इसलिए क्योंकि उन्हें अपने शिकार को झपटना होता है। उसके बाद, हम स्तर दो की चेतना देखते हैं—बन्दरों की चेतना। यह भावनाओं और सामाजिक पदानुक्रम की चेतना है, जहाँ से हम आपस में कबीलाई रिश्तों में हैं।[33]

और आखिरकार, मानव के रूप में हमारी चेतना है। हम तीसरे स्तर पर हैं। मानसिक रूप से हम भविष्य का अनुकरण करते हैं। जानवर ऐसा नहीं कर पाते। वे शीतनिद्रा के लिए योजना नहीं बनाते। वह अगले दिन का कार्यक्रम तय नहीं करते। हमारी समझ के मुताबिक, उनके मन में कल की कोई संकल्पना नहीं होती। लेकिन हमारा दिमाग भविष्यवाणी की एक मशीन है। और इस तरह अगर हम सरीसृपों के दिमाग से स्तनधारियों के दिमाग और उससे लेकर प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स के विकास की तरफ देखें, तो हमें पता लगता है कि यह किसी स्थान में दूसरों की तुलना में अपनी स्थिति को समझने की प्रक्रिया है—यही भावनाएँ हैं—और आखिरकार हम इस तरह से भविष्य के लिए अनुकरण ही करते हैं।

मिशियो काकू बड़ी खूबसूरती से लिखते हैं :

> भौतिकी के नियम, जो हजारों सालों के प्रयोगों के बाद सावधानी से बनाये गये हैं, समरसता के ही नियम हैं जिसे कोई झिल्लियों और तारों के लिए लिख सकता है। रसायन के नियम वह धुनें हैं जिन्हें कोई इन

तारों पर बजा सकता है। ब्रह्माण्ड तने हुए तारों की एक सिम्फनी है। और 'ईश्वर का मन' जिसके बारे में आइंस्टीन ने विस्तार से लिखा है, वह एक कॉस्मिक संगीत है जो सम्पूर्ण हाइपरस्पेस में गूँजता है। पूरा विद्युत-चुम्बकीय स्पैक्ट्रम—रडार से लेकर टीवी तक, अवरक्त प्रकाश, दृश्य प्रकाश, पराबैंगनी प्रकाश, एक्स-किरणें, माइक्रोवेव, और गामा किरणें—और कुछ नहीं बस मैक्सवेल तरंगें हैं, जो कि फॅराडे बल क्षेत्र को दोलित करती हैं।[34]

अमेरिकी सैद्धान्तिक भौतिकीविद और नोबेल विजेता स्टीवन वीनबर्ग ने चेतना को एक रेडियो तन्त्र से जोड़ा है। हमारे चारों तरफ, विभिन्न स्टेशनों से सैंकड़ों किस्म की रेडियो तरंगें प्रसारित होती रहती हैं। किसी भी जगह पर, दफ्तर या कार या बैठक, हर जगह रेडियो तरंगें मौजूद हैं। बहरहाल, अगर हम एक रेडियो को चालू करें, हम एक वक्त पर सिर्फ एक ही फ्रीक्वेंसी को सुन सकते हैं; बाकी की फ्रीक्वेंसी को उनकी संशक्ति से दूर रखा जाता है और वे एक दूसरे के साथ एक ही फेज में नहीं होतीं। हर स्टेशन की अलग ऊर्जा होती है, एक अलग फ्रीक्वेंसी। परिणामस्वरूप, हमारा रेडियो एक बार में सिर्फ एक ही प्रसारण को सुना सकता है।[35]

इसी तरह, अपने ब्रह्माण्ड में हम उस फ्रीक्वेंसी को ट्यून किये बैठे हैं जो भौतिक वास्तविकताओं से जुड़ी है। लेकिन इसके समान्तर अनन्त अन्य वास्तविकताएँ भी हो सकती हैं, जो इसी कमरे में हमारे साथ सहअस्तित्व में होंगी। यद्यपि, हम उन्हें 'ट्यून' नहीं कर सकते। यद्यपि, यह दुनियाएँ काफी हद तक एक जैसी हैं, लेकिन इनकी ऊर्जायें बेहद अलग हैं। चूँकि हर विश्व खरबों-खरब अणुओं से बना है, इसका मतलब है कि ऊर्जा का अन्तर भी काफी अधिक होगा। चूँकि, प्लैंक के नियमानुसार, इन तरंगों की फ्रीक्वेंसी उनकी ऊर्जा की समानुपातिक है, इसका अर्थ है कि हर विश्व की तरंगें अलग फ्रीक्वेंसी पर दोलित होती हैं और एक दूसरे से समायोजित नहीं होती। हर तरह के प्रयोजनों और उद्देश्यों के लिए, इन विभिन्न विश्वों की तरंगें न तो आपस में समायोजित होती हैं न एक दूसरे पर प्रभाव डालती हैं।[36]

लेकिन क्या होगा, अगर वो प्रभाव डालने लगें? क्या होगा अगर मानवों में इन विभिन्न विश्वों की तरंगों को प्राप्त करने और समझने की क्षमता विकसित हो जाये? कई बरसों तक, जबसे मैं प्रमुख स्वामीजी से 2001 में मिला था, मैं उनके

विज्ञन के बारे में, उनकी शान्ति के बारे में, और अपने हजारों-लाखों भक्तों पर उनके प्रभाव के बारे में सोचा करता था। आखिरकार, मुझे मिशियो काकू और स्टीवन वीनबर्ग के लिखे में जवाब मिल गया। मुझे लगा कि चेतना का एक चौथा स्तर भी है, जहाँ स्व-चेतना ऊपर उठती है और ब्रह्माण्डीय चेतना बन जाती है। जब मैं भव्य अक्षरधाम मन्दिर को देखता हूँ, तो उनमें प्रमुख स्वामीजी के उस आवेगपूर्ण संकल्प को देखता हूँ जिसमें वह सुन्दरता, सत्य, बुद्धि, न्याय, दान, निष्ठा, आनन्द, साहस और सम्मान जैसे उत्तम गुणों को बढ़ाते हैं। हर कोई, जिसके पास एक हृदय है, जाने या अनजाने, इस उत्तम गुणों वाली सुन्दरता और कविता को अक्षरधाम मन्दिर में महसूस कर सकता है।

अब मैं स्तर चार की चेतना की विवेचना करूँगा जिसे मैंने प्रमुख स्वामीजी में देखा है। कल्पना कीजिये कि आप द्विविमीय वस्तु हैं और आपके चारों तरफ एक बाड़ लगा दी गयी है, अब आप क्या चाहते हैं। तो जाहिर है यह एक आयत सरीखा होगा। अगर आप इससे निकलना चाहें तो इसका एकमात्र तरीका होगा कि आप इस बाड़ को काटकर बाहर निकलें। इस स्तर पर आप जो भी सीखेंगे, वह बाधाओं से पार जाने और बाड़ को काटने के बारे में ही होगा।

लेकिन अगर आपको अचानक त्रिविमीय चेतना दे दी जाये, तो आप द्विविमीय आयत पर ऊपर से देखेंगे, और पायेंगे कि आप सीधे अन्दर जा सकते हैं और जो चाहे ले सकते हैं। और इस प्रक्रिया में इस नज़रिए से आयत या बाड़ कोई बाधा नहीं थी। लेकिन आपके सामने अभी भी बाधाएँ रहेंगी। ऐसा नही है कि प्रमुख स्वामीजी को हर चीज़ थाली में परोसकर दी गयी।

उनके सामने भी समस्याएँ थीं, बाधाएँ, प्रतिरोध और यहाँ तक कि युद्धस्थितियाँ भी थीं—लेकिन उन्होंने इन सब पर कभी प्रतिक्रिया नहीं दी। क्यों? क्योंकि वह उससे ऊपर के चेतना स्तर तक पहुँच चुके थे।

चौथी विमा चेतना की उच्चतर विमा है जो दिव्य सम्पर्कों से आती है। हम प्रकाश, चेतना और प्रेम के बेहद विशाल ब्रह्माण्ड से घिरे हैं। हम अपने अस्तित्व में उर्ध्वाधर बढ़कर ऊँचाइयों तक पहुँच सकते हैं और प्रेरणा, रचनात्मक विचारों, ऊर्जा, बुद्धि, समझ और आध्यात्मिक विज्ञन के उस स्तर को छू सकते हैं। चार विमाओं वाली चेतना के साथ, हम अपनी अन्तःप्रज्ञा के सम्पर्क में रहते है : यह मार्गदर्शन तथा बुद्धि का एक अमोघ स्रोत है जो सही दिशा, अच्छे चयन तथा

फैसलों की ओर ले जाता है, साथ ही समरसतापूर्ण रिश्ते एवं बेहतरी की समझ पैदा करता है। चेतना ही है जो हमारे लिए हर जरूरत का संसाधन मुहैया कराती है, और यही हमारे पास आधिक्य का संसाधन है। मानव इतिहास में कई पवित्र आत्माओं ने अपने चेतना के स्तर को विस्तारित करके उसे उच्चतर स्तरों तक ले जाने में कामयाबी हासिल की है। प्रमुख स्वामीजी भी ऐसी ही पवित्र आत्मा हैं।

किसी की चेतना का विस्तार उसके मौलिक ज्ञान के साथ शुरू होता है—विश्व में उसके स्थान की समझ और दैवीय के साथ अन्तर्संपर्कों से। मान लीजिए कि आप समुद्र में एक बूँद की तरह हैं। अगर आप यह सोचते हैं कि आप सागर से अलग हैं, तो आप स्वयं को शक्तिहीन, असहाय महसूस करेंगे और अपने चारों तरफ के महासागर की अधिकता में खुद को खोया हुआ महसूस करेंगे। अगर आप यह जानते हैं कि आप महासागर का हिस्सा है, तो पूरे महासागर की शक्ति आपके पास होगी। महासागर, दैवीयता के साथ अपने सम्पर्क को विस्तार देकर, आप असीमित शक्ति को पा सकते हैं, उस आधिक्य और चेतना के साथ खुद को जोड़िए जो आपके पास उपलब्ध है। तो आपकी पहचान महासागर की छोटी, असहाय बूँद की नहीं रह जायेगी बल्कि आपकी पहचान स्वयं महासागर की हो जायेगी : सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी और सर्वज्ञ।

जब आप जाग्रत होकर, अपनी चेतना को बाड़ों वाले द्विविमीय विश्व के ऊपर विस्तारित करते हैं—दैवीय सम्पर्कों और दैवीय इच्छाओं के मुताबिक—तब आप जान पाते हैं कि आप महासागर की लघु असहाय बूँद नहीं हैं। आप जानते हैं कि आप दैवीयता का हिस्सा हैं, कि आपको लोग प्यार करते हैं, कि ब्रह्माण्ड मैत्रीपूर्ण है और हर चीज आपके लिए और आपके साथ काम कर रही है। जितना भी वक्त आप उच्च विमाओं में बिताते हैं—दैवीयता के साथ सम्पर्क करना और दैवीय इच्छाओं से तालमेल बिठाना—आप हर बार ऐसा ही महसूस करेंगे। यहाँ तक कि इस सम्पर्क का एक क्षण भी एक ऐसा विचार या विज़न ला सकता है जो आपकी जिन्दगी बदल देगा—यह सदैव बेहतरी के लिए होगा।

प्रमुख स्वामीजी चेतना के महासागर के हिस्सा बन चुके हैं। उनके आशीर्वाद से उनके हजारों भक्त अपनी नियति को रोकने के अपने पुराने तरीकों को छोड़ चुके हैं। उन लोगों ने हर चीज पर ध्यान देना और गलती ढूँढ़नी बन्द कर दी है, वह जो चाहते हैं उसके लिए उन्होंने ब्रह्माण्ड पर नियन्त्रण की अपनी कोशिशें बन्द कर दी

हैं और अपनी सारी उम्मीदों और विश्वास को प्रमुख स्वामीजी के हवाले कर दिया है। वह अब यह नहीं सोचते कि वह जो चाहते हैं वह किसी और की शक्ति या फैसले पर निर्भर है। वह अब अपनी प्रगति या कामयाबी को पारम्परिक सांस्कृतिक मानकों पर नहीं कसते, बल्कि उसे नीतिपरायणता के तराजू पर तौलते हैं। उन्हें यह महसूस हो गया है कि अगर वह मानसिक रूप से चीजों पर नियन्त्रण की कोशिश नहीं करेंगे, तो ब्रह्माण्ड उंन्हें कहीं अधिक मात्रा में प्रदान करेगा, जितना वह खुद हासिल कर पाते। प्रमुख स्वामीजी ने लोगों की चार पीढ़ियों को सिखाया कि वह खुद को अन्तर्जाग्रत करें—और उनका जागरण अभूतपूर्व रहा।

14

लहरों पर चलना

'सिर्फ खड़े होकर पानी देखने से आप नदी नहीं पार कर सकते।'

—गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर

साल 2011 एक अमंगल घटना से शुरू हुआ था। 14 जनवरी की रात को केरल के इदुक्की जिले के सबरीमाला में भगदड़ से कम-से-कम 102 तीर्थयात्री मारे गये। सबरीमाला को वह स्थल माना जाता है, जहाँ राजा अय्यप्पन शक्तिशाली राक्षसी महिषी को मारकर तपस्या करने गये। यह मन्दिर लगभग 500 मीटर की ऊँचाई पर एक पहाड़ी की चोटी पर स्थित है और चारों ओर से पहाड़ों और घने जंगलों से घिरा है। इसे विश्व की सबसे बड़ी वार्षिक तीर्थयात्राओं में से एक माना जाता है, जिसमें हर साल अनुमानत: 10 करोड़ लोग आते हैं। इनमें से अधिकतर उस 52 किलोमीटर पारम्परिक पहाड़ी जंगली रास्ते पर चलते हैं जिन पर माना जाता है कि अय्यप्पन पैदल चले थे। पुरुष लोग बुजुर्ग तीर्थयात्रियों को बाँस की कुर्सियों में उठाकर इस सम्मेलन में ले जाते हैं।

रात को आकाश में एक सितारा, कुछ किलोमीटर दूर पहाड़ों में जंगलों के भीतर झिलमिलाती रोशनी और उनके उदात्त अनुभव का आनन्द उठाते दस हजार तीर्थयात्री; यह है सबरीमाला तीर्थयात्रा का आकर्षण। 14 जनवरी 2011 की रात कोई अलग नहीं थी, तारे के जुड़वाँ दृश्य और प्रकाश—जो क्रमश: मकर ज्योति और मकर विलक्कू के रूप में जाने जाते हैं—हजारों की भीड़ को रोमांचित कर रहा था। लेकिन इस बार, जैसे ही भीड़ तारे और रोशनी की प्रदर्शनी—जिसे तीर्थयात्री

पृथ्वी और स्वर्ग का संयोजन मानते हैं—को देखने के बाद बन्दिपेरियार के पास पुल्लूमेढु पर सुविधाजनक बिन्दु से ढलान की ओर बढ़ी कि एक घातक भगदड़ मच गयी।

मैं दु:खी था, और बिना सोये कई रातों तक सोचता रहा कि ऐसी दुर्घटनाएँ क्यों होती हैं और इनसे कैसे बचा जा सकता है। पाँच साल पहले 12 जनवरी को मीना में हज के आखरी दिन पर रमी अल जमरत रिवाज के दौरान हुई भगदड़ में कम-से-कम 346 अन्य हज यात्रियों के साथ मेरे एक दूर के रिश्तेदार की मौत हो गयी थी। वे बूढ़े थे और एक पाक जिन्दगी जी थी; उन्होंने मक्का जाने के लिए अपने जीवनभर की बचत को खर्च किया, और वहाँ मर गये। क्यों अच्छे लोगों के साथ ऐसी बुरी चीजें होती हैं? कोई जवाब है? कोई सफाई? इस शाश्वत खोज का कोई अन्त है?

अप्रैल 2011 में, मुझे शिकागो के नजदीक इलिनॉय में फर्मी नैशनल ऐसीलरेटर लेबोरेट्री (जो 'फर्मीलैब' कहलाता है) में आमन्त्रित किया गया था। फर्मीलैब उच्च-ऊर्जा कण भौतिकी में विशेषज्ञता प्राप्त यूएस के ऊर्जा विभाग की राष्ट्रीय प्रयोगशाला है। एनरिको फर्मी एक इतालवी भौतिक विज्ञानी थे, जो प्रथम परमाणु रिएक्टर (शिकागो पाइल-1) पर अपने कार्य और क्वॉन्टम सिद्धान्त के विकास में योगदान के लिए जाने जाते हैं। अपने मन में अभी भी सबरीमाला भगदड़ की घटना के साथ, मैं जिस जवाब को ढूँढ़ रहा था उसे खोजने के लिए; लम्बे हवाई सफर के दौरान पढ़ने के लिए मैंने हवाई अड्डे पर युवा कवि डेविड वाइट की कविता की किताब चुनी।

डेविड वाइट ने तीर्थयात्री की आँखों से मानव जीवन के महान सवालों पर ध्यान दिया : कोई ऐसा जो अपेक्षाकृत तेजी से गुजर रहा; कोई ऐसा जिसे दोस्ती, आतिथ्य की दरकार नहीं, जो दोस्तों और अजनबियों के बीच एक-सा सहज है; कोई ऐसा जिसके लिये पहुँच मार्ग के रूप में चरण दर चरण गन्तव्य की प्रकृति बदलती है और कोई ऐसा जो हवा और मौसम की अनियमितता के अधीन चलता चले।

झोली खाली करने; कुछ चुनने और कुछ छोड़ने के लिए;
वादे के लिए आपको क्या करने की जरूरत है;
पहने जूतों को त्यागने के लिए

नदी के किनारे, इसलिए नहीं क्योंकि आपने छोड़ दिया
बल्कि इसलिए कि अब, आपको अलग राह खोजनी होगी,
और इसलिए कि इनसे होकर आप जितना चाहें चल सकते हैं,
भले ही लहरें कितनी ही ऊँची हैं।[37]

लहरों पर चलने का रूपक मुझे गहरे चिन्तन में ले गया। मैं समुद्रीय क्षेत्र में पैदा हुआ था और असंख्य ना जाने कितनी शामें मैंने तट पर लहरों को देखते हुए गुज़ारी थीं। यहाँ तक कि जब मैं जवान हुआ और जब थुम्बा में काम कर रहा था, समुद्र मुझे इशारे से बुला लिया करता और मैं उसकी लहरों को निहारता अकेले वहाँ कई घण्टे बैठा रहता।

मैं लहरों की विशालता और लगातार आने-जाने की शक्ति से सम्मोहित हो जाता। रात में जब असंख्य तारे ऊपर चमचमाते और असंख्य लहरें आती और जाती तो ऊर्जा और क्रम की यह महान प्रदर्शनी मुझे एहसास दिलाती कि चीजों की महान योजना में मनुष्य कितना छोटा है।

आध्यात्मिक गुरु प्राय: 'मैं' (या अहम) को चेतना के संकुचन के रूप में चित्रित करते हैं। यह आन्तरिक परिदृश्य का विशेष रूप से उपयुक्त वर्णन है, चूँकि जब भी हम खुद की भूमिका पहचानने के लिए बाहरी और आन्तरिक वृहद् ब्रह्माण्ड का बहिष्कार करते हैं, तब वास्तव में हमारी चेतना बहुत संकीर्ण होती है। जब हम शिकागो जाने के रास्ते में अटलांटिक महासागर पार कर रहे थे, तो केबिन स्टाफ द्वारा विमान में रोशनी को धीमा करने के लिए कहने पर मुझे ऐसा महसूस हुआ कि जैसे मैं समुद्र तट में बैठा हूँ और 'लहरों पर चलना' रूपक का नया अर्थ मेरे ऊपर उद्घाटित हुआ हो।[38]

लहरें किसका प्रतीक हैं? क्या ये वो चिन्ताएँ नहीं हैं, जो आमतौर पर हमारी आन्तरिक कहानी पर हावी होती हैं? सुबह काम के लिए भागना, जिम्मेदारी और प्रतिबद्धताओं के तले दबा हुआ महसूस करना, ऐसे लोगों से बातचीत करना जिनमें न केवल कौशलों की बल्कि समझ की भी कमी है, और एक बार फिर कोशिश करना और एक बार फिर गिरना। जो दिमाग में चलता है वह जेल में रहने समान है। हम सभी तुलना, ईर्ष्या और कमी की सलाखों के पीछे बन्द हैं। क्या मुक्ति और स्वतन्त्रता को खोजना सम्भव है? क्यों मैं अपनी बाकी जिन्दगी खुद को इस कैदी की तरह जीने के लिए छोड़ दूँ।

इस कैदखाने से निकलने, अहंकार पर काबू पाने का रहस्य स्पष्टता यह एहसास करना है कि यह केवल एक भ्रम है। टोरा कहते हैं कि अहं फरसा पकड़ा हुआ एक विशाल इंसान है जो चौराहे पर आपके सामने खड़ा है। मूर्ख भयभीत होते हैं और अपनी जिन्दगी के लिए भागते रहते हैं। बुद्धिमान व्यक्ति बारीकी से देखता है कि इस विशाल व्यक्ति के पैर नहीं हैं; वह ठीक उसके पीछे चलते हैं और सुरक्षित रहते हैं।

यही अहंकार है : सभी गरजते हैं, बरसता कोई नहीं। यदि आप अहंकार को विशाल मृगतृष्णा के रूप में मान सकते हैं तो आप इसके पार देख पायेंगे और आवृत्ति को बढ़ा पायेंगे जिससे होकर आप आत्मा के माध्यम से जीवन का अनुभव लेते हैं। यदि अहंकार आत्मा के ताल पर कीचड़ है तो शुद्धता वह पानी है जो इसे धो देता है। यह मानव अनुभव की वास्तविक प्रकृति की जागरूकता के साथ शुरू होती है : आप एक आत्मा हैं लेकिन जीवन भर का आपका अनुभव शरीर के बोध हैं। यह असल में 'लहरों पर चलना' है। मैं गहरी नींद में सो गया और विमान के शिकागो में उतरने के बाद ही जगा।

24 अप्रैल था। मैंने शहर के बाहरी इलाके में बार्टलेट में स्थित बेहद खूबसूरत स्वामीनारायण मन्दिर में अपनी शाम बिताने का फैसला लिया। साधु विवेकमूर्ति दास ने यहाँ मेरा स्वागत किया। यह एक सुन्दर वातावरण था : फूलों और रोशनी से सजे मन्दिर के बगीचों में 1,500 भारतीय-अमेरिकी बच्चों ने वैदिक मन्त्रों का जाप किया।

एक विदेशी धरती में यह सब कैसे सम्भव हो सकता है जो अपनी तेज भागती ज़िन्दगी और नागरिकों के अपने में ही रहने के लिए विख्यात है? मैंने बताया था कि 1970 में योगीजी महाराज ने के.सी. पटेल को आशीर्वाद दिया, जो अमेरिका जा रहे थे और उनसे नियमित सत्संग सभाएँ आयोजित करने को कहा था। योगीजी महाराज ने कहा 'केवल एक प्रवासी मजदूर की तरह काम नहीं करना, बल्कि सम्पूर्ण अमेरिका को प्रेरित करना।' उसके बाद, 1974, 1977 और 1980 में प्रमुख स्वामीजी की अनवरत प्रेरणा और प्रयासों के माध्यम से सत्संग समुदाय में जबरदस्त वृद्धि देखी गयी।

साधु आत्मस्वरूप दास ने एक बार मुझे बताया था कि 1980 में, प्रमुख स्वामीजी ने अपने स्वास्थ्य और निजी जरूरतों का ध्यान किये बिना, भक्तों की

इच्छाओं की पूर्ति करने के क्रम में पूरे अमेरिका में घर-घर अथक यात्राएँ कीं। वे भक्तों को पहले और खुद को सबसे अन्त में रखते थे। अन्ततः इस दौरे के दौरान उनकी नज़र इस सीमा तक कमजोर हो गयी कि वे खुद की चप्पल को नहीं देख पाते थे।

उनका मोतियाबिन्द बिगड़कर अँधेपन में तब्दील हो गया; उन्हें तुरन्त आँखों की सर्जरी की जरूरत थी। यह काम प्रख्यात नेत्र रोग विशेषज्ञ डॉ. हचिंसन की देखरेख में बोस्टन में निर्धारित हुआ। जब लन्दन में भक्तों को यह बात पता चली तो उन्होंने अनुरोध किया कि ऑपरेशन लन्दन में किया जाये ताकि उनके स्वस्थ्य होने के दौरान यूनाइटेड किंगडम के बहुत से अनुयायियों को प्रमुख स्वामीजी के दर्शन प्राप्त हो सके। भक्तों के किसी भी समूह को असन्तुष्ट नहीं करते हुए प्रमुख स्वामीजी मान गये कि एक आँख का ऑपरेशन बोस्टन में और दूसरी आँख का ऑपरेशन लन्दन में हो। अपने व्यक्तिगत आराम को ध्यान में नहीं रखना और यहाँ तक कि उनकी आँखों को भी भक्तों की इच्छाओं के अनुसार बाँटने हेतु उनकी सम्मति प्रमुख स्वामीजी की असाधारण नि:स्वार्थ प्रकृति की मिसाल है।

अगले दिन शिकागो में पेरू-अमेरिकी कण भौतिकी विज्ञानी और फर्मीलैब के निदेशक पियर ओडोन मुझे 300 फीट नीचे मुख्य इंजेक्टर न्यूट्रिनो ओसिलेशन सर्च (मिनोस) ले गये और वी-ए, या मिर्नवा हेतु मुख्य इंजेक्टर परीक्षण, एक न्यूट्रिनो बिखराव परीक्षण—जो वहाँ हुआ था—के बारे में बताया। उस दिन बाद में, मैंने 'विश्व ज्ञान मंच : विविध राष्ट्रों की मुख्य दक्षता की भागीदारी' पर भाषण दिया। मैंने कई तरीकों पर प्रकाश डाला जिनसे आधुनिक प्रौद्योगिकियों ने जीवन की वर्तमान गुणवत्ता को सुधारने और भविष्य में सामाजिक सुधार हेतु इतिहास से सीखकर मार्ग प्रशस्त किया। मैंने बताया कि आज हमारा समाज जिन चुनौतियों का सामना कर रहा है उसके लिए विश्व के कई भागों से सर्वश्रेष्ठ दिमागों को एकसाथ आने और बहु-विषयक और बहुराष्ट्रीय साझेदारियों में शामिल होने की जरूरत है।

पिछली शाम स्वामीनारायण मन्दिर में अपने प्रेरक अनुभव, जहाँ मैं आध्यात्मिक समर्पण के मनोरम स्थानीय प्रदर्शन का साक्षी बना, को विस्तारित करते हुए मैंने कहा, मानवता जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा, जल, रोग, आर्थिक अशान्ति और आतंकवाद के लिए अधिक से अधिक ध्यान दे रही है जो पूरे विश्व के लिए

चिन्ता का विषय हैं और इनका समाधान किसी एक देश या देशों के समूहों से परे हैं। बड़े स्तर पर समाज के लिए कल्याणकारी तकनीकी विकास के क्षेत्रों में हमें वैश्विक तरीके से सोचने और स्थानीय तरीके से काम करने की जरूरत है।

आज की ज्ञान अर्थव्यवस्था में, विचारों का आदान-प्रदान औद्योगिक प्रगति का नया साधन बन गया है। सोशल नेटवर्कों और मोबाइल तकनीक के आगमन ने नियोक्ताओं की प्रतिस्पर्धात्मक बढ़त को जानकारी जुटाने वाले कर्मचारियों को काम पर रखने से, उस जानकारी को उन्हें बताने वाले कामगार रखने की ओर खिसका दिया है। जब कम्पनी, हर एक शहर, हर एक देश और हर एक व्यक्ति तेजी से एक दूसरे से जुड़ रहे हैं तो कारोबारी और सरकारी मार्गदर्शकों को असल प्रतिमानों और पूर्वानुमानित घटनाओं पर विचार करने के लिए खुद के पूर्वाग्रहों के आगे देखना होगा। और उन्हें हमारे समय की अन्य मुख्य चुनौती जो कि कार्य संस्कृति है पर ध्यान देने में अपने खुद की जरूरतों से परे सोचना होगा : नियोक्ताओं और कर्मचारियों दोनों में स्वार्थ के आसपास विकसित हो चुकी कार्य प्रणालियों को कैसे बदला जाये ?

यहीं पर मैं प्रमुख स्वामीजी के मिशन की ऐतिहासिक प्रासंगिकता को देखता हूँ जो उच्च उद्देश्य और दूरदराज की जगहों में निर्देश प्रदान करता है। यह लोगों को नि:स्वार्थ सेवा के सर्वभौमिक केन्द्रों के निर्माण हेतु सांसारिक स्वार्थ की लहरों के ऊपर तैरने में मदद करता है।

15

ईश्वर को प्रत्यक्ष जीना

'श्रीमान, मुझे इस बात की फ़िक्र नहीं कि ईश्वर हमारी ओर है या नहीं, मेरी सबसे बड़ी फ़िक्र है कि मैं ईश्वर की ओर हूँ कि नहीं, क्योंकि ईश्वर हमेशा सही है'

—अब्राहम लिंकन

संयुक्त राज्य अमेरिका के सोलहवें राष्ट्रपति

दिसम्बर 1964 की डरावनी यादें आज भी मेरे जहन में ताज़ा हैं। दिसम्बर की 22वीं तारीख की आधी रात से ठीक पहले 110 यात्रियों और पाँच रेलवे कर्मचारियों को लेकर जा रही धनुषकोडी पैसेंजर, ट्रेन नम्बर 653, धनुषकोडी रेलवे स्टेशन से मात्र कुछ सौ फर्लांग की दूरी पर थी जब सुपर साइक्लोनिक तूफ़ान की एक विशालकाय लहर उससे आ टकरायी। सभी यात्रियों सहित पूरी की पूरी ट्रेन बह गयी थी, कोई भी जीवित नहीं बचा। उस तूफ़ान में पानी की एक विशाल दीवार ने धनुषकोडी को तबाह करते हुए आसपास के लगभग सभी द्वीपों को निगल लिया था। मैं उस समय काम के सिलसिले में रामेश्वरम में था। मैंने खुद अपनी आँखों से उन तूफ़ानी लहरों को महान रामनाथस्वामी मन्दिर के नज़दीक आकर ठहरते देखा था। कितने ही लोग उस वक़्त तूफ़ान के आतंक से बचने के लिए मन्दिर में शरण लिये हुए थे। तबाही का आलम यह था कि राहत और बचाव कार्य के लिए आये नौसेना के जहाजों को धनुषकोडी के पूर्वी छोर पर लाशें तैरती हुई मिल रही थीं।

चेन्नई के एग्मोर स्टेशन से धनुषकोडी तक बोट मेल नाम की एक रेल सुविधा थी। यह रेल धनुषकोडी के दक्षिण-पूर्वी तट पर रुकती थी जहाँ से एक स्टीमर रेलयात्रियों को पाक जलडमरू मध्य होते हुए श्रीलंका तक ले जाता था। उस

दुर्घटना के बाद उस रेल लाईन और उस तट की कभी मरम्मत नहीं की गयी ना ही उस रेल सुविधा को दोबारा शुरू किया गया। यहाँ तक कि तमिलनाडु सरकार ने उस त्रासदी के बाद धनुषकोडी को आबादी के बसने के लिए ख़तरनाक घोषित कर दिया। दिसम्बर 2004 में जब भारत के राष्ट्रपति के तौर पर मैं वहाँ गया, मुझे बताया गया था कि सुनामी आने के ठीक पहले धनुषकोडी के आसपास का समुद्र, क्षेत्र के डूबे हुए हिस्से को कुछ देर के लिए बाहर लाते हुए, तट से लगभग 500 मीटर पीछे हट गया था।

रामेश्वरम भारत का वह हिस्सा है जो श्रीलंका के सबसे नज़दीक है। ऐतिहासिक काल से ही लोग, दोनों देशों को अलग करने वाले, 50 किलोमीटर चौड़े पाक जलडमरू मध्य के आर-पार जाते रहे हैं। श्रीलंका के राजाओं पर पाली भाषा में लिखी गयी एक ऐतिहासिक पुस्तक 'महावंसा' के अनुसार सिंहलियों के पूर्वज 'लता राष्ट्र' से आये थे जो कि इस समय के बिहार और झारखण्ड के कुछ हिस्से और पश्चिम बंगाल को मिलाकर बनता है। तमिल भी इतिहास में हमेशा से मौजूद थे और श्रीलंका के पूर्वी तट पर व्यापार में संलग्न थे। सिंहलियों की ऐतिहासिक राजधानी 'अनुराधापुर' जो इस समय में उत्तर-मध्य राज्य में स्थित है, के भी विभिन्न प्रकार के लोगों को जगह देने वाले सार्वलौकिक शहर होने के साक्ष्य मिलते हैं। यहाँ न सिर्फ़ तमिलों की एक बड़ी जनसंख्या रहती थी बल्कि तमिल राजाओं ने भी यहाँ कई बार शासन किया था।

वर्ष 1948 में अंग्रेजों से आज़ादी मिलने के बाद से ही बहुसंख्यक सिंहली और अल्पसंख्यक तमिल समुदायों के बीच के कलहपूर्ण सम्बन्ध अक्सर घातक हिंसा के प्रकरणों के रूप में सामने आते रहे हैं। वर्ष 1956, 1958, 1977 और 1981 के तमिल विरोधी दंगों और जुलाई 1983 की तबाही ने तमिलों की आज़ादी माँगने वाले आतंकवादी संगठनों के पैदा होने और फलने-फूलने की वजह तैयार कर दी। इसके बाद आने वाले गृहयुद्ध के परिणामस्वरूप 100,000 से ज़्यादा लोग मारे गये और हजारों की तादाद में लोग ग़ायब कर दिये गये। वह गृहयुद्ध 2009 में ख़त्म तो हो गया पर अपने दुष्परिणाम पीछे छोड़ गया।

जनवरी 2012 में श्रीलंका की सरकार ने मुझे 'त्रिभाषीय श्रीलंका पहल' के लोकार्पण के लिए बुलाया। भाषा कभी भी सम्प्रेषण का साधारण मुद्दा नहीं रही है। दुनिया भर में समसामयिक सामाजिक और राजनैतिक अभ्यास में भाषा

की इसकी उपयोगिता से कहीं बड़ी भूमिका है। श्रीलंका भी इसका अपवाद नहीं है। उस समय श्रीलंका ने एक बहुत ही विनाशक़ारी सैन्य संघर्ष का अन्त किया था, जिसका जितना सम्बन्ध भाषा से जुड़े पहचान के संकट से था, उतना ही सम्बन्ध जातीयता और प्रतियोगी विचारों वाले द्विराष्ट्रवाद और इतिहास की प्रतिस्पर्धात्मक व्याख्याओं से। इस प्रसंग में, देश के भविष्य को ध्यान में रखते हुए, भाषा के राजनैतिक-विकासात्मक पहलू को गम्भीरता से लेने का यह सबसे महत्वपूर्ण समय था।

सिंहली और तमिल भाषाओं को बढ़ावा देने के लिए, तमिल और सिंहली दोनों ही राजनेताओं ने औपनिवेशिक काल में बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में स्वभाषा के विचार का समर्थन किया। इस तरह, लोकप्रिय समसामयिक मान्यता के विरुद्ध, श्रीलंका में भाषा की राजनीति हमेशा से अन्तर्जातीय शत्रुता का प्रतीक नहीं रही है। अपनी शुरुआती अवस्था में स्वभाषा की माँग में वर्ग असन्तोष के सुर थे, यहाँ तक कि सिंहल राष्ट्रवादी आकांक्षाओं की धुँधली सीमाएँ भी साफ़ दिखने लगी थीं।

पर वे आकांक्षाएँ ठीक से व्यक्त नहीं की गयीं और उस अवस्था में उन्हें लोकप्रिय समर्थन भी नहीं मिला। स्वभाषा की माँग साफ़ तौर पर अंग्रेजी शिक्षाप्राप्त कुलीनों के सरकार में पद प्राप्त करने आदि के विशेषाधिकारों के प्रति विरोध था, क्योंकि स्थानीय भाषाओं में शिक्षा प्राप्त करने वाले एक बड़े वर्ग को इन अधिकारों से वंचित रखा गया था।

1950 और 1960 के दशक में सिंहली भाषा को दी गयी तरजीह और तमिल भाषियों से सिंहली भाषियों को जोड़ने वाली अंग्रेजी का प्रयोग धीरे-धीरे कम होते चले जाना, इन दो कारणों ने श्रीलंका में जातीय तनाव को और बढ़ा दिया जो आगे चलकर 30 वर्ष लम्बे खूनी गृहयुद्ध में तब्दील हो गया।

दशकों तक चलने वाली इस आपसी कलह के बाद सरकार ने भी लोगों को दोनों भाषाएँ बोलने को प्रोत्साहित करने के प्रयास किये, साथ ही अंग्रेजी को सिंहली और तमिलभाषियों को जोड़ने वाली एक कड़ी के तौर पर समर्थन दिया। इस लक्ष्य को पाने के लिए तत्कालीन राष्ट्रपति महिन्दा राजपक्षे ने वर्ष 2012 को 'त्रिभाषीयता का वर्ष' के रूप में घोषित करते हुए श्रीलंका में तीन भाषाओं को आधिकारिक भाषा बनाने वाली एक दसवर्षीय योजना का आरम्भ किया।

उस समय मैंने राष्ट्रपति राजपक्षे के साथ हमारे समय के महान राजनेता नेल्सन मंडेला के कुछ शब्द साझा किये जो बहुत प्रसिद्ध नहीं हैं, वो शब्द थे, 'यदि आप किसी व्यक्ति से उस भाषा में बात करें जो उसने विद्यालय में सीखी है, तो बात उसके दिमाग तक पहुँचेगी। पर यदि आप उस से उस भाषा में बात करें जो उसने अपनी माँ से सीखी है तो बात उसके दिल तक जायेगी।'

22 जनवरी, 2012 को मैं सर्वोदय श्रमदान आन्दोलन के मुख्यालय गया, जो श्रीलंका के लोगों की सबसे बड़ी संस्था है। सर्वोदय जिसे औपचारिक रूप से 'लंका जाति का सर्वोदय श्रमदान संगम्य' के नाम से जाना जाता है, को कुछ बौद्ध और गाँधीवादी सुसंगत दार्शनिक सिद्धान्तों पर विकसित किया गया है। यह लगभग पिछले 50 साल से कार्य कर रहा है। सर्वोदय श्रमदान आन्दोलन के संस्थापक डॉ. ए.टी. अरियारत्ने को ग्राम्य विकास और शान्ति कार्यों के लिए 1992 का निवानो शान्ति पुरस्कार और 1996 का गाँधी शान्ति पुरस्कार भी दिया गया।

23 जनवरी, 2012 को मैं जाफना हिन्दू महाविद्यालय गया। आध्यात्मिक पुनरुत्थान के मद्देनज़र 1890 में श्रीला श्री अरुमुगा नवलर के अथक प्रयासों से इसकी स्थापना हुई थी। इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य था हिन्दू वातावरण में अंग्रेजी माध्यम में शिक्षा देना, क्योंकि उस समय के सभी अंग्रेजी माध्यम के विद्यालय इसाई मिशनरियों के थे। मैंने प्रार्थना कक्ष की दीवार पर स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधी के साथ अपनी तस्वीर लगी देखी। जब मैंने उन तस्वीरों के परस्पर सम्बन्ध के बारे में पूछा तो मुझे बताया गया कि स्वामी विवेकानन्द 24 जनवरी, 1897 को और महात्मा गाँधी 27 नवम्बर, 1927 को जाफना हिन्दू महाविद्यालय आये थे और मेरे वहाँ जाने को तीन गुना आशीर्वाद समझा गया था। उस दिन मेरे मन में यह विचार आया कि अच्छा होता यदि प्रमुख स्वामीजी इस महान संस्थान को अपना आशीर्वाद देने मेरे साथ आते।

जाफना हिन्दू महाविद्यालय जैसे सभी विभिन्न मतों के शिक्षण संस्थानों का आधार संयुक्त रूप से अकादमिक और आध्यात्मिक शिक्षा देना रहा है। उनकी शिक्षा नैतिक शिक्षा पर जोर देती है क्योंकि नैतिकता के बिना आध्यात्मिकता का अस्तित्व नहीं हो सकता। युवाओं के विकास के लिए नैतिक शिक्षा अनिवार्य है क्योंकि मनुष्य स्वाभाविक रूप से एक नैतिक जीव है; उसके कई गुण सिर्फ़ नैतिकता के कारण ही हैं। नैतिकता के बिना मनुष्य को गम्भीर समस्याओं का

सामना करना पड़ता है, ख़ासकर सामाजिक दायरे में, और इस तरह बिना नैतिकता के वह देर तक रहने वाली ख़ुशी नहीं प्राप्त कर सकता।

एक मनुष्य तब तक सच्चे अर्थों में मनुष्य नहीं हो सकता जब तक कि उसे नैतिकता की सीमाएँ न पता हों और वह उनका पालन न करे। क्योंकि नैतिकता की समझ होना ही वह गुण है जो मनुष्य को बाकी जानवरों से अलग करता है। सिर्फ़ नैतिकता के द्वारा ही हम मानवता और अध्यात्म को समझ सकते हैं। पर मनुष्य के स्वाभाविक नैतिक स्वभाव के साथ-साथ अन्य भौतिक आवश्यकताएँ जैसे खाना, सोना व अन्य ज़रूरी इच्छाएँ भी मानव स्वाभाव का महत्वपूर्ण अंग हैं। क्योंकि मनुष्य एक भौतिक जगत का प्राणी है तो भौतिक आवश्यकताओं की तरफ उसका झुकाव भी अधिक है। और जब उसकी भौतिक, नैतिक और आध्यात्मिक इच्छाओं में टकराव की स्थिति आती है, वह अपने-आपको दुविधा में पाता है। उस समय नैतिक और आध्यात्मिक रास्ते को चुनना अधिक दुष्कर लगने लगता है। इसलिए यदि मनुष्य की नैतिक शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया जायेगा तो शिक्षा अपने उद्देश्य से भटक जायेगी और इस तरह नैतिक मूल्यों के लगातार टकराव के कारण मनुष्य का पाशविक रूप ही उभरकर सामने आयेगा। नैतिक शिक्षा देना आसान नहीं है। नैतिक शिक्षा का उद्देश्य लोगों को सलाह बाँटने जैसे सतही उपायों से प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसकी आधारशिला मज़बूत होनी चाहिए। यह शर्म की बात है कि नैतिक मूल्य हमारे समाज के लिए स्वाभाविक नहीं हैं। जबकि हर कोई नैतिक मूल्यों की पैरवी करता नज़र आता है, यह सच है कि हमारा समय नैतिकता के पतन का युग है।

यदि हम इतिहास में दर्ज़ उन सभी समाजों का हश्र देखें जहाँ नैतिक मूल्यों को दरकिनार किया गया था, तो यह साफ़ हो जाता है कि नैतिक शिक्षा सामाजिक समृद्धि के महत्वपूर्ण स्तम्भों में से एक है। इसलिए परिवारों को अपने बच्चों की शिक्षा के बारे में सोचते वक़्त नैतिक शिक्षा पर लापरवाह रवैया नहीं अपनाना चाहिए क्योंकि शिक्षा का अर्थ सिर्फ़ अकादमिक उपलब्धियों तक ही सीमित नहीं है। हो सकता है किसी ने ज्ञान और तकनीक में महारत हासिल की हो पर सिर्फ़ इतने भर से वह सच्चे अर्थों में मनुष्य नहीं हो सकता। मानवता का मूल्य नैतिक आदर्शों से ही मापा जा सकता है। वे परिवार जो अपने बच्चों को नैतिक शिक्षा देना ज़रूरी

नहीं समझते वे अपने सबसे बड़े कर्तव्य को नज़रअन्दाज़ कर रहे होते हैं। बच्चों को नैतिक शिक्षा देना पुण्य का काम समझा जाना चाहिए।

सबसे बेहतर नैतिक शिक्षा नैतिक व्यवहार से दी जा सकती है। इसका अर्थ है कि माता-पिताओं को अपने बच्चों के साथ वैसा ही नैतिकतापूर्ण व्यवहार करना चाहिए, जो वे अपने बच्चों से चाहते हैं, ताकि वे नैतिक मूल्यों के बीज उनके मस्तिष्कों में बो सकें। वह बच्चे, जो अध्यात्म और नैतिकता के वातावरण में बड़े होते हैं वे धर्म के प्रति संवेदनशील होते हैं। मुख्तसर यह कि जन्म से ही बच्चों में नैतिक मूल्यों के प्रति संवेदनशीलता होती है, इसलिए यदि उन्हें प्रेरणा दी जाये तो उनमें धर्म के प्रति स्वाभाविक झुकाव पैदा हो जाता है।

इसके उलट यदि एक पिता या माता बच्चों की समस्याओं को आक्रामक तरीके से या गुस्से में सुलझाते हैं, तो धीरे-धीरे बच्चे भी ऐसे व्यवहार के आदी होते जायेंगे। वे बच्चे विद्यालय में भी अपने सहपाठियों और बड़ों के साथ लड़ाई-झगड़े की ओर उन्मुख रहेंगे; वे चिड़चिड़े और अनियन्त्रित हो जायेंगे, जिससे न सिर्फ़ उन्हें बल्कि उनके माता-पिता को भी परेशानियाँ होंगी। एक बार ऐसा होने के बाद उनकी आदतों और व्यवहार को सुधारना बहुत ही मुश्किल होगा। माता-पिता को समझना चाहिए कि अपने बच्चों के सामने गलत उदहारण रखना, अपने स्वयं के पापों का बोझ अपने बच्चों पर लादने जैसा है।

यदि परिवार में ईमानदारी, आपसी समझ और सुलझा हुआ व्यवहार देखने को मिलेगा, घर की समस्याएँ यदि सहिष्णुता और खुले दिमाग से सुलझाई जायेंगी, तो बच्चे भी वही सीखेंगे। पर यदि घर में पीठ पीछे बुराई की जाती होगी, तो हम बच्चों से ऐसा न करने की अपेक्षा कैसे रख सकते हैं। हमारे शब्दों से कहीं ज़्यादा हमारा बरताव बच्चों पर असर डालता है। यदि बच्चे अपने माता-पिता को पीठ पीछे किसी की बुराई करते नहीं सुनेंगे तो शायद ही कभी वे स्वयं ऐसा करते पाये जायेंगे। अन्य नकारात्मक चीजों जैसे इर्ष्या करने या झूठ बोलने पर भी यही बात लागू होती है। बच्चे उन्हीं चीजों का अनुकरण करते हैं जो वे अपने घरों में देखते हैं। इसलिए यदि हमें बच्चों की नैतिक शिक्षा को वाकई महत्व देना है तो हमें पहले अपनी नैतिक शिक्षा को महत्व देना होगा।

मेरी माँ ने एक दफ़ा मुझे बताया था कि एक दिन एक माँ ने पैगम्बर मोहम्मद साहब से पूछा कि वे उसके छोटे बच्चे से कहें कि वह अधिक खजूर न खाया करे।

पैगम्बर ने उस महिला को अपने बच्चे के साथ अगले दिन आने को कहा। अगले दिन जब वह महिला अपने बच्चे के साथ पैगम्बर के पास आयी तो उन्होंने बच्चे को सलाह दी कि वह अधिक खजूर न खाये। तब उस महिला ने पैगम्बर से पूछा कि उन्होंने एक दिन पहले ही बच्चे को सलाह क्यों नहीं दी। उन्होंने बताया कि उस दिन उन्होंने स्वयं खजूर खाये थे। पैगम्बर वह उपदेश कभी नहीं देते थे, जिसका वह स्वयं अभ्यास नहीं करते। इसलिए "जो आप उपदेश देते हैं उसका अभ्यास भी करें" याद रखने लायक उक्ति है। अगर माता-पिता जो बच्चों से करने को कहते हैं वह खुद नहीं करते हैं तो बच्चे उनमें विश्वास खो देते हैं, उनकी सलाह को दिल से नहीं स्वीकारते। इससे बच्चे दिखावा करना सीखने लगते हैं और उनमें एक से अधिक व्यक्तित्व विकसित होने लगते हैं जो असल में किसी भी व्यक्तित्व के न होने की स्थिति है। हमें उनकी नैतिक शिक्षा को लेकर हमेशा सजग रहना चाहिए क्योंकि बच्चे जो सुनते हैं उसकी तुलना में उस पर ज़्यादा ध्यान देते हैं जो वे देखते हैं। इसलिए जो वे सुनते हैं और जो वे देखते हैं, इन दोनों में सामंजस्य बिठाना होगा, ताकि उन्हें मानसिक भ्रम से दूर रखा जा सके। अच्छी नैतिकता मनुष्य की दूसरी प्रकृति हो जाती है यदि वह नैतिक शिक्षा से मिली सीख को अमल में लाता है। माता-पिता को बचपन से ही अपने बच्चों में अच्छी आदतें डालने की कोशिश करनी चाहिएँ क्योंकि बचपन की आदतें अन्त तक बनी रहती हैं।

प्राथमिक विद्यालय की शिक्षा से पहले की अवधि में सिर्फ़ अच्छी आदतें सिखाना ही नैतिक शिक्षा हो सकती है क्योंकि उस अवधि तक बच्चे में नैतिक नियमों को समझ पाने योग्य मानसिक संकाय विकसित नहीं हुए होते। पर प्राथमिक विद्यालय में सीधे ही नैतिक शिक्षा दी जा सकती है। बढ़ते बच्चों को लगातार कुछ अच्छे कार्य करने के अवसर दिये जाने चाहिएँ ताकि अच्छी आदतें उनमें ठीक से पनप सकें। ये अच्छी आदतें भविष्य में उनके लिए बड़ी सम्पत्ति होंगी। छात्रों के नैतिक मूल्यों को कैसे प्रभावित किया जाये और उन्हें कब और कैसे नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ाया जाये, यह एक महत्वपूर्ण सवाल है। यह सवाल उन स्कूलों के लिए और भी गम्भीर और महत्वपूर्ण हैं जो अपने छात्रों की व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं से जूझ रहे हैं। कभी-कभी हम आधुनिक समय के प्रभाव या माता-पिता द्वारा सही देखभाल न किये जाने को दोष दे सकते हैं। या फिर यह अशान्त पारिवारिक वातावरण या बदलते समाज का एक प्रभाव हो सकता है। दोष किसी का भी हो, यह स्पष्ट है कि एक अच्छी नैतिक शिक्षा इन समस्याओं से बचा सकती है।

प्रमुख स्वामीजी ने नैतिक शिक्षा को बच्चों की महत्वपूर्ण आवश्यकता बताया है। उन्होंने योगी महाराज द्वारा शुरू किये गये बच्चों के क्रिया-कलापों को आगे जारी रखा है। वे व्यक्तिगत अनुशासन, नैतिक शिक्षा और आध्यात्मिक परम्परा के माध्यम से बच्चों के विकास में न सिर्फ़ स्वयं विशेष रुचि लेते हुए इसके लिए समय निकालते हैं बल्कि वे स्वयंसेवकों को भी प्रोत्साहित करते हैं। शिशुओं से लेकर कैशोर्य से पूर्व की अवस्था वाले 250,000 से अधिक बच्चों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए बीएपीएस दुनिया भर में प्रति सप्ताह 6,800 से अधिक सभाएँ आयोजित करता है। अपने निजी जीवन में उत्कृष्टता प्राप्त करने के साथ-साथ यह बच्चे पूरे उत्साह और गर्व के साथ सामाजिक परियोजनाओं में भी अपना योगदान देते हैं।

बीएपीएस के कई केन्द्रों पर बच्चे कागज की रीसाइक्लिंग की परियोजना में भाग लेते हैं। जैसा कि पहले बताया गया, इंग्लैंड में बीएपीएस के बच्चे एक रिकार्ड तोड़ देने वाली अलुमिनियम कैन रीसाइक्लिंग परियोजना में शामिल थे। पर शायद बच्चों द्वारा की गयी सबसे उल्लेखनीय पहल है भारत में बीएपीएस के बच्चों द्वारा चलाया गया नशा मुक्ति अभियान। मैंने स्वयं उन साधुओं और बच्चों को पाँच जुलाई, 2007 को राष्ट्रपति भवन में बुलाकर सम्मानित किया जिन्होंने इस अविश्वसनीय रूप से प्रभावी कार्यक्रम की योजना बनाई, प्रबन्धन और संचालन किया। इस कार्यक्रम के आँकड़े चौंका देने वाले थे, और इसका प्रभाव लम्बे समय तक रहने वाला। स्कूल की छुट्टियों के दौरान कुछ चयनित लड़के-लड़कियों को व्यसनों के दुष्प्रभावों के बारे में समझाया गया था। वे कैंसर रोगियों से मिले, उन्हें मित्रों, सम्बन्धियों, पड़ोसियों और आम जनता से मिलने के लिए प्रेरित किया गया था। मात्र बीस दिनों में 23,000 बीएपीएस के बच्चे और 5000 नेतृत्वकर्ता 21 लाख से ज़्यादा नशेड़ियों से मिले, जिनमें से 630,000 ने तम्बाकू, शराब, ड्रग्स और जुए जैसी बुराइयों को छोड़ने की प्रतिज्ञा की। इतने लोगों के बुरी आदतें छोड़ने से बचे पैसे को यदि जोड़ा जाये तो यह योग 344 करोड़ से भी अधिक बैठता है, जबकि इतने लोगों को परेशानियों से बचा लेना अपने-आप में अमूल्य है। इस नशामुक्ति अभियान ने मेरे इस विचार को पुनर्जीवित कर दिया कि सशक्तिकरण से देश का भविष्य बेहतर हो सकता है।

कार्यक्रम से जुड़े बच्चों से जब मैंने पूछा, "प्रमुख स्वामी जी की तरह महान कैसे बना जा सकता है?" बच्चों को उत्तर नहीं सूझा, वे एक-दूसरे की तरफ देखने लगे। मैं मुस्कुराया और मैंने उनसे मेरे बाद दोहराने के लिए कहा, "अगर मेरे पास सुन्दर मस्तिष्क है तो मेरे पास सुन्दर विचार होंगे, अगर मेरे पास सुन्दर विचार हैं तो मेरे पास सुन्दर जीवन होगा, यदि मेरे पास सुन्दर जीवन है तो मैं प्रमुख स्वामी जी जैसी महान आत्मा बन जाऊँगा।" बच्चों की आगे परीक्षा लेते हुए मैंने पूछा, "लोगों को उनके व्यसन छोड़ने के लिए मनाना मुश्किल है। यदि कोई अपना व्यसन छोड़ने से इनकार कर देता है तो आप क्या करते हो?" बच्चों ने समझाया, "राष्ट्रपति सर, हमने उन लोगों को बुकलेट में छपी तस्वीरें दिखायीं और उन्हें वैज्ञानिक तर्क देकर उनके व्यसन के दुष्परिणामों के बारे में समझाने की कोशिश की।" मैं बच्चों के प्रदर्शन और विश्वास से प्रभावित था। मैंने आगे पूछा, "लोग अपने व्यसनों को दोबारा क्यों अपना लेते हैं? जब एक बार आप उनकी आदत छुड़वा देते हैं तब वे क्यों वापस उस आदत को अपना लेते हैं?" बच्चों ने जवाब देने की कोशिश की और अन्त में हार मानकर मुझे ही कारण बताने को कहा। मैंने एक कहानी सुनायी। "याद रखना कि सभी के कन्धों पर दो पंछी बैठे होते हैं। दायें कन्धे पर फ़रिश्ता और बाएँ कन्धे पर शैतान। जब शैतान जीत जाता है तो लोग अपने व्यसन को दोबारा अपना लेते हैं और जब फ़रिश्ता जीतता है तो लोग अपनी बुरी आदत से आज़ाद हो जाते हैं। तो तुम फ़रिश्ते को कैसे जिताओगे?" बीएपीएस के बच्चों ने जवाबों की झड़ी लगा दी। मेहनत से... आत्मविश्वास से... अच्छे विचारों से... प्रार्थना से... तब उन्होंने मुझसे पुछा, " कृपया आप बतायें कि हम फ़रिश्ते को कैसी जिता सकते हैं?" मैंने समझाया, "याद रखो, हर बार जब तुम एक अच्छा काम करते हो, फ़रिश्ता जीतता है और जब तुम बुरे काम करने लगते हो शैतान जीतता है। नज़रन्दाज करने से शैतान आज़ाद हो जाता है। इससे उसे शक्ति मिलती है। ज्ञान तुम्हें एक बेहतर और बड़ा इंसान बनाता है। शैतान की शक्तियाँ इंसान को शराब, ड्रग्स और बाकी बुराइयों तक ले जाती हैं। और फ़रिश्ते की शक्तियाँ बुरी आदतों से दूर ले जाकर, सत्य, अहिंसा और प्रेम जैसी अन्य अच्छाइयों से भरा जीवन देती हैं।

तुम बच्चे अगर लोगों को उनकी बुरी आदतों से आज़ाद करा पाये तो वह इसलिए कि तुम उन्हें यह विश्वास दिलाने में कामयाब रहे थे कि फ़रिश्ते की शक्तियों को बढ़ाकर शैतानी ताकतों को कम किया जा सकता है। तुम लोगों ने उनकी दैवीय

शक्तियाँ बढ़ाकर उन्हें अपनी बुरी आदतों के नशे से छुटकारा पाने की ताकत दी थी।"

मैंने बच्चों से एक बार फिर मेरे पीछे दोहराने को कहा : "विश्वास से रचनात्मकता आती है; रचनात्मकता से ज्ञान मिलता है; ज्ञान से विचार करने की क्षमता बढ़ती है; और विचार व्यक्ति को महान बनाते हैं।" मैंने बच्चों को एक बार फिर बधाई दी, "तुम सभी बच्चों ने बहुत अच्छा काम किया है। इतने सारे लोगों को नशे से मुक्ति दिलाकर आपने क्या सीखा?" बच्चों ने जवाब दिया, "हम अपने जीवन से व्यसनों को दूर रखेंगे। हम अपने माता-पिता और सम्बन्धियों को भी नशे से दूर रखेंगे। और हम अपने दोस्तों व अन्य लोगों को भी नशे और व्यसनों से आज़ाद करेंगे।" मैं उनके जवाब से बहुत खुश था और फिर हमने एक सामूहिक तस्वीर खिंचवाई। मैंने उनके साथ एक रहस्य साझा किया, "आओ मैं तुम्हें एक रहस्य की बात बताता हूँ, हम सभी को मुस्कुराना चाहिए, क्योंकि हर बार जब हम मुस्कुराते हैं, फ़रिश्ते की जीत होती है और हर बार जब हम दुखी होते हैं, शैतान जीत जाता है। इसलिए हमें हमेशा मुस्कुराते रहना चाहिए और दूसरों के चेहरों पर भी मुस्कान लानी चाहिए। और तुम बच्चों को तो हमेशा खुश रहना चाहिए क्योंकि तुम्हारे पास फ़रिश्ते और शैतान से भी ज़्यादा शक्तियाँ हैं : प्रमुख स्वामीजी की शक्तियाँ; उनका आशीर्वाद हमेशा तुम्हारे और हम सबके साथ है। इसलिए हमेशा मुस्कुराते रहो।"

उसके बाद मैंने साधुओं की ओर मुड़कर उन्हें अपना हार्दिक सन्देश दिया : "कृपया प्रमुख स्वामीजी को कहियेगा कि वे हम लोगों के लिए बेहद उत्कृष्ट कार्य कर रहे हैं। उनका मस्तिष्क और हृदय बहुत सुन्दर है। उन्हें कहियेगा कि वे मुझे अपना आशीर्वाद दें।"

विद्यामन्दिरों की स्थापना करके प्रमुख स्वामीजी ने बच्चों की शिक्षा का मूल्य बढ़ा दिया : यह मूल्य आधारित शिक्षा देने वाले अकादमिक विद्यालय हैं। बीएपीएस ने 100 से अधिक विद्यालय, छात्रावास, शोध केन्द्र व अन्य संस्थाएँ बनायी और संचालित की हैं। मुझे याद है कि एक बार 28 जून 2006 को अहमदाबाद के पास रायसन में खुले ऐसे ही एक अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालय, बीएपीएस स्वामीनारायण विद्यामन्दिर के उद्घाटन पर मैंने स्वयं एक हस्तलिखित सन्देश दिया था।

Dear Students of BAPS School,

Courage.

Courage to Think different,

Courage to invent,

Courage to discover the impossible,

Courage to Combat the problems and Succeed,

Are the Unique qualities of youth.

I, the youth of my nation,

Will work and work with Courage

For prosperity of my nation.

26-6-06

Greetings
A.P.J. Abdul Kalam

बीएपीएस विद्यालय के प्रिय छात्रों,

साहस

अलग सोचने का साहस,

नये आविष्कार का साहस,

असम्भव को खोजने का साहस,

समस्याओं से लड़कर जीतने का साहस,

युवावस्था की विशेषताएँ हैं।

मैं, अपने देश का युवा, अपने देश की समृधि के लिए साहस के साथ काम करूँगा।

26-06-06

शुभकामनाएँ

ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

और इस अवसर पर, दुनिया भर के बच्चों के लिए प्रमुख स्वामीजी ने ये महान शब्द लिखे :

HIS DIVINE HOLINESS
PRAMUKH SWAMI MAHARAJ
(SWAMI NARAYANSWARUPDAS)



વહાલા વિદ્યાર્થીઓ

જો ભણ્યુ તો વાંચ્યુ નહિ
વાંચ્યુ તો વિચાર્યું નહિ
ને વિચાર્યું ~~નહિ~~ તો જીવનમાં
ઉતાર્યું નહિ
તો ભણ્યું શા કામનું?
માટે પરમાત્માની રોજ પ્રાર્થના
કરીને પ્રામાણિકપણે પુરુષાર્થ
કરવો. જીવનમાં ચારિત્ર્યને દૃઢ કરવું.
માતપિતા વડીલોનું સન્માન કરી દેશની
સેવા કરવી.

શા. નારાયણસ્વરૂપદાસના
આશીર્વાદ સહ
જય સ્વામિનારાયણ
29-9-2009
રાયસણ-અમદાવાદ



B.A.P.S. Swaminarayan Sanstha, Shahibaug Road, Ahmedabad - 380 004. Gujarat. India
e-mail: swamishri@baps.org • www.baps.org

"प्यारे बच्चों,
जो लिखा गया है, यदि पढ़ा नहीं जायेगा,
जो पढ़ा गया है, यदि समझा नहीं जायेगा,
जो समझा गया है, यदि जीवन में उतारा नहीं जायेगा,
तो लिखने का अर्थ ही क्या है?
इसलिए, प्रतिदिन ईश्वर से प्रार्थना करो और ईमानदारी से मेहनत करो।
अपने जीवन में अच्छे चरित्र को मज़बूत बनाओ। अपने माता-पिता,
समाज और देश की सेवा करो।"

जून 15, 2012 को पेसमेकर लगवाने के लिए प्रमुख स्वामीजी को एक चिकित्सकीय प्रक्रिया से गुज़रना था। मैंने अस्पताल में स्वामीजी को फ़ोन किया और कहा, "ईश्वर आपको आशीर्वाद दे, मैं आपके अच्छे स्वास्थ्य के लिए ईश्वर से प्रार्थना करूँगा।" जैसे मेरे डर को ख़त्म करने के लिए स्वामीजी ने स्वयं मुझे अपने स्वास्थ्य के बारे में जानकारी दी। प्रमुख स्वामी जी के स्वास्थ्य व अन्य कारणों के चलते उनका जाफना हिन्दू महाविद्यालय जाना सम्भव न हो सका। बाद में जब उन्हें इसकी जानकारी मिली तब उन्होंने श्रीलंका के लोगों की शान्ति और समृद्धि के लिए विशेष प्रार्थनाएँ कीं।

22 दिसम्बर, 2012 को मैंने कोलकाता में मानवता और अध्यात्म की शक्ति पर आयोजित एक विश्व सम्मलेन का उद्घाटन किया। मैंने वहाँ विश्व के प्रबुद्ध नागरिकों के जन्म के लिए चार विशेषताओं वाला, धर्म पर आधारित एक रास्ता प्रस्तुत करने का निर्णय लिया। मैंने प्रमुख स्वामी जी से सत्पुरुष की चार विशेषताएँ जानी थीं, जो कुछ इस प्रकार हैं : सत्पुरुष वह है जो मस्तिस्क और ज्ञानेन्द्रियों के कार्य पर नियन्त्रण रखता है; वह जो ईश्वर सम्बन्धित कार्य करता है; वह जो सतर्कता के साथ निष्काम (सांसारिक इच्छाओं से ऊपर उठना), निर्लोभ (लालच से ऊपर उठना), निस्वाद (स्वाद से ऊपर उठना), निस्नेह (सांसारिक मोह से ऊपर उठना) और निर्मन (अहंकार से ऊपर उठना) ऐसा करने वाला तन, मन और बुद्धि से पूरी तरह ईश्वर में लीन रहता है।

पवित्र कुरान कहती है (सूरा अल राद, आयत 13:28) :

الَّذِينَ آمَنُوا وَتَطْمَئِنُّ قُلُوبُهُم بِذِكْرِ اللَّهِ ۗ أَلَا بِذِكْرِ اللَّهِ تَطْمَئِنُّ الْقُلُوبُ

अल्लाह की याद में सचमुच दिलों को सुकून मिलता है।

मैंने उस सम्मलेन में घोषित किया कि सत्पुरुष वह प्रबुद्ध नागरिक है जो अपने मन और बुद्धि का नियन्ता है, जो अपने सारे कार्य ईश्वर को ध्यान में रखकर करता है और जो नैतिक मूल्यों का सतर्कता से पालन करता है। लोगों को हम में ईश्वर का अंश दिखना चाहिए। हम जो कुछ करते हैं, बोलते हैं, देखते हैं, यहाँ तक कि जो सोचते हैं उसमें ईश्वर और उसका रास्ता दिखना चाहिए।

16

दान और क्षमा दिव्य गुण हैं

'कमज़ोर कभी क्षमा नहीं कर सकता। क्षमा शक्तिशालियों का गुण है।'

—महात्मा गाँधी

नवम्बर 2012 में मैं चाइना अकैडमी ऑफ स्पेस टेक्नॉलजी (सीएएसटी) के दौरे पर गया था। इस अकादमी की स्थापना 1968 में हुई थी। यह चीन का सबसे महत्वपूर्ण अन्तरिक्ष यान विकास और उत्पादन का केन्द्र है। सीएएसटी ने 24 अप्रैल 1970 को चीन का पहला उपग्रह डोंग फांग हॉन्ग (रेड इस्ट 1) प्रक्षेपित किया था। भारत ने अपना पहला रोहिणी उपग्रह 18 जुलाई 1980 को प्रक्षेपित किया था। बीजींग फोरम में मैं बहुत सारे चीनी विद्वानों से मिला। बीजींग फोरम चीन सरकार समर्थित एक बौद्धिक निकाय है। पेकिंग विश्वविद्यालय के अध्यक्ष प्रो झू शान्लू ने मुझे उनके संस्थान में साल में एक बार अपने चुने हुए विषय पढ़ाने का आमन्त्रण दिया। और कहा कि मैं जब तक जी चाहे यहाँ रुक सकता हूँ। यह विषय विज्ञान और तकनीक या मानविकी कुछ भी हो सकता है।

चीनी संस्कृति दुनिया की सबसे पुरानी संस्कृतियों में से एक है। इसके ज्यादातर सामाजिक मूल्य कन्फ्यूशियनिज़्म और ताओवाद से निकले हैं। यहाँ पुनर्जन्म की संकल्पना को बहुत मान्यता है और किसी के व्यवहार को इस जीवन, पारलौकिक जीवन और अगले जन्म से जोड़कर देखा जाता है। पवित्रता में विश्वास के साथ लोगों का शैतान के अस्तित्व पर भी भरोसा है। बुजुर्गों, बड़ों, संयुक्त परिवार और खासकर अभिभावकों का सम्मान किया जाता है, उनकी बात मानी

जाती है और उनकी देखभाल की जाती है। यह सम्मान उनकी मौत के बाद भी बना रहता है। चीनी लोग तीन लोकों में विश्वास करते हैं—स्वर्ग, जीवित और मृत—इन तीनों का अस्तित्व साथ-साथ रहता है। स्वर्ग वह जगह है, जहाँ सन्त या पवित्र आत्माएँ रहती हैं और नर्क अपराधी किस्म के मृतकों को मिलता है।

इस सन्दर्भ में, मुझे प्रमुख स्वामीजी और सार्वभौमिक अच्छाई पर उनके सन्देश याद आये, जहाँ हरेक को स्वर्ग तक ऊँचा उठने का समान अवसर मिले।

30 जुलाई 2013 को मैं आन्ध्र महिला सभा भी गया था, यह देश का एक अग्रणी महिला संस्थान है जिसकी चालीस से अधिक इकाईयाँ हैं। यह इकाईयाँ शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाओं, सशक्तिकरण और बुजुर्गों की देखरेख—खासकर, बुजुर्ग महिलाओं की देखभाल का काम करती हैं। यह संस्थान महिलाओं और बच्चों को शिक्षा और प्रशिक्षण मुहैया करवाता है और उन्हें राष्ट्र निर्माण के काम में अपनी सेवा देने के योग्य बनाता है। यह उन तक पहुँचता है, जरूरतमन्दों को मुफ्त चिकित्सा प्रदान करता है, और अशक्त बच्चों के पुनर्वास और सशक्तीकरण में यह संस्थान समर्पित है। सभा महिलाओं में साक्षरता का प्रसार करती है और उन्हें वैवाहिक और सम्पत्ति के मामलों में कानूनी सलाह भी देती है। यह शिक्षकों के लिए प्रशिक्षकों और प्रशिक्षण की व्यवस्था करती है, और जनसंचार के विभिन्न माध्यमों द्वारा अपनी बात लोगों तक पहुँचाती है। साथ ही, यह जरूरतमन्द बुजुर्गों को सस्ते दर पर आश्रय और भोजन भी मुहैया कराती है।

इस सभा की जड़ें सौ साल से भी अधिक पुरानी है, हालाँकि खुद सभा इतनी पुरानी नहीं है। हैदराबाद रियासत के लोगों में उन्नीसवीं सदी के अन्त में राजनीतिक और सांस्कृतिक जागरूकता आयी थी। इस रियासत की बहुसंख्यक आबादी की संस्कृति और भाषा को उस वक्त के निज़ाम ने दबा रखा था। इसलिए, शिक्षा और सांस्कृतिक विकास की प्राकृतिक इच्छा—और अपनी मातृभाषा के विकास और प्रसार की भी इच्छा—को निज़ामशाही के खिलाफ संघर्ष से जुड़ना ही था।

आन्ध्र महिला सभा की स्थापना दुर्गाबाई देशमुख ने की थी। उनको 'भारत में समाजसेवा की जननी' कहा जाता है। वह सादा जीवन, उच्च विचारों वाली एक महिला थीं—एक स्वतन्त्रता सेनानी, वकील, सामाजिक कार्यकर्ता, और राजनीतिज्ञ—वह भारत की संविधान सभा की सदस्य भी थीं और बाद में योजना आयोग की सदस्य भी रहीं। उनका विवाह सी.डी. देशमुख से हुआ था जो भारतीय

रिज़र्व बैंक के पहले भारतीय गवर्नर थे। वह साल 1950-56 के बीच केन्द्रीय कैबिनेट में वित्त मन्त्री रहे। समाज की जरूरतों को देखकर, दुर्गाबाई ने कई कामयाब संस्थानों की नींव रखी, और इसके लिए महान आत्म-बलिदान और दृष्टिकोण दिखाया। जब उनका दुनियावी सफ़र 1981 में खत्म हुआ, तब तक आन्ध्र महिला सभा को उन्होंने महान मूल्यों वाले और बेशकीमती विरासत वाले एक संस्थान में तब्दील कर दिया था, जिसकी तारीफ हर कोई करता था।

मैंने आन्ध्र महिला सभा के इस दौरे में स्त्रीत्व की दिव्यता को रेखांकित करने की कोशिश की। मैंने कहा, 'पृथ्वी पर, स्त्रीत्व ईश्वर का उपहार है। मैं मनुष्य के जन्म की कहानी कहना चाहता हूँ। ईश्वर अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना करना चाहते थे। वह लाखों वर्षों तक काम करते रहे, अपनी रचना के डिजाइन और आकृति पर काम करते रहे। वह अपनी बनाई आकृति को देखते रहे, उन्होंने उसमें बार-बार सुधार किये, और अन्त में इसे जीवन देने का फैसला किया। उन्होंने आकाशगंगाओं की तरफ देखा, महासागरों की तरफ देखा और अपनी रचना पेश की—पुरुष। जैसे ही मनुष्य को जीवन मिला, दो चीजें हुईं। अव्वल, उसने अपनी आँखें खोलीं और मुस्कुराया। ईश्वर प्रसन्न थे। दोयम, उसने अपना मुँह खोला और बोला, "परमपिता, धन्यवाद"। ईश्वर बहुत प्रसन्न हो गये। वह अपनी रचना को देखकर इतने प्रमुदित थे और उन्हें लगा कि उनकी रचना ने दो सही चीजें की हैं।" पुरुषों में यह सहज आभार महिलाओं को हमारी दुनिया में लाने के लिए भी होना चाहिए क्योंकि महिलाओं ने हमारी दुनिया को कई सौगाते दी हैं—हमें जीवन देने से लेकर, अपने परिवारों के लिए काम करने तक और समाज के हर तानेबाने को बुनने तक। समसामयिक भारत में महिलाओं के सामने आ रही चुनौतियों के मद्देनज़र इतिहास के किसी भी बीते वक्त की बनिस्बत यह बात आज कहीं अधिक प्रासंगिक है।

भारत में महिलाओं के समक्ष कौन-सी चुनौतियाँ सबसे अहम हैं? आन्ध्र महिला सभा में इस पर अच्छी चर्चा हुई थी। जो बात निकलकर सामने आयी वह थी महिलाओं की दोहरी भूमिका की : पैसे कमाना और साथ ही गृहिणी की अपनी पारम्परिक भूमिका का निर्वाह भी करना। तो इसका समाधान क्या है? सभा की एक गुजराती सदस्य ने कहा कि प्रमुख स्वामीजी ने गुजरात में इस समस्या का बहुत प्रभावी समाधान निकाला है। वहाँ उन्होंने नियमित रूप से घर सभाएँ गठित की हैं, और आन्ध्र महिला सभा को भी वह मॉडल अपनाना चाहिए। बाद में, जब मैं

अक्षरधाम के साधुओं के एक प्रतिनिधिमण्डल से मिला, मैंने उनसे अनुरोध किया कि वे लोग मुझे प्रमुख स्वामीजी की घर सभाओं के बारे में जानकारी दें।

गृहिणियों का एक खास किस्म का करिअर होता है। बाकी के करिअर का सिर्फ एक मकसद होता है, वह यही कि उसके ज़रिए इस खास किस्म के करिअर को समर्थन दिया जा सके। परिवार के सदस्यों के बीच झगड़े का प्रबन्धन ही गृहिणियों के केन्द्र में होता है। लोग कितने भी बुद्धिमान या मेधावी क्यों न हों, घर पर झगड़े होंगे ही, पिता और बेटे के बीच, पति और पत्नी के बीच, सास और बहू के बीच और भाई-बहनों के बीच।

हर कोई चीज़ों को अपने तरीके से चाहता है। पारिवारिक झगड़ों का मूल कारण यही है। ऐसे झगड़ों को सिर्फ प्यार से ही निबटाया जा सकता है। युवा अमेरिकी लेखक जोनाथन सफरान फोअर ने अपने उपन्यास *एवरीथिंग इज इल्युमिनेटेड* में बड़ी खूबसूरती से लिखा है, 'एक दिन तुम मेरे लिए वह सब काम करोगे, जिससे तुम नफरत करते हो। परिवार का मतलब ही तो यही है।'[41]

हर झगड़े में अहं की भूमिका सबसे अधिक होती है—और खासकर घरेलू झगड़ों में। अगर किसी की गलती न भी हो, तो भी उसे क्षमा करना चाहिए और गलतियों को भूल जाना चाहिए। लोगों को धैर्य भी बनाये रखना चाहिए—धीरज, शान्ति और अपना स्तर बनाये रखना चाहिए—अन्यथा शान्ति नहीं होगी। प्रमुख स्वामीजी कहते हैं कि सिर्फ उचित समझ से ही खुशी मिल सकती है। यह ऐसी चीज है जिससे गरीब से गरीब आदमी को भी खुशी हासिल होगी, और इसके बिना अमीर से अमीर आदमी भी सहज नहीं होगा। तो, पारिवारिक समझ कब बढ़ती है? जब एक परिवार एक साथ खाना खाता है और एक साथ प्रार्थना करता है! प्रमुख स्वामीजी ने साहचर्य की इस भावना को घर सभा का नाम दिया है और इसे हर झगड़े का समाधान बताया है।

तकरीबन 7,00,000 पत्रों को प्रमुख स्वामीजी ने खुद पढ़ा है और उसके उत्तर दिये हैं, और उनके पास निजी और पारिवारिक मसलों की गहरी समझ है। एक बार, प्रमुख स्वामीजी अपने भक्तों की चिट्ठियों का जवाब दे रहे थे, जो हमेशा की तरह व्यक्तिगत और पारिवारिक समस्याओं से भरी हुई थीं। पास में बैठे किसी ने गौर किया कि स्वामीजी के पास अभी भी चिट्ठियों का एक बड़ा बण्डल पढ़ने और उत्तर देने के लिए बाकी था, उसने अपना हाथ बण्डल पर रख दिया और पूछा,

'स्वामीजी, इन समस्याओं को खत्म करने और ऐसी चिट्ठियों की संख्या कम करने के लिए क्या किया जा सकता है?' प्रमुख स्वामीजी ने बहुत व्यावहारिक उत्तर दिया, 'अगर हर परिवार एक साथ मिले, साथ खाये, और रोज साथ प्रार्थना करे, तो ऐसी समस्याएँ खड़ी नहीं होंगी।' यह शब्द बीएपीएस के सबसे महत्वपूर्ण और कामयाब शुरुआतों में से एक होकर फैले : घर सभाओं के रूप में। इस रोज़ के पारिवारिक मिलन में, घर के लोग प्रार्थना करते हैं, शास्त्र पढ़ते हैं, मूल्यों की चर्चा करते हैं और कोई मतभेद हो तो उसे सौहार्द्रपूर्ण तरीके से सुलझा लेते हैं।

प्रमुख स्वामीजी ने परिवार की एकता को बढ़ाने वाले पाँच सिद्धान्त प्रतिपादित किये : एक दूसरे से मिलिये, एक दूसरे की तारीफ कीजिये, अपने परिवार के सदस्यों की प्रतिभाओं और गुणों को पहचानिए और उसका सम्मान कीजिये, खासकर बच्चों की तारीफ करके उन्हें प्रोत्साहित कीजिये, एक दूसरे की मदद कीजिये, और सर्वोपरि रूप से क्षमा करना सीखिये। दूसरों की गलती और भूल-चूकों को माफ करना चाहिए। जब आप माफ करते हैं, तो आप अतीत को बदलते नहीं हैं—लेकिन निश्चय ही आप भविष्य को बदल रहे होते हैं। सच तो यही है कि जब तक आप कुछ चीजों को जाने नहीं देंगे—आप खुद को माफ करते हैं, आप स्थितियों को माफ करते हैं और आप महसूस करते हैं कि वह स्थितियाँ अब खत्म हो गयीं—तब तक आप आगे नहीं बढ़ सकते। आपको अपने सच्चे परिवार से बाँधने वाला बन्धन खून का नहीं होता, बल्कि एक दूसरे की जिन्दगी से मिलने वाला आनन्द और सम्मान होता है। आधुनिक दुनिया में, एक परिवार के सदस्य एक ही छत के नीचे शायद ही पलते हैं। परिवार तो दिलों से बनता है। परिवार तभी सिफ़र होता है जब दिलों के बन्धन टूट जाते हैं। अगर आप इन बन्धनों को काट देते हैं तो वे लोग आपके परिवार वाले नहीं रह जाते। अगर आप इन बन्धनों को बनाते हैं, तो वे लोग आपके परिवार होते हैं। और अगर आप इन बन्धनों से नफरत करते हैं, तो भी ये लोग आपके परिवार बने रहेंगे, क्योंकि आप जिन चीजों से नफरत करेंगे वह हमेशा आपके साथ बनी रहती हैं।

मैं साथ रहूँ न रहूँ
लेकिन जब होंगे काफी दूर
याद रखना, तुम रहोगे मेरे साथ
मेरे दिल की गहराईयों में

10 दिसम्बर 2013 को, मैं चेन्नई में था। मैंने प्रमुख स्वामीजी को फ़ोन किया और उनके तिराणवें जन्मदिन की शुभकामनाएँ दीं। वह सारंगपुर में विश्राम कर रहे थे। अगले दिन जब मैंने केन्द्रीय विद्यालय के छात्रों और शिक्षकों को केन्द्रीय विद्यालय संगठन के स्वर्ण जयन्ती समारोह के मौके पर सम्बोधित किया, मैंने उनको प्रमुख स्वामीजी के शानदार आध्यात्मिक नेतृत्व के बारे में बताया। मैंने उनसे कहा कि किस तरह स्वामीजी ने अपनी प्रेमपूर्ण दयालुता से मानव जीवन को बदला है। मैंने खासतौर पर सौराष्ट्र इलाके के कुकाड और ओदार्का गाँवों की सच्ची कहानियों का जिक्र किया था।

इन गाँवों के बीच सौ साल पुराना ज़मीन का विवाद चल रहा था। जो वक्त के साथ आसपास के चौवालीस गाँवों (कुकड का ग्यारह गाँव समर्थन कर रहे थे जबकि ओदार्का के समर्थन में तैंतीस गाँव थे) के बीच अन्तहीन अदावत और खूनी झगड़े में बदल गया था। हर अगली पीढ़ी के साथ, हिंसा ज्यादा तेज़ होती गयी क्योंकि दोनों पक्षों के लोग मारे जाने लगे थे, और उन्हीं गाँवों के बाहरी इलाकों में उनका दाह संस्कार किया गया था। घृणा इस कदर फैली हुई थी कि आपिया (पीने के पानी की मनाही) घोषित कर दिया गया था। गाँववालों ने अपने दुश्मनों के गाँवों के कुओं से पानी तक पीने से इनकार कर दिया था। दोनों पक्षों के लिए यह विवाद उनके विलुप्त होने का खतरा-सा बन गया था और दोनों पक्षों ने एक दूसरे का सम्पूर्ण बहिष्कार कर रखा था। एक के बाद एक शासकों ने 200 साल तक लगातार कोशिशें की—ब्रिटिश अधिकारियों ने, भावनगर के महाराजा कृष्णकुमार सिंहजी और गुजरात राज्य सरकार ने—सब नाकाम हो गये।

1980 के दशक में, प्रमुख स्वामीजी ने ओदार्का के रामसंग बापू के जीवन को बदल दिया। रामसंग दोनों अड़े हुए समुदायों के सबसे क्रूर सदस्यों में से एक था। इसका बुराई पर अच्छाई की जीत के लिए एक व्यापक प्रभाव पड़ा। प्रमुख स्वामीजी ने व्यक्तिगत तौर पर इलाके का दौरा किया और गाँव के मुखियों से मिले, उनको समझाया कि वे लोग अतीत से परे सोचें और भविष्य पर ध्यान केन्द्रित करें। 12 अप्रैल 1990 को, प्रमुख स्वामीजी ने लड़ रहे गाँवों के अड़ियल क्षत्रियों और उनके नेताओं को जमा किया। 200 साल में पहली बार, वे लोग बिना हथियारों के मिले और एक छत के नीचे बैठे। प्रमुख स्वामीजी ने गाँव के कुओं से पानी इकट्ठा किया और उसे एक पात्र में रखा। उन्होंने पूजा की और उसका प्रसाद ईश्वर को

चढ़ाया। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से हर नेता को पवित्र जल प्रसाद के रूप में दिया, और उनका कठोर आपिया संकल्प को तुड़वाया।

आखिरकार, उन्होंने हर किसी को इन्हीं शब्दों के साथ आशीष दिया, 'आज, आप लोग इस सदियों पुराने विवाद को खत्म करने साथ आये हैं। खुले दिल और दिमाग से इस विवाद का निपटारा हो गया है। दुश्मनी छोड़ना महान काम है। ज़मीन के छोटे टुकड़े के लिए बड़े झगड़े हुआ करते हैं। यह ज़ानते हुए भी हम इसे छोड़ते नहीं। यही लापरवाही है। एक सच्चा सन्त, "मैं और मेरा" की भावना का त्याग करता है और इसकी प्रतिस्थापना "हमारा" से करता है। यहाँ तक कि आपके पुरखे भी खुश होंगे। उनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी। जब हम एक होते हैं, उनकी आत्माओं को शान्ति मिलती है। आज का युग एकता का है। इसी से प्रगति होती है। सिर्फ भूल जाने और माफ करने से ही प्रगति होती है। आप सब एक दूसरे के पास आये हैं, और आप ईश्वर के नजदीक भी आये हैं।'

ऐसा पहली बार हुआ था जब क्षत्रियों ने एक दूसरे को मुस्कुराते, हँसते हुए और खुश देखा था। प्रमुख स्वामीजी ने अजातशत्रु की संकल्पना को जीवन दिया था—वह जिसका कोई शत्रु न हुआ हो।

मई 2014 में, मैं एडिनबरा गया था और मैंने स्कॉटिश संसद को सम्बोधित किया। मैं बेहतरीन कुदरती नज़ारों और ऐतिहासिक इमारतों को देखकर चमत्कृत था। हर चीज की बड़ी सतर्कता से देखभाल की गयी थी और सँभालकर रखा गया था। सन् 1707 में स्कॉटलैंड साम्राज्य का विलय इंग्लैंड के साम्राज्य में हो गया था, और दोनों के विलय से ग्रेट ब्रिटेन का गठन हुआ था। अगले तीन सौ सालों तक, स्कॉटलैंड का शासन प्रत्यक्ष तौर पर यूनाइटेड किंगडम की संसद द्वारा वेस्टमिंस्टर से चलाया गया। एक स्कॉटिश संसद की कमी स्कॉटिश राष्ट्रीय पहचान के लिए एक बाधा बना रहा। सितम्बर 1997 में, स्कॉटिश जनता में एक रायशुमारी करायी गयी, जिसने एडिनबरा में एक नये स्कॉटिश संसद की स्थापना के पक्ष में बहुमत दिया, जिसके पास अब कर अलग उगाहने की शक्ति होनी थी। 6 मई, 1999 को एक चुनाव करवाया गया और उसी साल 1 जुलाई को वेस्टमिंस्टर से शक्तियों का हस्तान्तरण नयी संसद को हो गया। 15 मई 2014 को, एडिनबरा विश्वविद्यालय ने मुझे एक मानद डिग्री प्रदान की। प्रोफेसर सर टिमथी ओ'शिया, विश्वविद्यालय के प्रिंसिपल ने विज्ञान और तकनीक में मेरे योगदान की प्रशंसा की और सन् 2020

तक भारत को विकसित बनाने में मेरे संकल्प की चर्चा भी की। इस विश्वविद्यालय को पुनर्जागरण काल से ही बौद्धिकता के प्रमुख केन्द्र के रूप में जाना जाता है, ज़िसके लिए एडिनबरा को 'उत्तर का एथेंस' का विशेषण भी दिया गया। इस विश्वविद्यालय के पूर्व-छात्रों में आधुनिक इतिहास के कुछ बड़े नाम शामिल हैं, जिसमें भौतिकीविद् जेम्स क्लार्क मैक्सवेल, प्रकृतिवादी चार्ल्स डारविन, दार्शनिक डेविड ह्यूम, गणितज्ञ टॉमस बायस, सर्जन जोसेफ लिस्टर, अमेरिका के स्वतन्त्रता के घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करने वाले जॉन विदरस्पून और बेंजामिन रश, खोजी अलेक्जेंडर ग्राहम बेल, तंजानिया के पहले राष्ट्रपति जूलियस न्येरेरे, और कई मशहूर लेखकों में, सर आर्थर कानन डायल, रॉबर्ट लुइस स्टीवेंसन, जे.एम. बेरी और सर वॉल्टर स्कॉट। और इस प्रतिष्ठित संस्थान ने मुझे सम्मानित किया, यह आशीर्वाद ही था। पर्वत पर प्रवचन के तीसरे श्लोक में, पवित्र बाइबिल कहती है, 'धन्य हैं नम्र : वे पृथ्वी पर राज करेंगे।' अपनी मानद डिग्री हासिल करते समय मैंने अपनी आँखें बन्द कर लीं और मन ही मन प्रमुख स्वामीजी को याद किया।

इस किताब का पहला हिस्सा अध्यात्मकिता के मेरे तजुर्बे को बताता है। दूसरा हिस्सा आध्यात्मिकता को व्यवहार में लाने का ब्योरा देता है। अब, किताब के तीसरे हिस्से में मैं सांकेतिक रूप से विज्ञान और आध्यात्मिकता की अपरिहार्य एकात्मकता की खोज के ज़रिए प्रमुख स्वामीजी के साथ अपनी एकात्मता को अभिव्यक्त करूँगा। मैं कई गहन आध्यात्मिक और नामी वैज्ञानिकों और चिन्तकों की बात करूँगा, और मैं पाइथोगॉरस, गैलीलियो गैलिली, अल्बर्ट आइंस्टीन, ग्रेगर मेण्डल, बरूच स्पीनोज़ा, श्रीनिवास रामानुजम, जगदीश चन्द्र बोस, सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर, और फ्रांसिस कॉलिन्स की मिसालें दूँगा। ऐसा करते वक्त, मैं आध्यात्मिक विश्वास और वैज्ञानिक जिज्ञासा को रेखांकित करूँगा। मैं उभरते हुए गाइया दर्शन की चर्चा करूँगा, जिसका नाम धरती की यूनानी देवी गाइया के नाम पर है। गाइया, उन सभी सिद्धान्तों के लिए समावेशी पद है, जिसके तहत यह संकल्पना है कि धरती पर रह रहे सभी सजीव अपने पर्यावरण को जीवन के लिए अधिक अनुकूल बनाने के लिए असर डालते हैं। ऐसे सिद्धान्तों के मुताबिक, जीवन देने वाली धरती पर रहने वाले सभी जीव सबों की भलाई के लिए जीवमण्डल को संचालित करते हैं।

भाग तीन

विज्ञान और आध्यात्मिकता का संयोजन

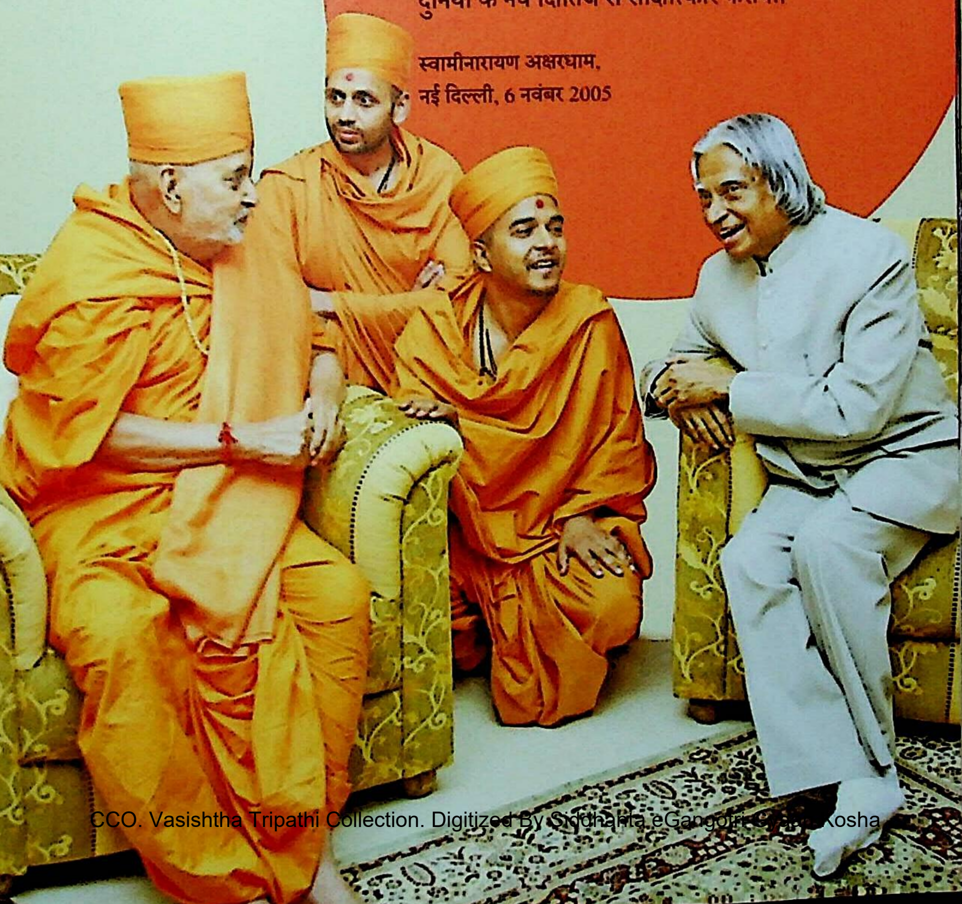
'विज्ञान न सिर्फ आध्यात्मिकता के साथ सुसंगत है, बल्कि यह आध्यात्मिकता का एक गहन स्रोत भी है।'

—**कार्ल सागान्**
खगोलविद् और लेखक



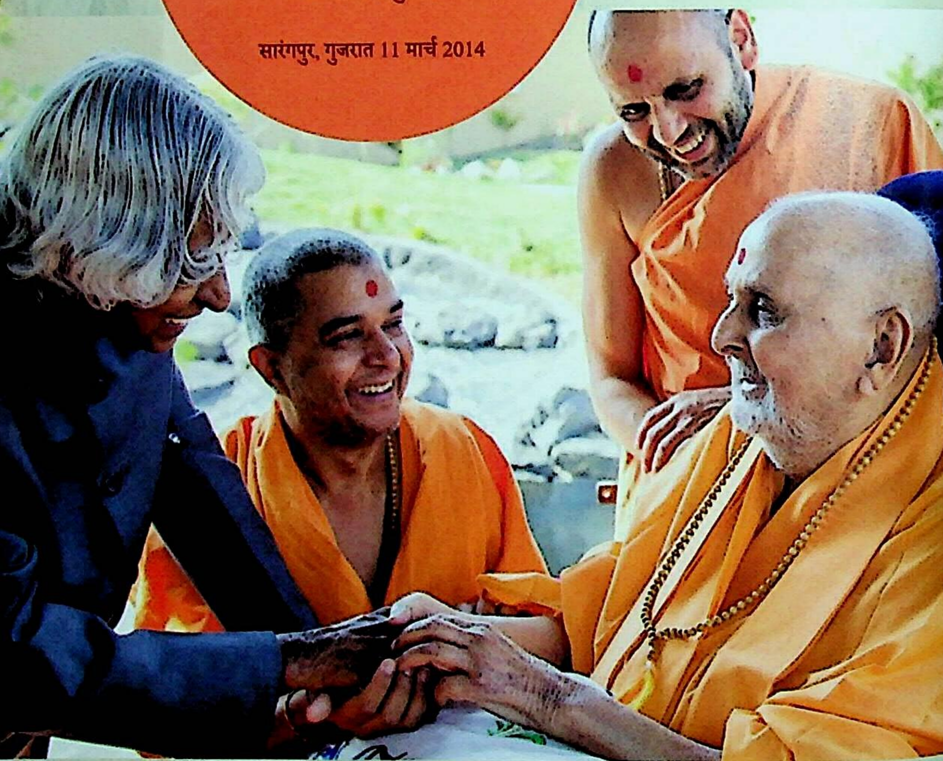
पिछले कई दशकों से मैं प्रमुख स्वामीजी के साथ बातचीत और चर्चा का आनन्द ले रहा हूँ, चाहे वो आमने-सामने हो या फ़ोन पर, जिससे हमारी गाढ़ी दोस्ती स्थापित हुई है। इन चर्चाओं ने मेरे लिए अन्तर्मन की कई खिड़कियाँ खोल दीं, और बाहर की दुनिया के नये क्षितिज से साक्षात्कार कराया।

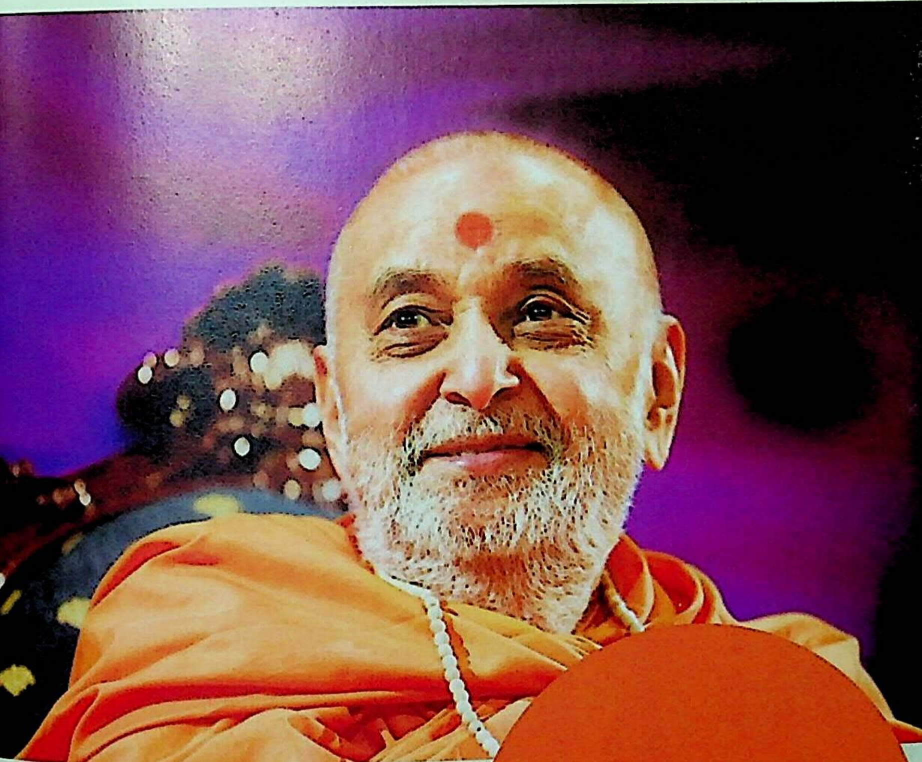
स्वामीनारायण अक्षरधाम,
नई दिल्ली, 6 नवंबर 2005



जब मैं प्रमुख स्वामीजी से सारंगपुर में पिछली बार मिला था तो वे 94 वर्ष के हो चुके थे, कमज़ोर और ख़ामोश थे। उन्होंने बड़े प्यार से मेरा हाथ पकड़ा और मुस्कुराए। इस किताब का आरम्भ और अन्त वहीं हुआ।

सारंगपुर, गुजरात 11 मार्च 2014

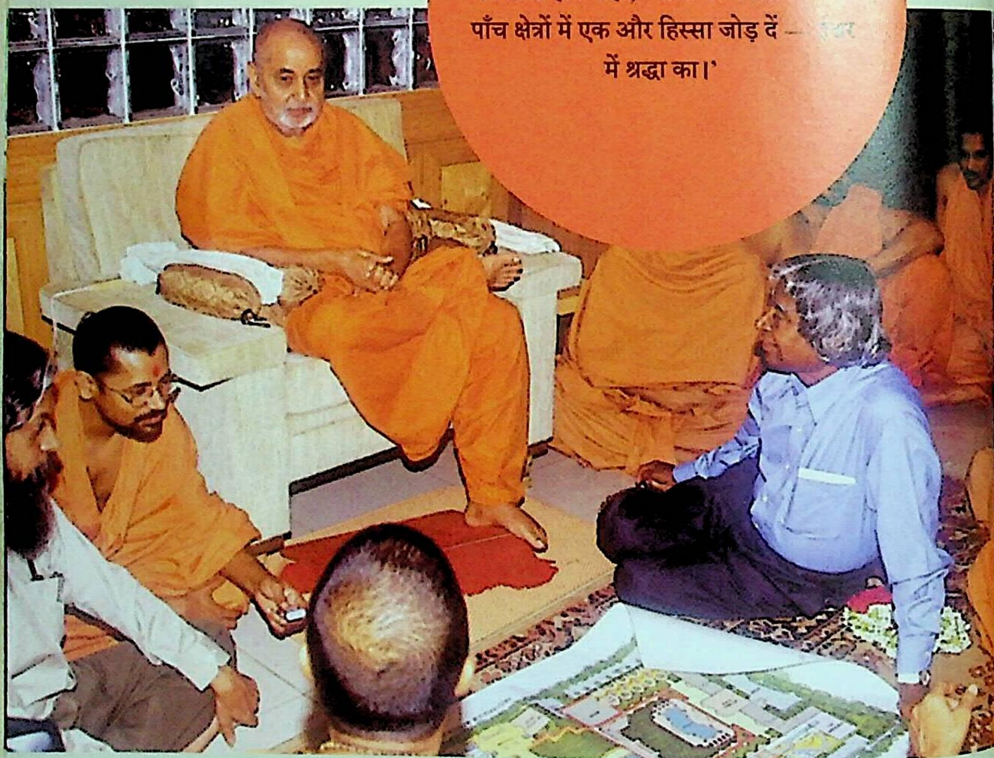


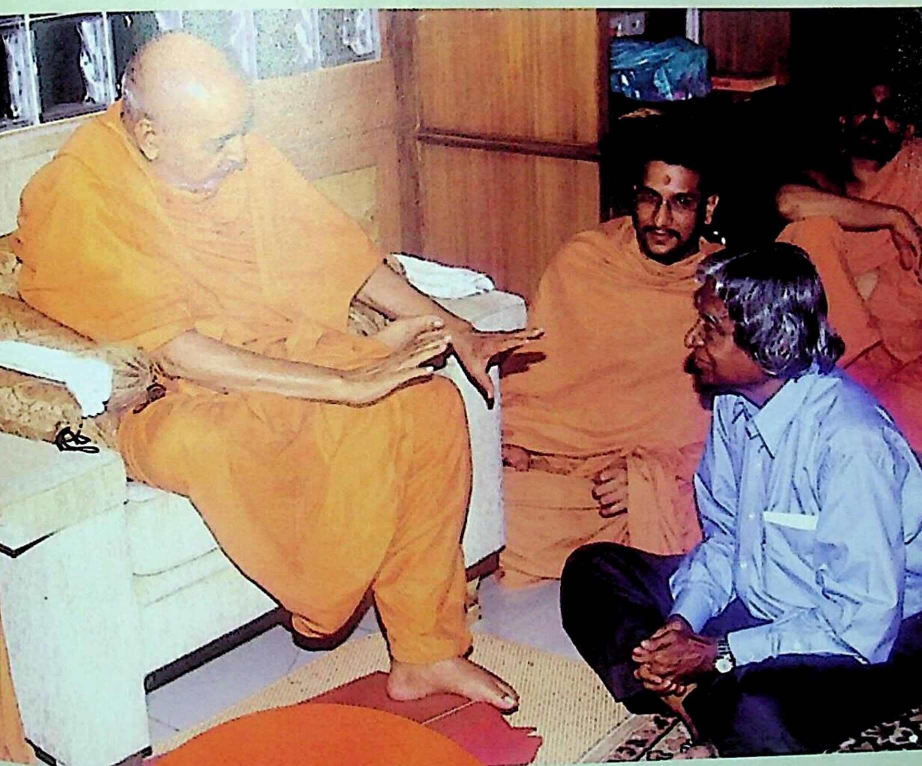


प्रमुख स्वामीजी 5,000 भक्तों के सत्संग में।

(बीएपीएस स्वामीनारायण मन्दिर, लंदन, 25 अप्रैल 2004)

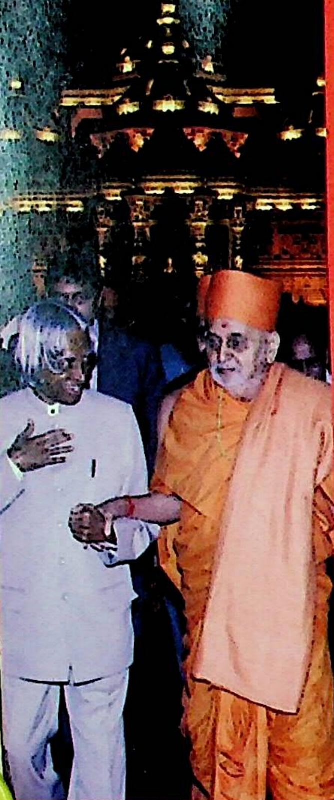
प्रमुख स्वामीजी के साथ मेरी पहली मुल [illegible]
जब मैंने उनसे इण्डिया 2020 के बारे [illegible]
की तो उन्होंने कहा, 'भारत के बदलाव [illegible]
पाँच क्षेत्रों में एक और हिस्सा जोड़ दें — [illegible]
में श्रद्धा का।'





...और उन्होंने मुझे आध्यात्मिकता के ज़रिए लोगों के मार्गदर्शन का रास्ता दिखाया। उनकी सहजता, सोच और एकनिष्ठता ने मुझे बहुत प्रेरणा दी।

(डॉ. कलाम और वाई.एस. राजन प्रमुख स्वामीजी के साथ नई दिल्ली में 30 जून 2001)





चार अंधे और एक हाथी की कहानी ने मेरे भीतर के सारे [illegible] दिये।
(स्वामीनारायण मन्दिर, नई दिल्ली)

(बाएँ) स्वामीनारायण अक्षरधाम के उद्घाटन के बाद मैंने [illegible]
'स्वामीजी, जब मैं अक्षरधाम को देखता हूँ... मुझे लगता है, कुछ भी सम्भव है। एक बेहतर भारत के लिए मैं आपके साथ काम करना चाहता हूँ।'

(नीचे) भगवान स्वामीनारायण और गुणैत गुरुओं की पवित्र मूर्तियों के समक्ष (बाएँ से दाएँ: भक्तिप्रिय स्वामी, डॉ. स्वामी, दिल्ली के लेफ्टिनेंट गवर्नर बी.एल. जोशी, राष्ट्रपति कलाम, प्रमुख स्वामीजी, प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह, विपक्ष के नेता लालकृष्ण आडवाणी, ईश्वरचरण स्वामी, वाई.एस. राजन, आत्मास्वरूप स्वामीजी)

स्वामीनारायण अक्षरधाम, नई दिल्ली, 6 नवम्बर 2005



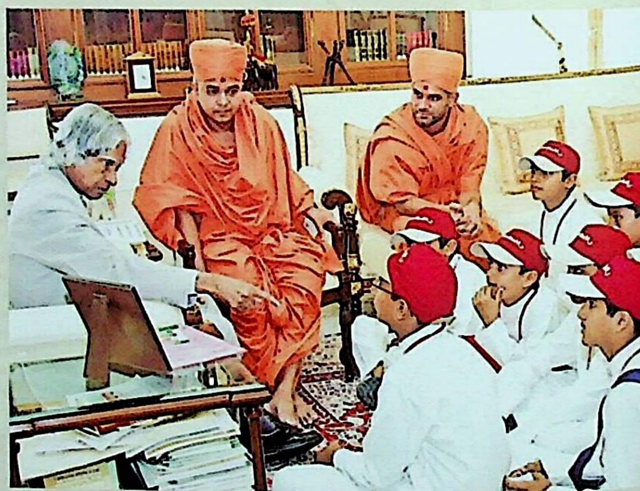


सुवर्ण बाल महोत्सव के दौरान हम 20,000 बच्चों के बीच से होकर गुजरे। मैं अत्यधिक प्रसन्न हुआ जब मुझसे एक बच्चे ने आकर पूछा, 'आपको प्रमुख स्वामीजी की कौन-सी बात सबसे अधिक पसन्द है?'

स्वामीनारायण अक्षरधाम, गांधीनगर, गुजरात, 8 फरवरी 2004

मैं बीएपीएस स्वामीनारायण के बच्चों से मिलकर बहुत खुश हुआ।

(21 अक्टूबर 2007)

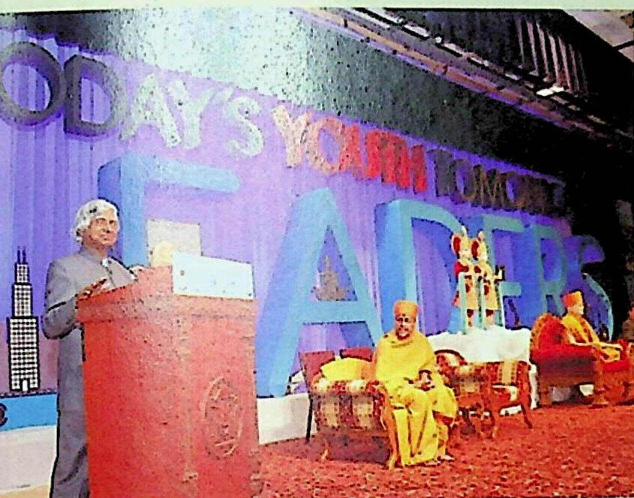


मैंने खुद बीएपीएस के नशामुक्ति अभियान की देखरेख की। 23,000 बच्चों ने 21 लाख लोगों से सम्पर्क किया और 6,30,000 लोगों की नशामुक्ति में मदद की।

(राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली 5 जुलाई 2007)

शिकागो के बीएपीएस स्वामीनारायण मन्दिर में मैंने महसूस किया कि कल के नेताओं को तैयार करने में मन्दिर एक बड़ी भूमिका निभाता है।

(21 अप्रैल 20[illegible]



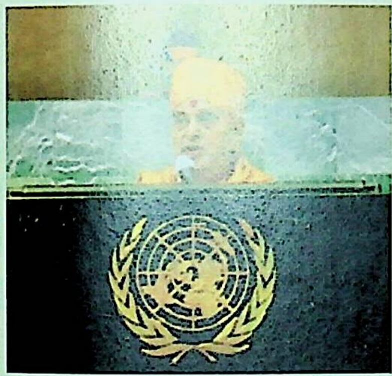
गुजरात भूकम्प और दंगों के बाद राष्ट्रपति के रूप में मेरी पहली यात्रा, प्रमुख स्वामीजी ने विकास और सामाजिक सद्भाव के लिए आशीर्वाद दिये।

(बीएपीएस स्वामीनारायण मन्दिर, अहमदाबाद 13 अगस्त 2002)

मैंने यूरोपियन संसद में भाषण के दौरान कहा कि हमें एक जाग्रत समाज चाहिए। मुझे लग रहा था कि प्रमुख स्वामीजी मेरे ज़रिए बोल रहे हैं, और एक अच्छा इंसान बनने के क्रम में आध्यात्मिकता के महत्व को उजागर कर रहे हैं।

यूरोपियन संसद, स्ट्रैसबर्ग, 25 अप्रैल 2007





प्रमुख स्वामीजी ने
मिलेनियम वर्ल्ड पीस सम्मिट में
भाषण देते हुए कहा, 'मानव इतिहास की
इस घड़ी में हम धर्मगुरुओं को विश्व में एक धर्म
का सपना नहीं देखना चाहिए, बल्कि ये सपना
देखना चाहिए कि सभी धर्म एक हों—एकजुट।
अनेकता में एकता ही जीवन का पाठ हो।
विश्वशान्ति का राज़ इसी में
छुपा हुआ है।'

(संयुक्त राष्ट्र संघ, न्यू यार्क, 29 अगस्त 2000)

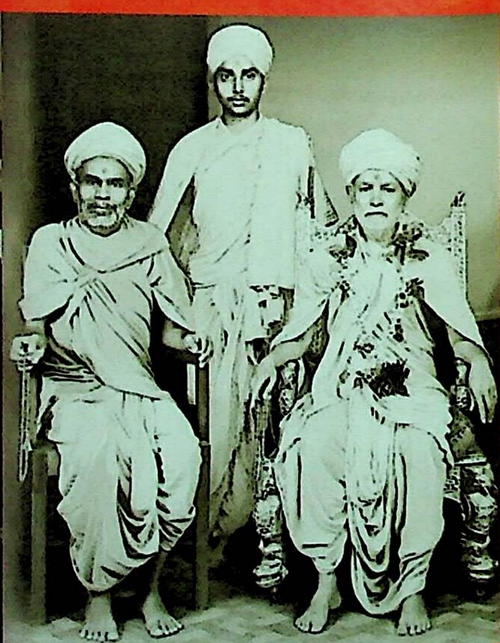
मूळ अक्षर मूर्ति श्री गुणातीतानंद स्वामी

परब्रह्म पुरुषोत्तम श्री सहजानंद स्वामी

अक्षर पुरुषोत्तम में निहित बीएपीएस का मूल दर्शन, जिसे भगवान स्वामीनारायण (दाएँ) और उनके पहले आध्यात्मिक उत्तराधिकारी गुणातीतनन्द स्वामी (बाएँ) में दर्शाया गया है।



एक बच्चा पूरे विश्व को बदल सकता है — बालयोग नीलकण्ठ (भगवान स्वामीनारायण) के जीवन को फिल्म नीलकण्ठ यात्रा में बहुत ख़ूबसूरती से पेश किया गया है।



गुणातीत गुरु — युवा प्रमुख स्वामीजी अपने गुरु शास्त्री महाराज और योगीजी महाराज के पीछे खड़े।

17

निर्माण के सौन्दर्य का चिन्तन

'एक हज़ार जंगलों के निर्माण का आधार बलूत का एक फल है।'

—राल्फ वाल्डो इमर्सन
19वीं शताब्दी के अमेरिकी कवि

विज्ञान और धर्म के बीच का संवाद बहुत पुराना है और सबसे विवादास्पद रहा है, यह हर युग के महान विचारकों को इतिहास के सबसे बड़े विमर्श में लेकर आता रहा है। विज्ञान और धर्म के बीच का मौजूदा संघर्ष गैलीलियो के मशहूर ख़त से लेकर आज के अगुआ बौद्धिकों तक देखा जा सकता है। जग जाहिर है कि अनभिज्ञता की अपनी सारी बुराइयों के बाद भी धर्म में धर्मनिरपेक्ष सोच के लिए बहुतेरे बहुमूल्य सबक निहित हैं और विज्ञान एवं धर्म को एक दूसरे का विरोधी कदापि नहीं माना जाना चाहिए।

जबसे मैं 2001 में प्रमुख स्वामी जी से मिला, मैंने विज्ञान और अध्यात्म के बीच के सम्बन्ध को समझा। मैंने जाना कि सही विज्ञान और सही अध्यात्म न केवल अनुकूल हैं, बल्कि वो एक जैसे हैं और एक भी हो सकते हैं। जीवन का स्रोत क्या है? हमें यह भी नहीं पता कि परमाणु क्या है—यह एक तरंग या एक कण है—या फिर दोनों। हम यह भी नहीं जानते कि हमारे ब्रह्माण्ड की आधारभूत संरचना का आधार क्या है। इसीलिए हम परमात्मा की बात करते हैं जो एक उत्कृष्ट ऊर्जा का स्रोत हैं। जब एक भौतिक विज्ञानी एक उप-परमाणविक कणों को देखता है, तो वह स्क्रीन पर उसकी ऊर्जा को देखता है। यह निशान आते हैं और जाते हैं, और

हम भी आते हैं और जाते हैं—सारा जीवन आता है और जाता है। वही ऊर्जा ही आकांक्षी ऊर्जा है। रहस्यवादी प्रार्थना ही इसका समाधान करती है।

अलेक्जेन्ड्रिया के दूसरी शताब्दी के ग्रीको-मिस्री लेखक प्रोलेमी से लेकर आज के समय के रिचर्ड डॉकिन्स तक हम वो तीव्र आध्यात्मिक प्रगति देख सकते हैं जिसे विज्ञान प्रेरणा देने में सक्षम है।

प्रोलेमी ने लिखा है :

> मुझे पता है कि मैं स्वभाव से नश्वर और अल्पायु हूँ, लेकिन जब मैं खगोलीय पिण्डों की घुमावदार तरीके से आगे-पीछे की गति पर खुश होता हूँ, मैं अपने पैरों से धरती को नहीं छूता। मैं खुद ज़्यूस की उपस्थिति में खड़ा होता हूँ और अमृत से अपना पेट भर रहा होता हूँ।[42]

और रिचर्ड डॉकिन्स लिखते हैं :

> ईश्वर सहित ब्रह्माण्ड उस ब्रह्माण्ड से बिल्कुल अलग दिखेगा, जिसमें ईश्वर नहीं है। एक भौतिक विज्ञान, एक जीव विज्ञान अलग ही दिखेगा अगर उसमें ईश्वर है। इसलिए धर्म के सबसे बुनियादी दावे वैज्ञानिक हैं। धर्म एक वैज्ञानिक सिद्धान्त है।[43]

इस किताब के बाकी हिस्से में मैं इस बारे में अपने विचार साझा करूँगा, जो साल-दर-साल प्रमुख स्वामीजी का साथ मिलने के बाद विकसित हुए हैं।

'स्प्रिट' (आत्मा) का उद्भव एक लैटिन शब्द *स्पूरेयर* से हुआ है जिसका मतलब है साँस लेना। जो साँस हम हवा में लेते हैं, वो बिना किसी सन्देह के एक सूक्ष्म पदार्थ है। विपरीत उपयोग के बाद भी 'स्पिरिचुअल' (आध्यात्मिक) शब्द में कोई विशेष उलझाव नहीं है जो यह दिखाये कि हम विज्ञान के दायरे के बाहर किसी चीज़ की बात कर रहे हैं। विज्ञान न केवल अध्यात्म के अनुकूल है—बल्कि यह आध्यात्मिकता का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। कुछ दार्शनिकों का मानना है कि आधुनिक क्वॉन्टम सिद्धान्त उस चेतना को पारिभाषित करता है जहाँ धर्म और आध्यात्मिकता का मिलन होता है। जब हम प्रकाश वर्षों और युगों के बीतने की विशालता के आगे अपने मामूली जीवन को पहचानते हैं; जब हम जीवन की गूढ़ता, सुन्दरता और सूक्ष्मता पर अपनी पकड़ बनाते हैं, तब जो हमें महसूस होता है—वह उत्साह और दीनता का मिलाजुला एहसास—वह पूरी तरह आध्यात्मिक होता है। ऐसी ही हमारी भावनाएँ होती हैं जब हमारे पास महान कला होती है या

संगीत होता है या साहित्य होता है या फिर अनुकरणीय निःस्वार्थ साहस के हमारे कार्य जैसे महात्मा गाँधी या नेल्सन मण्डेला ने किये थे।

यह सोचना कि विज्ञान और अध्यात्म किसी तरह बिल्कुल अलग हैं, दोनों के साथ अन्याय है। 600 साल पीछे चलते हैं। काली मृत्यु, मानव इतिहास की सबसे विनाशकारी महामारियों में से एक, दुनिया का विनाश कर रही थी।

चीन में या उसके पास पैदा हुई यह जानलेवा बीमारी सिल्क रूट या जहाजों के द्वारा फैली जिसने विश्व की जनसंख्या को लगभग 45 करोड़ से 35 करोड़ पर ला दिया। इस प्लेग के परिणाम के बाद धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति का एक सिलसिला शुरू हुआ जिसका मानव इतिहास पर बड़ा भारी असर हुआ।[44]

काली मृत्यु के द्वारा फ्लोरेंस में हुए विनाश ने 14वीं शताब्दी के इटली के लोगों का दुनिया की ओर देखने का नज़रिया ही बदल दिया। खासकर इटली इस प्लेग से बुरी तरह प्रभावित हुआ था और यह माना जाता है कि उस मृत्यु का फैलाव कुछ ऐसा था कि उसने विचारकों को अध्यात्म और मृत्यु बाद के जीवन से ज्यादा पृथ्वी में जीवन के बारे में सोचने पर मजबूर कर दिया।[45]

निकोलस कॉपरनिक्स की सन् 1543 में छपी किताब *ऑन द रिवोल्यूशन ऑफ द हेवेनली स्फियर्स* में खगोलीय ग्रहों के घूर्णन, एन्ड्रयू वेसालियस की *ऑन द फेब्रिक ऑफ द ह्यूमन बॉडी* मानव शरीर की संरचना पर लिखी पुस्तक के प्रकाशन ने वैज्ञानिक क्रान्ति की शुरुआत की। प्राचीन दृष्टिकोण, जिसका दबदबा बौद्धिक जगत में 2000 साल तक रहा, उसकी जगह नयी प्रकृति के प्रति नयी सोच उभरी। मसलन, गैलेन ने शिरा और धमनी तन्त्र को दो अलग-अलग प्रणाली के तौर पर माना, उसके साथ ही विलियम हार्वे की रक्त का प्रवाह धमनियों से शिराओं की तरफ होता है, जैसी महान अन्वेषण, जिसमें बताया गया था कि 'रक्त धमनियों से शिराओं में घेराबन्द तरीके से ढकेला जाता है और... निरन्तर गति में रहता है'। इन खोजों ने उस समय की चिकित्सा की समझ में क्रान्ति ला दी थी।[46]

इस युग के क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारकों में सबसे प्रसिद्ध गैलीलियो थे। गैलीलियो गैलिली का जन्म सन् 1564 में, पीसा में हुआ था जो उस समय फ्लोरेंस के अधीन के एक राज्य था। गैलिलियो युवावस्था में पादरी बनने को लेकर बहुत संजीदा थे, लेकिन इसके बजाय उन्होंने अपने पिता का मन रखने के लिए पीसा विश्वविद्यालय में मेडिकल डिग्री के लिए दाखिला लिया। सन 1581 में जब वह

औषधियों के बारे में पढ़ रहे थे, उनका ध्यान छत से लटके हुए एक दीपधार पर गया, जो बड़े और छोटे चक्करों में हवा में झूल रहा था।

उन्होंने इसके घूमने की गति को अपनी धड़कन से मिलाया, दीपधार आगे और पीछे जाने में समान समय ले रहा था चाहे वह जितना भी दूर झूल रहा हो। यह प्रतीत होता है कि यह खगोलीय पिण्डों की गति के प्रति इंसानी समझ की शुरुआत थी।

इस समय तक, जानबूझकर गैलिलियो गणित पढ़ने से हतोत्साहित हो चुके थे, क्योंकि उस समय चिकित्सक एक गणितज्ञ से ज्यादा कमाते थे। लेकिन संयोगवश रेखागणित पर एक लेक्चर सुनने के बाद उन्होंने अपने असन्तुष्ट पिता से याचना की कि वह उन्हें चिकित्सा विज्ञान के बजाय गणित और प्राकृतिक दर्शन पढ़ने की अनुमति दे दें। शहर की कलात्मक परम्परा और पुनर्जागरण के कलाकारों से प्रेरित होकर—और शायद पुनर्जागरण के व्यापक स्वभाव को ग्रहण करके—गैलीलियो ने सौन्दर्यबोध विकसित कर लिया। सन् 1589 में गैलीलियो को पीसा विश्वविद्यालय में गणित का प्रमुख नियुक्त किया गया।

गैलीलियो के समय के कैथोलिक समाज में अधिकतर पढ़े-लिखे लोग अरस्तू के भूकेन्द्रीय दर्शन पर भरोसा करते थे : जिसके मुताबिक धरती दुनिया का केन्द्र थी और सारे खगोलीय पिण्ड धरती का चक्कर लगाते थे।

बाइबिल सन्दर्भ- भजन संहिता 93:1, 96:10, और 1 इतिहास 16:30—पाठ्य के अनुसार, 'दुनिया मजबूती से स्थापित है और इसे हिलाया नहीं जा सकता।' इसी प्रकार, भजन संहिता 104:5 कहती है : 'ईश्वर ने धरती को अपनी नींव पर स्थापित किया है; इसे कभी भी हिलाया नहीं जा सकता।' आगे सभोपदेशक कहता है : 'सूरज उदय होता है और अस्त होता है और अपनी जगह पर वापस चला जाता है।' लेकिन गैलीलियो ने कॉपरनिक्स के पहले के काम से प्रभावित होकर धरती का सूर्यकेन्द्रित विचार प्रतिपादित किया, जिसमें धरती और अन्य ग्रह सूर्य का चक्कर लगाते हैं।

सन् 1616 में, पोप पॉल पंचम ने गैलीलियो को कॉपरनिक्स के सूर्यकेन्द्रित मत को छोड़ने के लिए कहा। आगे उसे आदेश दिया गया कि वो सूर्यकेन्द्रित मत के बारे में किसी भी प्रकार की बात न करे, उसे न पढ़ाये, न उस पर सफाई दे—चाहे वह बोलकर हो या लिखकर। 16 साल तक गैलीलियो उन मतों के बीच भटकते रहे

जिन पर उन्हें भरोसा था और जिन पर भरोसा करने के लिए उन्हें आदेश दिया गया था; लेकिन आखिरकार उन्होंने, जो उन्हें सही लगा उसे लिखने का फैसला किया। इस बारे में लिखी गयी उनकी किताब, *डायलॉग कंसर्निंग द टू चीफ वर्ल्ड सिस्टम्स* उनके सूर्यकेन्द्रित मत को प्रतिपादित करती थी, और इसके लिए गैलीलियो को बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। गैलीलियो में चतुराई की कमी थी और उन्होंने एक बड़ी गलती कर दी, उन्होंने अपने समर्थक पोप अरबन अष्टम का मजाक उड़ा डाला। उन्होंने अपनी किताब में पोप के भूकेन्द्रीय मत को एक विदूषक के रूप में दिखाया और उस विदूषक का नाम सिम्पलीसियो रख दिया। इसके लिए गैलीलियो को जोरदार तरीके से विधर्मी बताया गया और उनका बहुचर्चित मुकद्दमा सन 1633 में चला। उन्हें खासतौर पर सूर्य को ब्रह्माण्ड के मध्य में बताने और अचलायमान बताने के साथ ही पृथ्वी को ब्रह्माण्ड के मध्य में नहीं होने और गति में होने जैसे विधर्मी विचारों को बढ़ाने का दोषी पाया गया, पवित्र पुस्तकों के विचारों का विरोधी माना गया। उन्हें इन विचारों को त्यागने, उनकी निन्दा करने और उससे नफरत करने के लिए कहा गया और जीवनभर के लिए नज़रबन्द कर दिया गया।[47]

गैलीलियो पहले ऐसे आधुनिक विचारक थे जिन्होंने कहा कि प्रकृति के नियम गणितीय हैं। उन्होंने प्रयोगों और गणित के उन्नत संयोजन से गति विज्ञान को मूल योगदान दिया। उन्होंने अपनी किताब द *आस्सेयर* में लिखा :

> जो दर्शन इस शानदार किताब में लिखा गया है—मेरा मतलब ब्रह्माण्ड—जिसे हम हमेशा देख सकते हैं, बिना इसमें लिखी भाषा को और इसके चरित्रों को समझे इसे नहीं समझा जा सकता। इसे गणित की भाषा में लिखा गया है और इसके पात्र त्रिभुज, वृत्त और दूसरे अन्य ज्यामितीय आँकड़े हैं, जिनके बिना मानवीय रूप से इसके एक शब्द को भी समझना मुश्किल है। इस समझ के बिना कोई भी एक अँधेरे भँवरजाल में भटकता रहेगा।[48]

गैलीलियो गैलिली के पहली बार टेलिस्कोप के आविष्कार के चार सौ साल बाद भी उनकी विरासत बनी हुई है। उनके आविष्कार और विचार आज भी इस बात पर प्रभाव डालते हैं कि किस तरह दुनिया विज्ञान को देखती है या किस तरह विज्ञान दुनिया को देखता है और निस्सन्देह ब्रह्माण्ड को। आज की दूरबीनों ने हमारे ब्रह्माण्ड में कम-से-कम 100 बिलियन आकाशगंगाओं का पता लगाया है। यह एक गूढ़ ब्रह्माण्डीय प्रश्न है : 'यदि ब्रह्माण्ड निर्माण का उद्देश्य मानवों के रहने मात्र

से था, तो ईश्वर ने इतनी सारी आकाशगंगाएँ क्यों बनायीं? इनमें सिर्फ एक ही हमारे सौरमण्डल के लिए पर्याप्त होती। फिर भी अनगिनत आकाशगंगाएँ हैं जो बेतरतीब फैली हुई लगती हैं पर हर पल विकसित हो रही हैं।'

इसलिए, खगोलशास्त्र से जुड़ा जो सवाल हमारे सामने खड़ा है वह यह कि ब्रह्माण्ड के विस्तार और उसके उद्देश्य की विवेचना कैसे की जा सकती है।

गैलीलियो की विरासत हमारे लिए देखे जा सकने की सीमा से आगे जाने का आह्वान है। ब्रह्माण्ड की विशालता, उसकी उत्पति और इसके अन्त का सवाल, इसके लिए सिर्फ वैज्ञानिक किस्म का जवाब ही मुफीद नहीं माना जा सकता। जो भी गैलीलियो की सीख के मुताबिक ब्रह्माण्ड की तरफ निगाहें उठायेगा, तो वह सिर्फ टेलिस्कोप से दिख रहे दृश्य पर ही रुक नहीं जायेगा; उसे स्वयं से यह पूछना होगा कि आखिर इसका अर्थ और अन्त क्या है जिसकी तरफ इस पूरी सृष्टि का झुकाव है। इस सन्दर्भ में, आगे के ज्ञान का मार्ग तैयार करने की दिशा में दर्शन और धर्मविज्ञान की बेहद अहम भूमिकाएँ हैं।

गैलीलियो ने शास्त्रों को महत्व दिया। उन्होंने जोर दिया कि बाईबल को विज्ञान को साबित करने के साधन के रूप में नहीं अपितु प्रेरणा के रूप में लिया जाना चाहिए। यह करने से, उन्होंने सोचा कि यह विचार आस्था और विज्ञान के बीच सौहार्द्र स्थापित करेगा। दुर्भाग्यवश, उनके विरोधियों ने इसके ठीक उलट विचार पेश किये और गैलीलियो के विचारों को धर्मशास्त्रों को नीचा दिखाने का एक प्रयास साबित कर डाला। शाब्दिक अर्थों पर गैलीलियो के विचार आने वाली पीढ़ियों के लिए काफी प्रासंगिक थे। बाईबल के जरिए कोई भी सृजन के सौन्दर्यशास्त्र की सराहना कर सकता है पर कोई भी व्यक्ति सृजन उसके केवल भौतिक दृष्टिकोण का अध्ययन करके नहीं समझ सकता। जब हम ब्रह्माण्ड का अध्ययन करते हैं, तो प्रतीकात्मक भाषा और सौन्दर्यशास्त्र का सहारा हमें काव्यात्मक भावों से भर देता है।[49]

पाषाण युग के मौलिक मतों से लेकर वैदिक काल और भगवान बुद्ध के, कन्फ्यूशियस, प्लेटो और ज़ोरोअस्टर के अक्षीय युग से आधुनिक ईसाई मिशनरियों और इस्लाम के उदय तक, आस्था को संस्कृति से मूर्त्त रूप मिला है। इसलिए हम मूल सवाल तक पहुँचते हैं : क्या ईश्वर है? यानी, क्या हमने ईश्वर को खोज लिया है? या हमने उसका आविष्कार किया है? क्या सभी महान धर्मों में कई बड़ी समानताएँ

इसलिए हैं क्योंकि ईश्वर मनोकामना पूरी करने का एक विश्वव्यापी उत्पाद भर है? क्या इंसानों ने हर जगह अपनी जरूरत के लिए अस्तत्विक त्रासदी का मुकाबला करने के लिए अलौकिक प्राणियों को गढ़ लिया या जीवन की महत्ता और उद्देश्य को पाने के लिए ऐसा हुआ है?

या फिर कई जगहों में कई या कुछ लोगों ने सच में ईश्वर के दर्शन किये? जो लोग शास्त्रों और विज्ञान को अच्छी तरह से नहीं समझते उन्हें उन लोगों ने पीछे छोड़ दिया है जो उन्हें अच्छी तरह से समझते हैं। पहले जिनका जिक्र किया वह शास्त्रों का फौरी तौर पर अध्ययन करके, स्वयं को विज्ञान के हर सवाल पर फैसला लेने का अधिकार दे देते हैं वह भी उन शब्दों के बल पर, जिन्हें वह बिल्कुल ही समझ नहीं पाये और उनके लेखकों द्वारा जानबूझ कर किसी और प्रयोजन के लिए लिखे गये थे। और समझने वाले कुछ एक लोग ऐसे लोगों की उग्र धार को नहीं रोक पाये। इन लोगों को ज्यादा अनुयायी मिलेंगे, क्योंकि बिना प्रयास या अध्ययन के बुद्धि के लिए ख्याति पाना सुखद है, बजाए उसके कि खुद को अथक रूप से सबसे श्रमसाध्य विषयों मे डुबा देने के। जहाँ तक किसी शब्द के केवल अर्थ का सवाल है, शास्त्रों को हर व्यक्ति के समझ आने के लिए यह आवश्यक है कि वह कई ऐसी बातें कहें जो परम सत्य से अलग हों। लेकिन दूसरी ओर प्रकृति निष्ठुर और अपरिवर्तनीय है; वो अपने ऊपर नियमों को कभी नहीं तोड़ती, न ही वह रत्ती भर यह ध्यान देती है कि उसके गूढ़ कारण और कार्य करने के तरीके किसी भी इंसान की समझ में आते हैं या नहीं। इसी वजह से, हमारी आँखों के सामने आने वाला कोई भी भौतिक पदार्थ, जिसे हम महसूस कर पायें या समझ पायें, या कोई तार्किक प्रदर्शन हमारे समक्ष साबित हो, धार्मिक पुस्तकों में जिक्र या विरोध पर न तो उसकी निन्दा की जा सकती है ना ही सवाल होते हैं। इन अंशों का, उनके शब्दों में, सच ही कुछ अलग मतलब हो सकता है। क्योंकि शास्त्र सभी भौतिक प्रभावों का संचालन करने वाली कठिन शर्तों में नहीं बन्धे हैं; न ही ईश्वर प्रकृति के कार्यों में इतना उत्कृष्ट तरह से प्रकट है जितना शास्त्रों के पवित्र कथनों में।

18

धर्म ईश्वर के संकेत चिह्न हैं

'जिस तरह मोमबत्ती बिना आग के नहीं जल सकती, उसी तरह मनुष्य आध्यात्मिक जीवन के बिना नहीं जी सकता।'

—बुद्ध

पाइथागॉरस करीब 2500 साल पहले पूर्वी एजियन सागर के एक ग्रीक टापू सामोस पर रहते थे। एजियन सागर ग्रीस की मुख्यभूमि और तुर्की को अलग करता है। पाइथागॉरस बहुत यात्राएँ करते थे। वह मिस्र, अरब और फारस के साम्राज्यों में ज्ञान हासिल करने के लिए गये थे, खासकर उनका ध्यान ईश्वर से जुड़े रहस्यमय और तिलिस्मी सम्प्रदायों पर अधिक था। पाइथागॉरस ने छठी सदी ईसापूर्व के उत्तरार्ध में दर्शन और धर्म के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया था। उन्हें एक महान गणितज्ञ, रहस्यवादी और वैज्ञानिक माना जाता है, और उन्हें सबसे अधिक उस प्रमेय के लिए जाना जाता है, जो उनके ही नाम पर है।[50]

पाइथागॉरस को पहला व्यक्ति माना जाता है जिन्होंने ब्रह्माण्ड के कॉस्मॉस शब्द का इस्तेमाल किया था। 'यह एक जटिल लेकिन व्यवस्थित तन्त्र है, मसलन हमारा ब्रह्माण्ड, अराजकता के विपरीत है,' वह कहते हैं। पाइथागॉरस की सबसे मशहूर खोजों में से एक है प्रमुख संगीतीय अन्तरालों को पहले चार पूर्णांकों के सरल गणितीय अनुपातों में व्यक्त किया जा सकता है। पाइथागॉरस ने साफ किया कि 'सारी प्रकृति में एक ऐसी समरसता है जो संख्याओं से बनती हैं।' 'सारी प्रकृति' का मतलब स्थान और समय है और उसमें उपस्थित हर चीज है, जिसमें सारे ग्रह,

तारे, आकाशगंगाएँ, आक़ाशगंगाओं के मध्य का स्थान, सूक्ष्मतम उप-परमाणविक कण, सारे पदार्थ और ऊर्जा—मुख्तसर में, यह हर चीज है। पाइथागॉरस के विचार का प्लेटो पर बहुत असर पड़ा, और उनके ज़रिए समस्त पश्चिमी विचारधारा पर।[5]

ब्रह्माण्ड के बारे में सबसे प्राचीन हिन्दू अवधारणा, भगवतगीता के ग्यारहवें अध्याय में है। यह श्लोक ही अपेक्षतया आधुनिक समय में रचा गया है—करीब छह से आठ सदी पहले। लेकिन इस अध्याय में हमारे लिए उपलब्ध सबसे पुरानी ब्रह्माण्डीय संकल्पनाएँ उल्लिखित हैं, वह भी बिना अनिश्चित व्याख्याओं के। कोई कह सकता है कि यहाँ हमने वैदिक उपदेशों को ही बाद के वक्त में हमारे मकसद के लिए इस्तेमाल किया है।

श्री कृष्ण भगवान् ने कहा,

हे पार्थ! देखो दिव्य अनुपम विविध वर्णाकार के,
शत-शत सहस्रों रूप मेरे भिन्न-भिन्न प्रकार के,
सब देख भारत! रुद्र वसु अश्विनि मरुत आदित्य भी।
आश्चर्य देख अनेक अब पहले न देखे जो कभी
इस देह में एकत्र सारा जग चराचर देख ले
जो और चाहे देखना इसमें बराबर देख ले
रोमांच तन में हो उठा आश्चर्य से मानो जगे।
तब यों धनंजय सिर झुका, कर जोड़ कर कहने लगे
उस देवदेव शरीर में देखा धनंजय ने तभी।
बाँटा विविध विध से जगत् एकत्र उसमें है सभी,

अर्जुन ने कहा :

भगवन्! तुम्हारी देह में मैं देखता सुर-गण सभी
मैं देखता हूँ देव! इसमें प्राणियों का संघ भी
बहु बाहु इसमें हैं अनेकों ही उदरमय रूप है
मुख और आँखें हैं अनेकों, हरि-स्वरूप अनूप है
दिखता न विश्वेश्वर तुम्हारा आदि मध्य न अन्त है
मैं देखता सब ओर छाया विश्वरूप अनन्त है।

ब्रह्माण्ड के बारे में इस्लामी किताबों में भी ऐसा ही गहरा और रहस्यमय वर्णन है—और कुछ-कुछ काव्यपूर्ण भी। इसरा और मिराज रात के सफ़र या शब-ए-मिराज़ के दो हिस्से हैं, यानी इस्लामी परम्परा के मुताबिक़, पैग़म्बर मुहम्मद ने (अल्लाह उनको शान्ति दे) इसे भौतिक और आध्यात्मिक यात्रा के तौर पर बताया है। इस कहानी का संक्षिप्त ब्योरा सूरा 17, कुरान के अल-इसरा में है। बाकी के ब्योरे हदीस में है, जो कि पैग़म्बर साहब के जीवन के बारे में कहे उनके साथ रहे 'साहिबों' के बयान हैं।

वह पहले जन्नत के त्रिज्या के भीतर पाँच लाख प्रकाश वर्ष तक घूमे। बुराक़ (जन्नत का जानवर) प्रकाश की गति से भी अधिक की गति से चलता है और इसका हर कदम वहीं पड़ेगा जहाँ तक इसकी निगाह जाती है। वह पूरी दूरी जो इन्होंने तय की, वह फरिश्तों से भरी हुई थी, जिनकी संख्या सिर्फ अल्लाह को ही पता थी, और जिनकी हम हर तरह से तारीफ करते हैं और जिनके आगे सर झुकाते हैं।

पैग़म्बर मुहम्मद (उनको शान्ति मिले) बुराक़ पर बैठे थे और फरिश्ता जिब्राइल भी उनके साथ थे, और वह अनन्त से सात अर्श ऊपर तक पहुँच गये, और वहाँ वह पहले के सभी पैग़म्बरों और फरिश्तों से मिले। आखिर में, एक अर्श आया जब फरिश्ते जिब्राइल ने पैगम्बर से कहा कि इसके आगे कोई और कभी नहीं गया। 'मुहम्मद!' जिब्राइल ने कहा, 'अब आपको बुराक़ से नीचे उतरना होगा और उस तरफ जाना होगा, जहाँ आज तक कोई प्रवेश नहीं कर पाया है।'

मुहम्मद (उनको शान्ति मिले) तब एक परदे से दूसरे परदे होते हुए आगे बढ़ते रहे, और तब तक बढ़ते रहे, जब तक उन्होंने एक हज़ार परदे पार नहीं कर लिए। आखिरकार, उन्होंने एकात्मकता का परदा खोला। उन्हें महसूस हुआ कि वह एक दैवीय हवा के बीचों-बीच एक मशाल की तरह लटके हैं। उन्होंने एक शानदार, विशाल और अनिर्वचनीय चीज देखी। उन्होंने अपने रब से दृढ़ता और शक्ति प्रदान करने को कहा।

उन्हें महसूस हुआ कि उस महान उपस्थिति की एक बूँद उनकी जीभ पर रख दी गयी है और उन्हें वह बर्फ़ से भी ठण्डा और शहद से भी मीठा लगा। धरती और सात जन्नतों में से कुछ भी ऐसा नहीं था, जिसका जायका ऐसा हो। इस बूँद से, अल्लाह ने उनके दिल में पहले और आख़िरी, दुनियावी और पारलौकिकता का

ज्ञान दिया था। फौरन से पेश्तर उनके सामने हर चीज का खुलासा हो गया था। उन्हें आगे बढ़ने का आदेश मिला। जब वह आगे बढ़े, तब उन्होंने देखा कि वह एक तख़्त पर बैठे हैं, जिसका कोई वर्णन नहीं किया जा सकता, न तब, न कभी बाद में। उन्हें तीन और बूँदें दी गयीं :

एक जो उनके कन्धे पर रखी गयी और जो महिमापूर्ण थी, एक उनके दिल में जिनमें दया भरी हुई थी, और एक और तीसरी बूँद जो उनकी ज़बान पर, जो वाग्मिता से भरी थी। तब उस उपस्थिति की तरफ से एक आवाज़ आयी, जिसे आज तक किसी ने सुना न था : 'मुहम्मद! मैंने आपको सभी का रक्षक बना दिया है।'

उस वक्त मुहम्मद (उनको शान्ति मिले) को महसूस हुआ कि उनका जेहन भावविभोर हो गया है, और वह एक हैरतअंगेज़ रहस्य के साथ बह गया है। उन्हें अल्लाह के अनन्त काल और असीमता के क्षेत्र में रखा गया था। शुरू में उन्हें कोई शुरुआत नहीं मिली, और दूसरे उन्हें कोई अन्त भी नहीं मिला। तब अल्लाह ने उनके सामने खुलासा किया : 'मेरा अन्त मेरी शुरुआत में है और मेरी शुरुआत मेरे अन्त में।' तब मुहम्मद (उनको शान्ति मिले) को पता चला कि वह सारे दरवाज़े पूरी तरह बन्द हैं, सिवाय उनके जो अल्लाह की तरफ जाते हैं, कि अल्लाह के बारे में बोलकर विवरण नहीं दिया जा सकता, कि अल्लाह हर जगह, और हर चीज में मौजूद हैं।

यह वह रहस्य है जिसे कोई ज़बान बयान नहीं कर सकती, न कोई दरवाज़ा है जो खुलकर इसका रहस्योद्घाटन कर सके, न ही कोई जवाब इसको पारिभाषित कर सकता है। वह अपना ही मार्गदर्शक है और अपने ही ब्योरे का रब (ईश्वर) है। वह हर खूबसूरती की भी खूबसूरती है और वह बयान है जिसके ज़रिए सिर्फ और सिर्फ उसकी परिभाषा दी जा सकती है।[53]

कई सदियों तक, ब्रह्माण्ड एक हैरतअंगेज़ पहेली बना रहा। दार्शनिक, लेखक और कवियों ने अपने चारों ओर के अनन्त आकाश में अपनी फन्तासियों और कल्पनाओं की परछाईं देखी। पिछली सदी की शुरुआत में, अल्बर्ट आइंस्टीन ने ब्रह्माण्ड की तरफ एक नज़र डाली थी। उन्होंने लिखा :

मनुष्य एक सम्पूर्णता का हिस्सा है, जिसे हम ब्रह्माण्ड पुकारते हैं, एक हिस्सा जो समय और स्थान द्वारा सीमित है। वह खुद को, अपने विचारों और भावनाओं

को दूसरों से अलग अनुभव करता है, यह उसकी अपनी चेतना का एक प्रकाशीय भ्रम सरीखा है। यह भ्रम हम सबके लिए एक क़ैद की तरह है, जो हमें अपनी निजी इच्छाओं तक सीमित करती है और हमारे स्नेह को भी हमारे नज़दीकी लोगों तक ही बन्द रखती है। हमारा काम करुणा के हमारे वृत्त को अधिक विस्तारित करते हुए सभी प्राणियों और सारी प्रकृति की सुन्दरता को गले लगाने के लिए खुद को ऐसी क़ैद से मुक्त करना होना चाहिए।[54]

सन् 1930 में, आइंस्टीन ने एक प्रकार का मज़हब बनाया, जिसका नाम था, 'जिसका मुझे भरोसा है (वॉट आई बिलीव),' जिसके निष्कर्ष में उन्होंने लिखा है, 'यह महसूस करने के लिए कि हर चीज के पीछे, जिसे महसूस किया जा सकता है, कुछ न कुछ ऐसा है जिसे हमारा दिमाग पकड़ नहीं सकता, जिसकी सुन्दरता और जिसकी प्रतिष्ठा हम तक सिर्फ अप्रत्यक्ष रूप से ही पहुँचती है : यही धार्मिकता है। इस अर्थ में... मैं एक समर्पित धार्मिक व्यक्ति हूँ।' एक युवती ने उनसे पूछा कि क्या वह ईश्वर में भरोसा करते हैं, उन्होंने लिखा, 'हर कोई जो संजीदगी से विज्ञान की खोज में लगा हुआ है, वह इस बात से मुतमईन होता है कि एक शक्ति है जो ब्रह्माण्ड के नियमों में प्रकट होती है—एक शक्ति जो मनुष्य से काफी ताकतवर है।' यूनियन थियॉलॉजिकल सेमिनरी में धर्म और विज्ञान के रिश्तों पर एक चर्चा में, आइंस्टीन ने साफ किया : 'इस स्थिति को एक तस्वीर के ज़रिए अभिव्यक्त किया जा सकता है : धर्म के बिना विज्ञान लँगड़ा है, और बिना विज्ञान के धर्म अँधा है।'[55]

आइंस्टीन के इन विचारों ने—और अपने पूरे करिअर में ऐसे और भी विचार व्यक्त किये—इस जर्मन भौतिकीविद् को महान धर्मविज्ञानियों की कतार में लाकर खड़ा कर दिया। सन् 1968 में छपी किताब *इंट्रोडक्शन टू क्रिस्टिनिटी* में जोसेफ रेटज़िंगर, जो बाद में आकर पोप बेनेडिक्ट सोलहवें बने, ने ईश्वर के अस्तित्व के सम्बन्ध में एक सरल लेकिन मार्मिक तर्क पेश किया : प्रकृति की सार्वभौम बौद्धिकता, जो कि हर विज्ञान की पूर्व-मान्यता है, की विवेचना सिर्फ अनन्त और सृजनात्मक मस्तिष्क के ज़रिए की जा सकती है, जिसने विश्व के अस्तित्व के बारे में सोचा है। रेटज़िंगर ने कहा, कोई वैज्ञानिक अपना काम भी शुरू नहीं कर सकता, जब तक कि वह यह मान ले कि प्रकृति के जिस पहलू की वह जाँच कर रहा है वह ज्ञेय, सुगम और निर्मित है। लेकिन यह बुनियादी तिलस्मी कल्पना इस धारणा पर आधारित है कि वह अपने वैज्ञानिक कार्यों के आधार पर जो भी जान पाता है,

वह महज दोबारा सोचने का एक कार्य है और यह पहचानने का काम है कि ज्यादा महान मस्तिष्कों ने इसे पहले ही सोच लिया है।[56]

रैटज़िंगर ने धर्म और विज्ञान की आवश्यक समानताओं के पक्ष में तर्क दिए, चूँकि दोनों में ईश्वर के अस्तित्व और बौद्धिकता शामिल हैं। क्या ज्यादातर आधुनिक भौतिक विज्ञान पश्चिमी ईसाई विश्वविद्यालयों की उपज नहीं हैं? वास्तव में, आधुनिकता दमनकारी अँधकारवादी और अँधविश्वासी ईसाई धर्म से, और उसके ठीक विपरीत में, उपजी है। वस्तुनिष्ठ सत्य और धर्म की खोज कर रहे अनुशासनों में एक गहरा औचित्य है, जिसके मुताबिक, 'शुरू में सिर्फ शब्द थे।'[57]

उन्होंने आस्था के विषय में जो कुछ कहा अगर उसकी चर्चा की जाये तो शायद यह कहना ठीक होगा कि यह रैटज़िंगर की धर्म के आदिम और अँधविश्वासी रूपों के खिलाफ प्रतिक्रिया थी, ठीक वैसे ही जैसे सेंट पॉल थे, जब उन्होंने कहा कि जब हम आध्यात्मिकता की उम्र में आते हैं तो हमें बचकानी चीजें छोड़ देनी चाहिएँ। कोई व्यक्ति काम के किसी एक क्षेत्र में जीनियस हो सकता है, जबकि दूसरे क्षेत्र में वह नौसिखिया या शायद अयोग्य भी रह सकता है। कुछ लोग विवाद करेंगे कि आइंस्टीन पिछली सदी के सबसे महान सैद्धान्तिक भौतिकीविद् थे, लेकिन इस बात की कोई गारण्टी नहीं है कि धर्मशास्त्रों के भी सराहनीय हों। धार्मिक किताबों की कहानियाँ परिष्कृत व्याख्या की दरकार रखती हैं। शंकर, सेंट ऑगस्टीन और इमाम गज़ाली जैसे महान विद्वानों ने अपने धर्मशास्त्रों की प्रतीकात्मकता की जटिलता और बहुसंयोजकता की व्याख्या की है, और ऐसी साहित्यिक कलाकृतियाँ पेश की हैं, जो भ्रामक रूप से इसकी सरल सतह के नीचे अवस्थित होती हैं। अमेरिकी मानव विज्ञानी क्लिफोर्ड ग्रीट्ज ने कहा है :

धर्म प्रतीकों का एक तन्त्र है, जो मानव के शक्तिशाली, व्यापक और दीर्घायु मिज़ाज को स्थापित करने के लिए अस्तित्व की सामान्य व्यवस्था की संकल्पना पेश करता है और इन संकल्पनाओं को तथ्यात्मकता का ऐसा आभापूर्ण जामा पहनाता है कि मिज़ाज और मंशाएँ विशिष्ट रूप से यथार्थवादी लगने लगें।[58]

भारतीय संस्कृति के बारे में जो बात सबसे अधिक अनूठी है वह है जिसके ज़रिए पवित्र, आध्यात्मिक और रोज़ाना के कामकाज़ दिलचस्प तरीके से एक दूसरे से जुड़े हुए हैं।

19

मन सभी पदार्थों की कोख है

'जो मन स्थिर है, उसके प्रति पूर्ण ब्रह्माण्ड समर्पित हो जाता है।'

—लाओत्से

प्राचीन चीन के दार्शनिक एवं कवि

यदि आप असीमित संसाधनों और शक्ति के साथ भगवान होते तो आप अपने बच्चों के लिए कैसी दुनिया बनाने के बारे में सोचते? निश्चित तौर पर आप ऐसी दुनिया का निर्माण करना चाहते, जिस पर आप अपनी सतर्क नजर रख सकते; एक ऐसी दुनिया जहाँ आप अपने बच्चों का रोना सुन सकते और जरूरत होने पर उनकी मदद कर सकते। आप अपने बच्चों को दूर, नजरों से दूर और दिल से दूर नहीं रखना चाहेंगे, क्योंकि पहला, आप उन्हें अपने हाथों के करीब चाहेंगे और दूसरा, कोई और नहीं है जिनकी देखभाल में आप उन्हें रख सकते हैं या सौंपेंगे।

या फिर आप उन्हें स्वतन्त्र इच्छा के साथ सशक्त बनाना चाहते और उन्हें दूर भेजते ताकि उनके भविष्य के लिए आपकी योजनाओं को किसी भी तरीके से प्रभावित किये बिना वह अपनी इच्छा और फैसले का इस्तेमाल कर सकें। क्या आप एक ऐसी दुनिया बनायेंगे जहाँ वह जीवन के आनन्द और पीड़ा का अनुभव कर सकें और एक चरित्र की स्वतन्त्रता, परिपक्वता और मजबूती में बड़े हो सकें; जहाँ वह सीख सकें कि प्यार करने और प्यार होने का क्या मतलब है, दर्द देने और चोट लगने का क्या मतलब होता है—और इन विकल्पों के बीच चुनाव कर सकें।

या फिर आप एक ऐसी दुनिया बनाना चाहते, जहाँ आपके बच्चे, जो भी हो उससे फर्क नहीं पड़ता, अन्तत: सुरक्षित रह पाते? इसे पूरा करने के लिए, आप

अपने बच्चों के दिलचस्प अनुभव वाली दुनिया में जाने देने के बारे में सोच सकते हैं, कुछ हद तक कम्प्यूटर की दुनिया या इंटरएक्टिव वीडियो गेम जैसे, जिसमें आप विभिन्न स्तरों में खेलते रहें और हारने के बाद आप हर बार वापस आ सकते हैं।

यदि आपका जवाब तीसरा विकल्प है, तो आप माया की अवधारणा को सही तरीके से समझ गये हैं। पुराणों और वैष्णव धर्मशास्त्र में माया को विष्णु, परमेश्वर के एक प्रकट रूप, की शक्तियों में से एक के रूप में वर्णित किया गया है। यह नींद के साथ जुड़ गया है; नींद विष्णु की माया है जो विश्व को घेरे हुए है। संगमकाल के तमिल साहित्य में कृष्ण को अन्य नाम जैसे मल, तिरुमल, पेरुमल और मायावन के साथ मायोन के रूप में पाया जाता है। तमिल के उत्कृष्ट साहित्यों में मायोल शब्द का स्त्री रूप दुर्गा है; वह विष्णु की असीमित रचनात्मक ऊर्जा और महान शक्तियों से सम्पन्न हैं और इसलिए विष्णु-माया हैं। महामाया के रूप में, वह युवा बच्चों को ज्ञान से पूर्ण करती हैं, व्यक्तिगत अहं और उस पर स्वामित्व के विचार देती हैं; उसे स्वतन्त्रता से प्रदर्शन करने देती हैं और इस व्यावहारिक दुनिया के आनन्द और दर्द में शामिल करती हैं।

यह व्यावहारिक दुनिया कठोर वस्तुओं और लोगों से बनी है। विभिन्न नामों और रूपों पर एक झूठी वास्तविकता आरोपित की गयी है। एक जाल तैयार किया गया है और हम यह भूलकर कि वास्तव में यह असत्य है, उसमें फँसे हुए हैं। यह संसार जिसे हम मानते हैं कि हम देखते हैं, माया या कम्प्यूटर की दुनिया, वीडियो गेम जैसा एक स्वरूप है। इसमें कुछ भी स्थायी वास्तविकता नहीं है—यह केवल एक अस्थायी प्रदर्शनी है। हमारा शरीर, जो उन्हीं पाँच तत्वों से बना है वह भी नश्वर है।

लेकिन हम पूर्णत: वह शरीर नहीं हैं। हमारी वास्तविकता कुछ ज्यादा बड़ी है, क्योंकि असल में हम उस दिव्य चेतना का हिस्सा हैं जो हमारे नश्वर शरीरों में 'जीवित' है। यह जीवन/साँस अविनाशी, शाश्वत और शरीर के उन बदलावों से अछूता है, जो समय के साथ इस दुनिया में होते रहते हैं।

जिस क्षण हम खुद को सम्बन्धित निर्धारित स्थान और समय से अलग करते हैं, हम खुद को अपनी जड़ों से अलग करते हैं और इस तरह खुद को कष्टों में डालते हैं। हम समय और स्थान के निर्माता हैं। जब हम धारणा के अनुकरण के माध्यम से जाग्रत जागरूकता हेतु ऊर्जा लगाते हैं तो हम अलग वस्तुओं का निर्माण करते हैं

जो मापे गये सातत्य के माध्यम से स्थान में मौजूद है, जो समय कहलाता है। समय और स्थान का निर्माण कर हमने खुद के लिए अलगाव तैयार किया है।[59]

हालाँकि मानव इन्द्रियों की समझ की शक्तियाँ तीन स्थानिक आयामों तक सीमित हैं लेकिन हमारे ब्रह्माण्ड का क्षेत्र तीन आयामों तक सीमित नहीं है। हमारे ब्रह्माण्ड के भीतर हो रही कई प्राकृतिक घटनाएँ इन त्रिआयामी दृश्यों से बढ़कर हैं। इसलिए, मस्तिष्क और जागरूकता की कार्य प्रणालियों को मानव कोशिकाओं में रासायनिक एवं विद्युतीय ऊर्जा के रूप में नहीं समझा जा सकता है। जागरूकता को मानव मस्तिष्क के भीतर सीमित नहीं किया गया है। तो हम जागरूकता को कैसे समझें?

जर्मन सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञानी मैक्स प्लांक पहले व्यक्ति थे जिन्होंने पाया कि इलेक्ट्रॉन देखे जाने पर अलग तरीके से व्यवहार करते हैं। जब इलेक्ट्रॉन का अवलोकन नहीं किया जा रहा है, तो इलेक्ट्रॉन तरंग की तरह व्यवहार करते हैं, लेकिन जब इस परीक्षण में एक अवलोकन उपकरण लगाया गया तो इलेक्ट्रॉन ने एक कण की तरह व्यवहार किया। मैक्स प्लांक ने परिकल्पना की कि इलेक्ट्रॉन अपने व्यवहार या वास्तविकता को—इलेक्ट्रॉन को अवलोकित किया जा रहा है या नहीं—इस पर निर्भर कर बदलेगा : यह तभी होता है यदि इलेक्ट्रॉन को पता हो कि उसे देखा जा रहा है। यह जागरूकता पूरी तरह नहीं भी हो तो मानवीय जागरूकता से बहुत मिलती-जुलती है और समान चेतना से जोड़ी जा सकती है। हम वही देखते हैं जो हम देखना चाहते हैं!

मैक्स प्लांक क्वॉन्टम सिद्धान्त के जन्मदाता के रूप में सुप्रसिद्ध हैं जिसके लिए सन् 1918 में उन्होंने भौतिकी का नोबल पुरस्कार जीता। जिस प्रकार अल्बर्ट आइंस्टीन के सापेक्षता के सिद्धान्त से स्थान और समय की समझ में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया, उसी प्रकार क्वॉन्टम सिद्धान्त ने परमाणु और उप-परमाणविक प्रक्रियाओं की मानवीय समझ में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये। इन दोनों ने मिलकर बीसवीं सदी के भौतिक विज्ञान के मूलभूत सिद्धान्तों का गठन किया। प्लांक एक पारम्परिक, बुद्धिजीवी परिवार से आये थे। उनके परदादा और दादा दोनों सैद्धान्तिक प्रोफेसर थे : उनके पिता कानून के प्रोफेसर थे। यह अनुश्रुति है कि जब प्लांक के भौतिक विज्ञान के प्रोफेसर ने उन्हें भौतिक विज्ञान से अलग अध्ययन करने की सलाह देते हुए कहा 'इस क्षेत्र में लगभग सभी चीजों की खोज हो गयी है

और वह सभी जो बाकी है वह कुछ छेद भरने जैसे हैं', प्लांक ने जवाब दिया कि वह नई चीज की खोज नहीं करना चाहते, बल्कि केवल इस क्षेत्र की ज्ञात मूलभूत बातों को समझना चाहते हैं।[60]

प्लांक को कल्पना और विश्वास के एक व्यक्ति के रूप में वैज्ञानिक माना गया : 'विश्वास' को 'कार्यरत परिकल्पना होने' जैसा ही समझाया गया। उदाहरण के लिए, कारण-कार्य सिद्धान्त सही या गलत नहीं है—यह विश्वास का कार्य है। उन्होंने यह भी कहा : धर्म और विज्ञान दोनों को भगवान में विश्वास रखने की जरूरत है। आस्तिकों के लिए, भगवान शुरुआत में हैं और भौतिक विज्ञानियों के लिए भगवान सब बातों के अन्त में हैं... अगले के लिए वह नींव हैं और बाद वाले के लिए प्रत्येक सामान्यीकृत दुनिया को देखने के इमारत के ताज हैं।[61]

आइंस्टीन के सापेक्षता के सिद्धान्त की तरह क्वॉन्टम भौतिकी ब्रह्माण्ड को ऊर्जा के मात्र एक विशाल क्षेत्र के रूप में प्रकट करता है जिसमें सामग्री केवल ऊर्जा का 'धीमा पड़ता' रूप है। बाद में, क्वॉन्टम भौतिकी ने बताया कि सामग्री या ऊर्जा निश्चित स्थानों में किसी भी निश्चितता के साथ मौजूद नहीं होती है बल्कि मौजूद होने की 'प्रवृत्तियाँ' प्रदर्शित करती हैं।

बल्कि यह धारणा अधिक लुभावनी है कि ब्रह्माण्ड के अस्तित्व के लिए पर्यवेक्षक का अस्तित्व आवश्यक है—'पर्यवेक्षक प्रभाव' के रूप में जानी जाती एक अवधारणा—संकेत करती है कि यह ब्रह्माण्ड चेतना का एक उत्पाद है : भगवान का मन मात्र।

सबसे बड़ी चीज जो आध्यात्मिक विचारों वाले व्यक्तियों को मैक्स प्लांक और उनकी क्वॉन्टम भौतिकी ने दी थी वो यह दर्शाना था कि संसार—जैसा कि बुद्धि हमें बताती है और जैसा कि न्यूटोनियन वैज्ञानिकों ने हमें बताया—एक ठोस वस्तु नहीं है। वैज्ञानिक पदार्थ के केन्द्र तक गये और उन्होंने जो देखा उससे चकित हो गये। जैसा हमारी समझ हमसे कहती है वैसा पदार्थ बिल्कुल भी ठोस नहीं था बल्कि केवल ऊर्जा गति में थी।

वास्तव में पदार्थ सूक्ष्म कणों का बना है जिनका न ही कोई डिजाइन या आकार और न ही वह किसी खास क्रम का पालन करते हैं। कभी-कभी वह तरंगों की तरह व्यवहार करते हैं और कभी-कभी कणों की तरह। और कभी-कभी वह

एक ही समय में कई चीजों के साथ-साथ दोनों की तरह व्यवहार करते हैं। अत: इन भौतिक वैज्ञानिकों ने माया को वैज्ञानिक तरीके से सिद्ध किया।[62]

अपने शानदार वैज्ञानिक कैरियर के अन्त तक प्लांक ने भी मुक्त इच्छा की समस्या को बहुत नजदीक से देखा और मुक्त इच्छा के विरुद्ध मानक तर्क में नियतिवाद और अलटप्पू मौके के बीच तार्किक विरोध का एक अपूर्ण वर्णन दिया। उन्होंने कहा 'हमारी चेतना हमसे कहती है कि हमारी इच्छाएँ मुक्त हैं। और चेतना से मिली जानकारी समझ की हमारी शक्तियों का अन्तिम और सर्वोच्च प्रयोग होता है।' चलिए एक पल के लिए पूछें कि क्या मानव की इच्छा मुक्त है या क्या यह एक सख्त कारण सम्बन्धी तरीके में बँधी है। यदि हम मानते हैं कि सख्त गतिशील करणीय का सिद्धान्त जैसा कि पूरे ब्रह्माण्ड में मौजूद है तो हम तार्किक तरीके से मानव इच्छा को इसके संचालन से कैसे अलग कर सकते हैं? जब हम कहते हैं कि मानव इच्छा मुक्त है तो उससे हमारा क्या मतलब है? चलिए हम इसे इस तरीके से रखें : जब निर्णय लेने का प्रश्न आता है तो आदमी को हमेशा कम-से-कम दो विकल्पों के बीच चुनाव करने का मौका दिया जाता है। कारण-कार्य सिद्धान्त उसके लिए कार्य करने की कोई रेखा नहीं खींच सकता है और उसकी करतूतों के लिए नैतिक सिद्धान्त के नियम से उसे छूट नहीं दे सकता। अन्य कानून से उन पर आयी नैतिक जिम्मेदारी की स्वीकृति के लिए जिसका कारण-कार्य सिद्धान्त से कोई लेना-देना नहीं है। उसकी चेतना नैतिक जिम्मेदारी के उस कानून की अदालत है। और जब वह सुनना चाहेगा तो हमेशा अपने उत्साह और प्रतिबन्धों को सुनेगा।

यदि कोई इस दावे के ज़रिए कि मानवीय कार्यवाही प्रकृति के एक निष्ठुर कानून का निश्चित परिणाम है, अप्रिय नैतिक दायित्वों से छुटकारा पाने का प्रयास करता है, तो यह आत्म-भ्रम का एक ख़तरनाक काम है। जो इंसान भाग्य द्वारा पूर्व निर्धारित के रूप में अपना भविष्य देखता है या एक राष्ट्र जो इस भविष्यवाणी में विश्वास रखता है जो बताता है कि उसका पतन प्रकृति के नियम द्वारा अनवरत रूप से दिया गया है, केवल संघर्ष करने और उससे जीतने की इच्छा शक्ति की कमी को दर्शाता है।

दूसरी चीज जो मैक्स प्लांक ने खोजी वो थी कि अलगाव में सूक्ष्म अणुओं का कोई मतलब नहीं है बल्कि केवल अन्य चीजों के साथ सम्बन्ध में है। अपने मौलिक स्तर पर, जो क्वॉन्टम स्तर होता है, उन्होंने देखा कि पदार्थ को सुगम टुकड़ों

में नहीं काटा जा सकता है क्योंकि वह पूरी तरह अविभाज्य थे। यदि हम ब्रह्माण्ड को समझना चाहते हैं तो हमें इसे परस्पर सम्बन्धित गतिशील बहाव के रूप में देखना होगा। मानव जाति ऊर्जा के क्षेत्र में ऊर्जा का एक संघीकरण होता है, जो इस ब्रह्माण्ड में हर अन्य चीज से जुड़ा है। यह ऊर्जा क्षेत्र हमारा केन्द्रीय इंजन है। हम कभी भी इस ब्रह्माण्ड के अन्य पहलुओं से बिछड़ नहीं सकते हैं क्योंकि हम सभी मौलिक रूप से इस क्षेत्र से जुड़े हुए हैं।[63]

चूँकि हम इस ब्रह्माण्ड में, हर चीज और हर जीव से पूरी तरह जुड़े हुए हैं, ऐसे में दूसरों के साथ क्या होता है यह सोचे बिना खुद की बेहतरी के प्रयास करना मूर्खतापूर्ण ही है। मानवीय पीड़ा इस तथ्य से उपजी है; कि हमने खुद को अपनी जड़ों से काट लिया है और खुद को अलगाव की जिन्दगी दी है। प्रकृति ने हमें ऐसा होने के लिए नहीं बनाया है। इसलिए आधुनिक भौतिकी ने हमें दुनिया में हमारी सही जगह की पहचान करायी है। जैसा हमारे धर्मग्रन्थों ने हमेशा हमें बताया है, मानवीय चेतना इस ब्रह्माण्ड को बनाने में एक महत्वपूर्ण कारक है। यदि हम उन्हें देखते हैं तो सूक्ष्म कण अपने निरन्तर अनियमित चाल से शान्त हो जाते हैं और ठोस आकार ले लेते हैं। क्वॉन्टम स्तर पर, मानव जाति सहित सभी जीवित प्राणी क्वॉन्टम ऊर्जा के पैकेट हैं जो ऊर्जा के एक अटूट क्षेत्र से सूचनाओं का निरन्तर आदान-प्रदान करते हैं। प्रमुख स्वामीजी ऊर्जा के इस क्षेत्र को 'चित्त' कहते हैं। जीवन के सभी पहलुओं के बारे में जानकारी क्वॉन्टम स्तर पर सूचना के आदान-प्रदान के माध्यम से प्रसारित होती है।

बचपन में, मैंने शाम को कई घण्टों तक समुद्र के ऊपर सुन्दर संरचनाओं में पक्षियों को मँडराते देखा है। वह आसमान की ओर अपने रास्ते में उड़ते और उसके बाद मानो किसी छिपे संकेत पर अचानक वह सभी किसी दूसरी दिशा में घूम जाते। यही घटना मछलियों में देखी जा सकती है। मुझे लगा कि इन पक्षियों और मछलियों के पास सम्पर्क के लिए किसी रडार या किसी प्रकार के ध्वनि संकेत हैं, जिन्हें हम नहीं सुन सकते। लेकिन अब क्वॉन्टम के क्षेत्र में परीक्षणों ने साबित कर दिया है कि वह सभी इस क्षेत्र से सम्पर्क में रहते हैं और इसी से अपने आदेश प्राप्त करते हैं।

हमारे दिमाग के काम जैसे कि सोचना, महसूस करना वगैरह क्वॉन्टम क्षेत्र से जानकारी प्राप्त करते हैं जो हमारे शरीरों और मस्तिष्कों में साथ-साथ स्पन्दित

होते रहते हैं। सभी मानव जाति के शारीरिक, मानसिक और व्यवहारिक बदलाव, चाहे वह जहाँ भी हों, लगभग चौबीस घण्टे के चक्र का अनुसरण करते हैं। वह अपने वातावरण में प्रकाश और अँधेरे के अनुसार सोते और जागते हैं। असल में पशुओं, पौधों और कई छोटे सूक्ष्म जीवों सहित अधिकतर जीवित प्राणियों में ऐसी ही दैनिक लय पायी जाती है। हम ब्रंह्माण्ड को समझते हैं। जो हर साँस हम लेते हैं वह लौकिक साँस का हिस्सा है और प्रत्येक साँस जो हम बाहर निकालते है वह लौकिक जीवन को हमारा योगदान है। 'साँस'—जीवन शक्ति—सभी चीजों और प्रत्येक में समान है और साथ-ही-साथ सभी जगह फैली हुई है। हमारा जीवन तभी सही हो सकता है जब हम ब्रह्माण्ड के साथ इस महान आदान-प्रदान में हिस्सा लें। मैक्स प्लांक ने कहा :

> एक ऐसे व्यक्ति की हैसियत से जिसने स्पष्ट विज्ञान और पदार्थ के अध्ययन के लिए, अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित किया, परमाणुओं के बारे में अपने अनुसन्धान के परिणामस्वरूप मैं आपको इतना कह सकता हूँ: ऐसा कोई पदार्थ नहीं है। सभी पदार्थ केवल एक शक्ति से उत्पन्न होते और अस्तित्व में रहते हैं। जो कम्पन हेतु परमाणु के कणों को प्रवृत्त करता है और परमाणु के इस सबसे सूक्ष्म सौरमण्डल को एक साथ बनाये रखता है। हमें इस शक्ति के पीछे सचेत और बुद्धिमान दिमाग की मौजूदगी को मानना होगा। यह दिमाग सभी पदार्थों की कोख है।

20

भौतिक और आध्यात्मिक रूप से विकसित होना

'इस बेशकीमती धरती पर हमारे सफर का मकसद ही अपने व्यक्तित्व को आत्मा से एकाकार करना है। यह समरसता, सहयोग, दूसरों के साथ साझा करने और जीवन के प्रति श्रद्धा के लिए है। यह आध्यात्मिक विकास के लिए है। यह हमारे विकास का नया रास्ता है।'

—गैरी जुकाव

लेखक एवं आध्यात्मिक शिक्षक

मैंने अपने जीवनकाल में डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड (डीएनए) की खोज और मानव जीनोम की व्याख्या होते देखा। और मुमकिन है कि आगे आने वाले दशक में कम्प्यूटर और आनुवंशिकी का एक दूसरे में विलय हो जायेगा। हो सकता है ऐसा जैविक पदार्थ तलाश लिया जाये जो सेमी-कण्डक्टर की तरह काम कर सके और सचमुच जैविक-कम्प्यूटर की धारणा सच हो जाये। यह तो आजकल स्कूलों में ही पढ़ा दिया जाता है कि हमारे जीनोम में ही हमारे जैविक विकास की कहानी है—जो डीएनए पर लिखी होती है—और इसकी भाषा आणुविक आनुवंशिकी है—और यह कहानी कभी ग़लत नहीं होती। मिसाल के तौर पर एक डॉक्टर मरीज़ को बता सकता है कि भरी हुई बन्दूक पहले से ही उसकी जीन में मौज़ूद है, उसकी जीवनशैली बस उस बन्दूक का ट्रिगर दबाने का काम करेगी। जन्म से सम्पत्ति और सौभाग्य के विरासत में मिलने के साथ एक निश्चित मृत्यु तक तय करने वाली अनुवांशिकी की कहानी बहुत रोचक है।[64]

आधुनिक आनुवंशिकी के विज्ञान की नींव रखने वाला व्यक्ति कोई वैज्ञानिक नहीं था, अपने समय का विश्वविख्यात वैज्ञानिक होना तो दूर की बात है। यहाँ तक कि वह आधुनिक भी नहीं था। उसका जन्म संन् 1822 में उस स्थान पर हुआ था जो अब चेक रिपब्लिक का एक हिस्सा है। ऑगस्टेनियन पादरी जॉर्ज मेण्डल पहले ऐसे व्यक्ति थे, जिसने सजीवों की क्रमवार पीढ़ियों में समानता का पता लगाया। मेण्डल कम उम्र में ही एक मोनेस्ट्री में भरती हो गये थे और यह हाई-स्कूल के छात्रों को प्राकृतिक विज्ञान पढ़ाया करते थे। मेण्डल का शोध के प्रति आकर्षण उनके प्रकृति-प्रेम पर आधारित था। उनकी न सिर्फ़ पेड़-पौधों में दिलचस्पी थी, बल्कि उन्हें मौसम-विज्ञान और विकास के सिद्धान्तों में भी रुचि थी। मेण्डल अक्सर सोचा करते कि पौधों में असामान्य लक्षण कहाँ से आ जाते हैं? एक बार जब वह हमेशा की तरह मोनेस्ट्री के आसपास टहलने गये तो उन्होंने एक सजावटी पौधे की असामान्य-सी नस्ल देखी।

उन्होंने उस पौधे को वहाँ से उठाकर सामान्य नस्ल के पौधे के पास उगाया। उन्होंने उनकी सन्ततियों को भी अगल-बगल रोपा ताकि वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जाने वाले गुणों का मिलान कर सकें। उन्होंने देखा कि नयी पीढ़ी के पौधों में मूल पौधे के सभी ज़रूरी गुण थे, अर्थात् वातावरण का उन पर कोई प्रभाव नहीं था। इस सामान्य अवलोकन ने आनुवंशिकी की अवधारणा को जन्म दिया।[65]

आनुवंशिकी का पहला नियम है, अलगाव का नियम और यह पूरी तरह मेण्डल द्वारा किये गये पौधों के प्रजनन के अवलोकन पर आधारित है। यह कहता है कि जीनों के जोड़े होते हैं और जब कोशिका-विभाजन होता है तब यह जीनों का जोड़ा भी विभाजित हो जाता है। हर अण्डाणु या शुक्राणु के दोनों हिस्सों में जीन-युग्म मौजूद होता है।

जब विकासवादी जैव-वैज्ञानिक थॉमस हण्ट मॉर्गन ने वंशानुक्रम का क्रोमोज़ोम सिद्धान्त 1915 में प्रतिपादित किया, तो इस सिद्धान्त को मेण्डल के सिद्धान्तों के साथ मिलाया गया और इस तरह दोनों सिद्धान्त मिलकर शास्त्रीय आनुवंशिकी के मूल पाठ बन गये।

मॉर्गन ने 1933 में आनुवंशिकता में क्रोमोज़ोम की भूमिका पर प्रकाश डालने से सम्बन्धित खोज के लिए नोबेल पुरस्कार जीता था। जॉर्ज मेण्डल की जिन्दगी दिखाती है कि एक पूरी तरह समर्पित धार्मिक व्यक्ति, जिसने आस्था के लिए

अपनी पूरी जिन्दगी समर्पित कर दी थी, वह भी विज्ञान में दिलचस्पी ले सकता है और वैज्ञानिक खोजों में अगाध ढंग से अपना योगदान दे सकता है। हालाँकि यह भी माना जा सकता है कि मेण्डल एक विद्वान व्यक्ति थे, उनमें ब्योरे पाने की खासी लगन थी, और स्वभाव से वह धैर्यवान और दृढ़-निश्चयी थे, साथ ही उनके भीतर एक उदार हृदय भी था। वह दूसरों के प्रति अपनी सहानुभूति से बहुत अधिक प्रभावित हो जाते थे।

लेकिन शुरू में वैज्ञानिक समाज में मेण्डल की खोज को नकार दिया गया था, लेकिन अब उनके निधन के बाद उनके सिद्धान्त को सभी मानते हैं। उनके अपने ही जीवनकाल में, बहुत सारे जीव-वैज्ञानिक इस सिद्धान्त को मानते थे कि अगली पीढ़ी में जाने वाले गुण विरासत के सभी गुणों का मिश्रण होते हैं, जिसमें हर जनक के गुण आपस में औसत हो जाते हैं। ऐसी परिघटनाओं की मिसालों की अब बहु-जीनीयता के मात्रात्मक प्रभाव के रूप में व्याख्या की जाती है। जो लोग विज्ञान के इतिहास में दिलचस्पी रखते हैं, उन्हें यह बताया जाना चाहिए—और दृढ़ता से बताया जाना चाहिए—कि आनुवंशिकी के नियम एक सृजनवादी द्वारा खोजे गये हैं, जिसने उत्पत्ति के बारे में यही तथ्य समझा था, 'उन्हें आगे लाने दो... उनके जैसों के बाद।'[66]

साल 2007 में, अपने अमेरिकी दौरे के दौरान मुझे अमेरिकी विकासवादी जीवविज्ञानी ब्रूस हेरॉल्ड लिप्टन के इस विचार के बारे में पता चला कि जीन और डीएनए को किसी व्यक्ति की आस्थाओं के लिहाज़ से नियोजित किया जा सकता है। मुझे उनकी किताब द *बायोलजी ऑफ बिलीफ* भेंट में दी गयी थी।[67] हाल-फिलहाल तक पारम्परिक विज्ञान यह मानता रहा है कि जीन जीवन को नियन्त्रित करते हैं, यह ऐसी संकल्पना है जिसे जीनेटिक नियतिवाद कहा जाता है। ब्रूस लिप्टन ने अपनी किताब और शोध के ज़रिए रोमांचक एपि-जेनेटिक्स के नये क्षेत्र को बढ़ावा दिया है, जिसके ज़रिए एक बिलकुल ही अलहदा सच को उजागर करता है। जीन, जीवन को नियन्त्रित नहीं करते। बल्कि यह नियन्त्रण वातावरण का होता है, खासकर, वातावरण के बारे में हमारा नज़रिया जो हमारे जीन के क्रियाकलाप को नियन्त्रित करता है। आखिर में, यह पदार्थों पर मनो-मस्तिष्क की बढ़त का एक सीधा-सादा मामला बन जाता है, जो हमारी जिन्दगियों की किस्मत को नियन्त्रित करता है।

पूरे चालीस साल में ब्रूस लिप्टन ने क्लोन्ड स्टेम कोशिकाओं पर शोध किया, इसने एक ऐसे तन्त्र के बारे में खुलासा किया जिसके ज़रिए मस्तिष्क में यह धारणा बन जाती है कि वह हमारे शरीर की 500 अरब जीवित कोशिकाओं के जीवन और भाग्य को नियन्त्रित करने लगता है। विचार प्रक्रिया की वजह से दिमाग़ ऐसी सूचनाएँ जारी करता है जिसमें न्यूरो-केमिकल और कम्पन संकेत होते हैं और जो कोशिकाओं तक पहुँचती हैं। दिमाग़ द्वारा भेजे गये संकेत कोशिकाओं में जैविक प्रतिक्रियाओं में बदल जाते हैं, यह काम कोशिका की झिल्लियों में प्रोटीन से बनी 'धारणा' स्विचों की क्रिया से होता है। झिल्लियों के प्रोटीन, जो ऐसे वातावरणीय संकेतों को पढ़ते और उसी के मुताबिक प्रतिक्रिया करते हैं, उन्हें रिसेप्टर्स कहा जाता है।

ब्रूस लिप्टन अपनी किताब द *बायोलजी ऑफ बिलीफ* में लिखते हैं :

> झिल्लियों के रिसेप्टर्स के अध्ययन से ही मैं वह बात जान पाया, जिसने मेरे जीवन में क्रान्तिकारी बदलाव ला दिये। हालाँकि, मैं विज्ञान को आध्यात्मिक सत्य मानने के एक विकल्प के तौर पर देखता हूँ, लेकिन मेरे स्टेम सेल कल्चर को यह सीख मिली है कि जीवन कोई विज्ञान या आध्यात्मिकता का मसला नहीं है; यह विज्ञान और आध्यात्मिकता का मिश्रण है।
>
> हर विचार, जो हम सोचते हैं, हर गतिविधि, जो हम करते हैं, हर चीज, जो हमारे चारों ओर है, असल में वह ऊर्जा है। इसलिए, विचार और नीयत उस वक़्त बहुत ताकतवर होते हैं जब वह हमारे लिए यथार्थ रूप में परिणत होते हैं। ऐसे लोग, जिन्होंने इस वेबसाइट पर मेरे शोध को लगातार देखा है, वह जानते हैं कि बहुत-सी बुरी शक्तियाँ हैं जो हमें नकारात्मकता की तरफ धकेलने की कोशिश करती हैं।

जब मैंने इन विचारों की प्रमुख स्वामीजी के जीवन और कामों से तुलना की, तो मुझे महसूस हुआ कि 'जागने' की प्रक्रिया, वास्तव में बहुत निजी अनुभव है। एक गुरु आपको ऊर्जा के साथ ट्रिगर करता है, जैसे कि ब्रूस लिप्टन ने ऊर्जा को समझा है। और जब यह जागृति आती है तो यह अपरिहार्य और प्राकृतिक ही है कि जनक अपने जीन अपने बच्चों को दें, ठीक उसी तरीके से, जैसे ग्रेगर मेण्डल ने बताया है। एक बार जब हम अपने अस्तित्व के बारे में जागरूक हो जाते हैं—और वही हमारी और पूरी दुनिया की असली प्रकृति है कि हम वही चीजें वास्तविक

मानते हैं जो हमें बतायी गयी हैं—तो पीछे लौटने का फिर कोई सवाल ही नहीं होता।

कहने का यह मतलब कतई नहीं है कि हमें इसके बाद सधुक्कड़ी जीवन अपना लेना चाहिए। एक आदमी इसके बाद भी इस दुनिया में एक जागरूक पेशेवर की तरह जिन्दगी बिता सकता है। बीएपीएस के ज़रिए, यह काम जीवन के हर क्षेत्र में किया जा रहा है। चाहे वह कोई कॉरपोरेट कर्मचारी हो, जो मानवता के खिलाफ किये जा रहे घपलों पर से परदा उठाए और उस संजाल से बाहर निकल आये, या फिर कोई सामान्य करदाता जो यह मान लेता है कि वह सैन्य-औद्योगिक मशीनीकृत दुनिया के नियन्त्रण और दबदबे में अपना योगदान दे रहा है, यह संज्ञान भी जागरूक होना ही है।

यह बेहद महत्वपूर्ण है कि इंसानों का जन्मजात आध्यात्मिक स्वभाव, चाहे इसे हम सामाजिक स्वतन्त्रता कहें या जो हम हैं उसे सृजित करने और उसे व्यक्त करने की आज़ादी, वह अभी तक दबाई नहीं जा सकी है। अच्छे लोगों के लिए यह जानना बेहद ज़रूरी है कि क्या वह जानबूझकर या अनजाने ही बुरे लोगों, शक्तियों या कार्यक्रमों के लिए काम कर रहे हैं। इससे उन्हें हमारी मौजूदा व्यवस्था को बदलने और सुधारने में मदद मिलेगी। मैं स्वामीनारायण साधुओं और भक्तों को देखता हूँ, तो मुझे लगता है कि अच्छे लोग बेहद महत्वपूर्ण सामाजिक कार्यक्रमों में शानदार सेवा का काम कर रहे हैं, और उन्हें भरोसा है कि यह सब कुछ रचनात्मक तरीके से बदलेगा।

चुनांचे, यह बेहद ज़रूरी है कि इन बेहद ताकतवर, मक्कार और विध्वंसकारी शक्तियों और व्यवस्था से निपटा जाये। इनकी कोशिश रहती है कि इंसानियत को खराब सेहत, लचर शिक्षा, नासमझ किस्म के मनोरंजन, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के जरिये, पथभ्रष्ट हिंसा और सेक्सोन्मुख मनोरंजन के ज़रिए झुकाकर कमजोर कर दिया जाये और उसे गौण कर दिया जाये। जब मैं जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से आये हुए लोगों को स्वामीनारायण मन्दिरों में सेवा करते हुए देखता हूँ, तो मुझे इनमें एक तात्विक जागरूकता नज़र आती है और साथ ही मुझे इस भ्रष्ट भौतिक दुनिया के प्रति एक सजग प्रतिक्रिया भी दिखती है। यह जागरूकता मौजूदा ज़हरीली सामाजिक और भौतिक दुनिया में उन्हें ऊपर की ओर उठाती है।

एक नया आध्यात्मिक दृष्टिकोण पाने की खूबसूरती यही है कि इससे हमारे वातावरण में मौजूद नकारात्मक प्रभाव उनके सही स्थानों तक सीमित हो जाते हैं। हम अपनी सही और अजेय भावनाओं को समझने के नये तरीके पा जाते हैं, जो हमें मौजूदा चुनौतियों के स्थान पर असीम शान्ति और आत्मविश्वास देते हैं। यह कहा जाता है कि ज्यादातर लोग सिर्फ असली बदलावों को तभी गले लगाते हैं, जब बचे-खुचे का दर्द उन्हें ऐसा करने पर मजबूर कर देता है, या किस्मत उनके सामने कोई और विकल्प नहीं छोड़ती। अपनी किताब, *टारगेट 3 बिलियन* में मैंने संकेत किया है कि एक तरफ तो विकसित दुनिया में लोग विलासिता के आदी हैं, बाकी की दुनिया का बड़ा हिस्सा एक बड़े बदलाव के लिए छटपटा रहा है, वजह : यथास्थिति का दर्द असह्य हो रहा है।

हमारे आन्तरिक जीवन की यथास्थिति वास्तव में पलायनवाद का एक रूप हो सकता है। हम लोग चीजों को गहराई से महसूस करने और कला की आश्चर्यजनक कृतियाँ तैयार करने की एक हैरतअंगेज़ बुद्धिमत्ता के साथ पैदा हुए हैं। फिर भी, विडम्बना है कि वही चीज़ें जो हमें इंसान बनाती हैं वही हमें इतना कमजोर करती हैं कि हम स्वयं और उस ब्रह्माण्ड के साथ अपना सम्पर्क ही खो दें, जिसमें हम रहते हैं। हमारा मस्तिष्क उस ब्रह्माण्ड के भीतर भी एक स्थानापन्न ब्रह्माण्ड बना लेता है जिसमें हमारा अस्तित्व है, और हम गलती से परछाईयों के इस ब्रह्माण्ड में ही खुद पर अपना ध्यान केन्द्रित कर देते है : हमें क्या पसन्द है क्या नापसन्द; हमें क्या महसूस होता है; हम किसे अच्छा और बुरा मानते हैं, वगैरह।

यह सारी चीज़ें हमें निजी पहचान देती हैं। यह हमें सोचने का मौका देती हैं कि हम लोग किसी न किसी तरह अनूठे, स्वतन्त्र और अपने आसपास के हर किसी से अलहदा हैं। हमारी सोच, हमारे विचार, और मान्यताएँ हमें उस रूप में ढालते हैं, जैसा हम एक इंसान होने के तौर पर अपने बारे में कल्पना करते हैं। और फिर वहाँ से हम अपना जीवन जीते हैं। अकेले और पृथक होकर हम अपने सेनापति खुद बन जाते हैं, जहाँ से हम अपने सीमित और निजी ब्रह्माण्ड से आगे नहीं देख सकते। हम अपने क़िले में क़ैद होकर दुनिया से कट जाते हैं।

ऐसे नज़रिए और सीमित जागरूकता से हम किसी के लिए भी बन्द कमरे सरीखे हो जाते हैं। जब किसी दूसरे का ज्ञान हमारे जीवन के भावनात्मक खाँचे में फिट नहीं बैठता तो हम उस ज्ञान की निन्दा करते हैं। हम दूसरों के सिर्फ़ उन्हीं विचारों

से सहमत होते हैं जिनमें हमारे विचारों की प्रकृति और आधार की वस्तुनिष्ठता पर सीधे खोज करने के बजाय हमारे निजी मूल्य और भावनाएँ शामिल होती हैं। और लापरवाही की इस स्थिति में, हम गौण हो जाते हैं, और लोकप्रिय यथास्थिति की दया पर रह जाते हैं।

अगर हम इसी तरीके से आगे बढ़ते रहते हैं तो हमारा सच्चा स्व और भी अधिक खो जाता है, और खुद की पुनरान्वेषण की सम्भावना और काम पहले से कहीं अधिक कठिन और दूभर हो जाता है। दुर्भाग्यवश, इस वास्तविकता को समझने का कोई और तरीका नहीं है, जब तक कि हम किसी महान शिक्षक की मदद से सीधे इसकी झलक न पा लें। एक ऐसा शिक्षक, जो इस किले की खिड़की खोल दे। और इसके बाद भी, हमें उस मार्ग पर चलना होगा जिसे हमने संजीदगी से देखा है : हमारे लिए अहम होना चाहिए अगर हम अपनी दुनिया को बदलने की कोशिश कर रहे हैं और हम अपनी सांसारिक (प्राय: अज्ञानी और दुखी) स्थिति से बाहर निकलना चाहते हैं। हमारे स्वनिर्मित विश्वासों की संरचना इतनी दीर्घस्थायी और मजबूत है कि वह हमें अपने से परे देखने की इजाज़त ही नहीं देती। हमारे सामने सच चाहे कितना भी स्पष्ट या सीधे-सीधे क्यों न पेश किया जाये, वह सचाई को धुँधला बना देते हैं। गुणातीत साधुओं द्वारा सिखाई गयी समीचीन विधियाँ इन दुनियावी बीमारियों के इलाज में बहुत असरदार हैं। हालाँकि, इनमें से हर विधि के लिए एक दृढ़ आस्था, एक अटल संकल्प, और समर्पित अभ्यास जरूरी है ताकि सन्तुष्टिदायक परिणाम मिलें। अगर आपकी आस्था दृढ़ है, तो आप पुरुषोत्तम जैसी पूर्णता हासिल कर सकते हैं। स्वामीनारायण समुदाय मानव चेतना को गुलामी से मुक्त करने के परिवर्तन में मदद कर रहा है। और यह वास्तव में हमारी राह को सही बनाने और उसे तय करने में हमारी मदद कर रहा है : चाहे यह व्यक्तियों के लिए हो, राष्ट्रों के लिए हो, या फिर अपने पूरे ग्रह के लिए।

21

ईश्वर से बौद्धिक प्रेम ही उच्चतम गुण है

'ईश्वर हर स्तर पर बौद्धिक विचारों के निर्बन्ध होने का रूपक है। यह बेहद आसान है।'

—जोसफ केम्पबेल

माइथॉलजिस्ट और लेखक

अगर एक पत्थर ऊँचाई से किसी के सिर पर गिरे और इसकी वजह से उसकी मौत हो जाये तो ऐसा कहा जायेगा कि यह पत्थर उस आदमी को मारने के लिए ही गिरा था। अगर यह अन्त करने के लिए नहीं, ईश्वर की इच्छा से था, तो सिर्फ संयोग से इतनी सारी घटनाएँ कैसे हो सकती हैं? शायद ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि हवा तेज बह रही थी और आदमी उसी रास्ते से जा रहा था। लेकिन हम अड़े रह सकते हैं : हवा उस वक्त ही उतनी तेज़ क्यों बह रही थी? वह आदमी उसी वक्त वहाँ से क्यों गुजर रहा था? अगर आपका उत्तर फिर भी यही है कि तब हवा बही क्योंकि इससे पहले दिन, जब मौसम शान्त था, समन्दर उछालें मारने लगा, और इस आदमी को एक दोस्त ने बुलाया था, हम जोर दे सकते हैं—क्योंकि सवालों का कोई अन्त नहीं है : लेकिन समन्दर ठाठें क्यों मार रहा था? उस आदमी को उसी वक्त क्यों बुलावा मिला था? और हम कारण के कारणों पर सवाल पूछते रह सकते हैं, जब तक कि हम उसे ईश्वर की इच्छा न मान लें।

हर घटना को ईश्वर की इच्छा से जोड़ने के इस तरीके को बरूच स्पिनोज़ा 'अज्ञान का अभयारण्य' कहते हैं। वह लिखते हैं :

> जो भी एक शिक्षित व्यक्ति की तरह, चमत्कारों के सच्चे कारणों की तलाश करना चाहता है, और प्राकृतिक चीजों को समझना चाहता है,

एक अनाड़ी की तरह उन पर हैरत ज़ाहिर नहीं करना चाहता, उसकी आमतौर पर विधर्मी के रूप में निन्दा की जाती है। यह निन्दा वो लोग करते हैं, जो खुद को प्रकृति और परमेश्वर के बिचौलिए के रूप में पेश किया करते हैं। वह जानते हैं कि अगर अज्ञानता खत्म हो जाये, तब मूर्खतापूर्ण आश्चर्य, जो कि उनके अधिकार ज़ताने, उसके पक्ष में तर्क देने और उसका बचाव करने का एकमात्र तरीका है, वह भी खत्म हो जायेगा।[68]

स्पिनोज़ा के काम का महत्व और उसके विस्तार को उनकी मौत के कई बरसों तक सही तरह से नहीं आँका गया। बरूच स्पिनोज़ा एक डच दार्शनिक थे। स्व और ब्रह्माण्ड के बारे में आधुनिक संकल्पनाओं के लिए बौद्धिक ज़मीन तैयार करते हुए, स्पिनोज़ा ने एक बेहद सरल जीवन जिया। वह एक सीधे-सादे लेंस बनाने वाले थे और ताजिन्दगी वह पुरस्कार और सम्मान ठुकराते रहे। इनमें सम्मानपूर्ण शिक्षकों के पद भी शामिल हैं। उन्होंने अपनी पारिवारिक सम्पदा अपनी बहन को दे दी। उनकी दार्शनिक उपलब्धियाँ और नैतिक चरित्र ने बाद में एक फ्रांसीसी दार्शनिक गाइल्स डेल्यूज़ को इतना उद्वेलित किया कि डेल्यूज़ ने उन्हें 'दार्शनिकों का राजकुमार' कहा।

स्पिनोज़ा कहते हैं कि ईश्वर का अस्तित्व है और वह अमूर्त्त और अवैयक्तिक है। उन्होंने तर्क दिया कि ब्रह्माण्ड में मौजूद हर चीज एक वास्तविकता है और हम सब उसी का हिस्सा हैं। दुनिया में नियमों का निश्चित वर्ग है, जो हमारे चारों तरफ की वास्तविक व्यवस्था चलाता है। स्पिनोजा ने ईश्वर और प्रकृति को एक ही वास्तविकता के दो नामों के तौर पर देखा। उन्हें विश्वास था कि ईश्वर या प्रकृति एक ही है, यानी मौलिक पदार्थ; 'जो अन्दर मौजूद है' बनिस्बत इसके कि जो 'पदार्थ' है, और यही ब्रह्माण्ड का आधार है; और बाकी के लघु 'निकाय' वास्तव में इसी आधार के साधन या दूसरे रूप हैं।

आगे, उन्होंने विश्वास प्रकट किया है कि प्रकृति ही यह तय करती है कि किन चीजों का अस्तित्व बना रहेगा और इसके कारण और प्रभावों की जटिल श्रृंखला को सिर्फ टुकड़ों में समझा जा सकता है। स्पिनोज़ा पूरी तरह नियतिवादी थे, जिन्होंने कहा कि जो भी होता है वह सब बेहद जरूरी आवश्यकताओं की वजह से ही होता है। उनके लिए, मानव व्यवहार भी पूरी तरह निर्धारित होता है, इसमें यह स्वतन्त्रता होती है कि हम अपनी क्षमताओं के बारे में जान सकें कि हम

सब निर्धारित कार्यकलाप से जुड़े हैं और हम यह समझ सकें कि हमें ऐसा करने के लिए ही नियुक्त किया गया है। इसलिए स्वतन्त्रता इस बात की सम्भाव्यता नहीं है कि जो हमारे साथ हो रहा है उसके लिए 'नहीं' कहा जाये, लेकिन 'हाँ' कहने और पूरी तरह से यह समझने की सम्भाव्यता है कि क्यों घटनाएँ जरूरी तौर पर एक तरीके से घट रही हैं। हम जो कर रहे हैं या जो हमारी भावनाएँ हैं या जो हमारे आकर्षण हैं, उसके बारे में और भी उचित विचार बनाकर, हम अपने आन्तरिक और बाह्य प्रभावों के लिए पर्याप्त कारण बन जाते हैं, जिससे हमारी सक्रियता बनाम निष्क्रियता में बढ़ोतरी होती है।[69]

स्पिनोज़ा ने यह भी कहा कि हर चीज़ आवश्यक रूप से उसी तरह होती है, जैसी कि यह है। इसलिए, इंसानों के पास मुक्त इच्छा शक्ति नहीं है। हालाँकि, उन्हें ऐसा लगता है कि उनकी इच्छाएँ मुक्त हैं। स्वतन्त्रता का यह ऐन्द्रजालिक नज़रिया हमारी मानवीय चेतना, अनुभव और पूर्व प्राकृतिक कारणों से उदासीनता की वजह से निकलता है। इंसान सोचता है कि वह मुक्त है लेकिन वह तो 'खुली आँखों से सपने देखते हैं।' स्पिनोज़ा के लिए हमारे कामकाज प्राकृतिक आवेगों से संचालित होते हैं। उनका बड़ा मशहूर कथन है, 'लोग अपनी इच्छाओं को लेकर बहुत सजग होते हैं, लेकिन उन कारणों के प्रति अनजान होते हैं जिनके ज़रिए उनकी इच्छाएँ निर्धारित होती हैं।' स्पिनोज़ा की *एथिक्स* में उनके मशहूर कथन से और अधिक स्पष्ट होता है :

> नवजात बच्चा यह सोचता है कि वह अपनी मर्जी से माँ का स्तनपान कर सकता है; गुस्सेवर लड़का सोचता है कि अपनी ही मर्जी से वह बदला लेना चाहता है, डरपोक आदमी सोचता है कि वह अपनी मर्जी से ही डरकर भाग रहा है; शराबी सोचता है कि अपने मन की मर्जी से ही वह ऐसा सब कुछ बोल रहा है जो होश में रहते हुए उससे अनकहा रह गया था...सबको यह भरोसा होता है वह अपने मन के मुताबिक बातें किया करते हैं, जबकि, सच तो यह है उनके पास आवेगों को रोकने की ऐसी कोई शक्ति नहीं, जो उन्हें बोलने से रोक सके।[70]

स्पिनोज़ा के लिए, 'दोषारोपण' और 'प्रशंसा' अस्तित्वहीन मानवीय आदर्श हैं, जो सिर्फ दिमाग़ में ही होते हैं, क्योंकि हम मानवीय चेतना, जो हमारे तजुर्बे से जुड़ी है, के इतने आदी हैं कि हमारे पास चयन के मिथ्या आदर्श हैं, जो हम पर निर्दिष्ट है। इस ब्रह्माण्ड में, जो भी होता है वह चीजों की आवश्यक प्रकृति

या ईश्वर/प्रकृति से आता है। स्पिनोज़ा के मुताबिक, यथार्थ ही पूर्णता है। अगर परिस्थितियों को दुर्भाग्य की तरह देखा गया, तो ऐसा सिर्फ इसलिए क्योंकि यथार्थ को लेकर हमारी संकल्पना अपर्याप्त है। जबकि कारण और प्रभाव के क्रम कारक और मानवीय कारणों की समझ से परे नहीं हैं, असीम रूप से जटिलता की पूरी मानवीय समझ सीमित है क्योंकि विज्ञान की अपनी सीमाएँ हैं जो अनुभवतः पूरे परिदृश्य को समझने में नाकाम रहती हैं।

स्पिनोजा ने समझ के बारे में भी अपनी धारणा प्रकट की, हालाँकि यह वाक्पटुता के लिए ही उपयोगी और व्यावहारिक है, वह एक सार्वभौम सत्य की खोज के लिए अपर्याप्त है। पराभौतिकी (मेटाफिजिक्स) को लेकर स्पिनोज़ा का गणितीय और तार्किक नज़रिया, और इस तरह नैतिक मापदण्डों को लेकर उनका दृष्टिकोण, यह निष्कर्ष निकालता है कि भावनाएँ अपर्याप्त समझ की वजह से पैदा होती हैं। आत्मरक्षा और स्वार्थ के सन्दर्भ में उनकी संकल्पना कहती है कि कुदरती इंसानी झुकाव आवश्यक चीजों के संरक्षण की दिशा में होता है और इस बात पर जोर देना होता है कि मानवीय शक्ति चीजों के संरक्षण में कामयाबी हासिल करना है, जिसके लिए कारणों का मार्गदर्शन आवश्यक होता है। और इसे वह किसी के नैतिक मार्गदर्शन का केन्द्र बिन्दु मानते हैं। स्पिनोज़ा के मुताबिक, बौद्धिक प्रेम या ईश्वर/प्रकृति/ब्रह्माण्ड का ज्ञान ही उच्चतम गुण है।

एथिक्स के आखरी हिस्से में, उनकी चिन्ता 'सच्चे आशीर्वाद' को लेकर है, और उनकी यह विवेचना कि किस तरह भावनाएँ बाहरी कारणों से अलग होनी चाहिएँ और उन पर नियन्त्रण स्थापित किया जाना चाहिए, के साथ पूर्वाभास मनोवैज्ञानिक तकनीक का विकास सन् 1900 में हुआ। उनकी संकल्पना ज्ञान के तीन प्रकार को लेकर है—विचार, कारण और अन्तर्ज्ञान—और उनका अभिकथन है कि पूर्वाभासी ज्ञान मस्तिष्क को बहुत सन्तोष प्रदान करता है, और यह उनके इस बात की तस्दीक करता है कि हम जितने ही अपनी प्रकृति/ब्रह्माण्ड को लेकर चेतन हैं, उतने ही हम आशीष प्राप्त और पूर्ण हैं (यथार्थ में) कि सिर्फ पूर्वाभासी ज्ञान ही शाश्वत है। मस्तिष्क के कामकाज की समझ को लेकर उनका योगदान असाधारण है—यहाँ तक कि कट्टरपन्थी दार्शनिक विकास के वक्त भी—उनके विचारों ने धर्म के रहस्यमयी अतीत और वर्तमान के मनोविज्ञान के बीच एक पुल मुहैया कराया है। एक पूरी व्यवस्थित दुनिया में स्पिनोज़ा का उदाहरण, जहाँ 'ज़रूरत' का साम्राज्य

है, अच्छे और बुरे का कोई निरपेक्ष अर्थ नहीं है। वर्तमान दुनिया हमें अपूर्ण इसलिए दिखती है क्योंकि हमारा नज़रिया ही सीमित है।[71]

स्पिनोज़ा के दर्शन के प्रति अठारहवीं सदी के यूरोपियनों का आकर्षण इसलिए था क्योंकि इसने भौतिकवाद, नास्तिकता और आस्तिकता का एक विकल्प मुहैया कराया था; इसने ईश्वर के अस्तित्व पर विश्वास को बिलकुल तर्कसंगत आधार पर खतरे में डाल दिया था।

स्पिनोज़ा के तीन विचार उन्हें बहुत भाये :

1. अस्तित्व में रही हर चीज की एकता
2. जो कुछ भी हो रहा है उसकी नियमितता
3. आत्मा और प्रकृति की पहचान

कई लेखकों ने स्पिनोज़ा और पूर्व की दार्शनिक परम्पराओं के बीच समानताओं पर चर्चा की है। उन्नीसवीं सदी के जर्मन संस्कृतिविद् थियोडोर गोल्डस्टकर उन पहले लोगों में थे जिन्होंने स्पिनोज़ा की धार्मिक संकल्पनाओं और भारत की वेदान्त परम्परा की समानता पर गौर किया, स्पिनोज़ा के विचारों पर लिखते हुए वह कहते हैं :

> ...दर्शन की पश्चिमी व्यवस्था, जो सभी देशों और युग के दर्शनों में अग्रणी स्थान रखती है, और जो वेदान्त के विचारों से इतनी मेल खाती है कि हमें यह सन्देह होता है कि इसके संस्थापक ने अपने विचार हिन्दुओं से उधार लिये हैं। उनकी जीवनी हमें इस बात को लेकर सन्तुष्ट नहीं करती कि वह उनके सिद्धान्तों से पूरी तरह अपरिचित थे...हमारा मतलब है कि स्पिनोज़ा का दर्शन, एक ऐसा शख्स जिनका जीवन ही इस दुनिया की क्षणभंगुरता में नैतिक शुद्धता और बौद्धिक अपक्षपात की एक मिसाल था, और इसी की तलाश यह वेदान्त के दार्शनिक करते रहे...दोनों के मौलिक विचारों की तुलना करने पर हमें यह साबित करने में जरा भी दिक्कत नहीं है कि स्पिनोज़ा एक हिन्दू थे, उनकी व्यवस्था हर सम्भाव्यता में वेदान्त दर्शन में आखिरी दौर की तरह है।[72]

मैक्स म्युलर ने अपने व्याख्यानों में स्पोनोज़ा और वेदान्त दर्शन के बीच समानताओं को रेखांकित किया है। वह कहते हैं 'ब्राह्मण, जैसा कि उपनिषदों और संस्कारों के द्वारा माने गये हैं, स्पष्ट तौर पर स्पिनोज़ा के 'सबस्टेंशिया' जैसे ही हैं।

हेलेना ब्लाव्त्स्की, थियोसॉफिकल सोयायटी की एक संस्थापक, ने भी स्पिनोज़ा के धार्मिक विचारों की वेदान्तों से तुलना की है, एक अपूर्ण लेख में उन्होंने लिखा है :

> स्पिनोज़ा के देवों की अगर बात हो—नेचुरा नेचुरन्स—तो उनकी विशेषता है कि वह सरल और अकेले हैं; और वही देव—नेचुरा नेचुराता या जो अन्तहीन श्रृंखलाओं में थोड़े रूपान्तरित रूप में है, या मिलते-जुलते रूप में, तो इनकी विशेषताओं का सीधा परिणाम यही दिखता है कि यह वेदान्त में वर्णित देवों की तरह शुद्ध और सरल हैं।[73]

जब एक लेखक ने आइंस्टीन के पास *देयर इज़ नो गॉड* (ईश्वर नहीं है) भेजी तो आइंस्टीन ने जवाब दिया कि यह किताब ईश्वर की धारणा के बारे में नहीं है, बल्कि यह सिर्फ निजी ईश्वर पर आधारित है। उन्होंने सलाह दी कि किताब का शीर्षक *देयर शुड बी नो पर्सनल गॉड* (कोई निजी ईश्वर नहीं है) होना चाहिए। इसके साथ ही उन्होंने आगे लिखा :

> हम स्पिनोज़ा के अनुयायी एक बेहतर व्यवस्था और हर अस्तित्वधारी की विधिसंगतता और उसकी आत्मा में ईश्वर को देखते हैं क्योंकि वह खुद को मनुष्य और जीवों में प्रकट करते हैं। यह एक अलहदा सवाल है कि क्या एक व्यक्तिगत ईश्वर में विश्वास पर विवाद हो या नहीं। फ्रायड ने अपने ताजा प्रकाशन में इस पर अपने विचार प्रकट किये हैं।

मैं स्वयं को ऐसे किसी काम में नहीं उलझाऊँगा। ऐसे विश्वास के सन्दर्भ में, मुझे लगता है कि जीवन को लेकर एक दैवीय दृष्टिकोण की कमी है, और मुझे हैरत होती है कि क्या कोई कभी मानवता के लिए कामयाबी से कोई ज्यादा उदात्त ज़रिया पेश कर पायेगा जो उनकी पराभौतिक जरूरतों को पूरा कर सकें।[74]

बरूच स्पिनोज़ा विज्ञान और आध्यात्मिकता के महान समाकलक थे। उन्होंने लिखा है :

> जो भी है, वह ईश्वर में है, और ईश्वर के बिना कुछ भी हासिल नहीं किया जा सकता। प्रकृति में, कुछ भी आकस्मिक नहीं होता, बल्कि हर चीज दैवीय रूप से पूर्व-निर्धारित हुआ करती है, जो प्रकृति के अस्तित्व में रहने की जरूरत और किसी खास तरीके से उसका प्रभाव पैदा करने के लिए नियत की जाती है। ईश्वर द्वारा इसी तरीके से चीजें बनाई जाती हैं और किसी और व्यवस्था से उनको बनाया नहीं जा सकता।[75]

मैं स्पिनोज़ा को पढ़ने के बाद ही गुणातीत शब्द का सही अर्थ समझ पाया। एक गुणातीत साधु वह होता है जो यह समझ जाता है कि ईश्वर कोई लक्ष्योन्मुखी

योजनाकार नहीं है, जो चीजों को उसके उद्देश्य पर काम आने की कसौटी पर कसता हो। चीजें सिर्फ गुण और इसके नियमों की वजह से हुआ करती हैं। ईश्वर गुणों से भी ऊपर हैं—गुणातीत। और किसी गुणातीत का कोई अन्त नहीं होता। हर चीज गुण की एक निश्चित अनन्त आवश्यकता के तहत ही हुआ करती हैं।

22

अन्तरिक्ष जैसा विशाल और अनन्त जैसा कालातीत आयाम

'ईश्वर के प्रति मेरा विचार एक श्रेष्ठ तार्किक शक्ति की उपस्थिति के भावनात्मक दृढ़विश्वास से बना है जो इस अबूझ ब्रह्माण्ड में प्रस्तुत है।'

—अल्बर्ट आइंस्टीन

यहाँ कई तरीके और आस्था के सिद्धान्त हैं जो हमारे मन के साथ कुछ विशेष करके हमें हमारी ज़िन्दगियों को बेहतर बनाना सिखा सकते हैं। चाहे वह धार्मिक मान्यताएँ हों, शान्तिपूर्ण ध्यान हो या इंसान की सकारात्मक सोच, इस विचार में एक व्यापक सरोकार है कि हमारा मस्तिष्क हमारी मदद कर सकता है। कुछ तरीके हमें अपने विचारों पर शान्ति से सोचना सिखाते हैं, कुछ सक्रिय रूप से उनका अभ्यास करना और कुछ सिखाते हैं कि अपने मन से विचारों को हटाकर बस ध्यान लगायें। इनमें से कई मददगार साबित हो सकते हैं।

सभी मानसिक कारण और प्रभावों के सम्बन्ध के बारे में माना जा सकता है कि उनमें विचारों का आधार है। पारलौकिक विचारों की प्रगति से निर्मित ठोस आधार हर बढ़ते स्तर के साथ अगले को प्रेरित करता है। हम विचारों के सबसे पहले और सबसे निराकार बीज का निरीक्षण करेंगे। छवियों से परे सोचने का मतलब है शब्द और विचारों के जरिए आध्यात्मिक कल्पना के ऐसे मानसिक दायरे में प्रवेश करना, जिसे स्मृति की नज़रों से पलक झपकाते ही देखा जा सकता है। यही वह जगह है जहाँ हम अच्छाई के आधारभूत बीज खोज सकते हैं। आध्यात्मिक और

अनन्त विचारों के हम तक पहुँचने के लिए हमें मानवीय मान्यताओं और सीमित छवियों के परे जाना होगा।

जब आध्यात्मिक बीज मानसिक रूप से अंकुरित होते हैं, वो आध्यात्मिक ऊर्जा देते हैं—वह रोशनी फैलाते हैं। इसलिए कोई व्यक्ति नये आध्यात्मिक विचार तब देख पाता है, जब वो बिल्कुल संकल्पना के बिन्दु पर होता है। यह न केवल चीजों के बारे में समझ बनाने वाली धारणा को सुधारता है, बल्कि आपको आश्चर्यजनक तरीके से काम करने देता है। इस किताब में मैंने पहले पाइथॉगोरस की बात की थी और बताया था कि कैसे उनके विचारों ने वह आधारशिला दी, बाद में जिसके आधार पर सारा पश्चिमी दर्शनशास्त्र बना। इसी प्रकार मानव इतिहास से यह साफ है कि महान विचार तब उभरे जब समय सही था। और जिस परिप्रेक्ष्य में वह उभरे, उन विचारों ने वह ज्ञान बढ़ाया जो उस स्थिति में मानवता को जनहित की तरफ ले जाने के लिए आवश्यक था। गणित उसका एक उदाहरण है।

शायद ऐसा दूसरा विचार अनन्त काल तक रहा। सन् 1584 में इटली के दार्शनिक और खगोलशास्त्री जियोरडानो ब्रूनो ने *ऑन द इनफिनिट यूनिवर्स एंड वर्ल्ड्स* में एक अनन्त और असीम ब्रह्माण्ड का प्रस्ताव दिया था। उस समय के लिए एक क्रान्तिकारी वक्तव्य में उन्होंने लिखा था : 'असंख्य सूर्य हैं; असंख्य धरती इन सूर्यों के चक्कर लगाती हैं ठीक उसी तरह जैसे सात ग्रह हमारे सूर्य के चक्कर लगाते हैं। इन दुनियाओं में भी जीवित लोग रहते हैं।' [76] और गणित को भी अनन्त की तरह देखा जा सकता है। हंगरी के गणितज्ञ पॉल एरदोस ने कहा कि इंसान भौतिकी और जीवविज्ञान के बारे में सबकुछ सीख सकता है लेकिन गणित के बारे में नहीं, क्योंकि गणित खुद ही अनन्त है। मैंने गणित के बारे में विस्तार से चर्चा अपनी किताब *स्क्वॉयरिंग द सर्कल* में की है।

कुछ लोग कैसे मौलिक रूप से सोच सकते हैं और ऐसे विचारों का विकास करते हैं जिसने मानव सोच की दिशा ही बदल दी? उन्नीसवीं सदी के डेनिश दार्शनिक सो रेन कियर्केगार्ड ने प्रतिभावान लोगों की तुलना आँधी से की थी : वह हवा के विपरीत जाते हैं, वह लोगों को सावधान करते हैं, उन्हें चौंकाते हैं और भ्रान्तियों से दूषित हवा को साफ करते हैं। श्रीनिवास रामानुजम ऐसी ही एक आँधी थे। शुद्ध गणित के बिना किसी औपचारिक प्रशिक्षण के बावजूद रामानुजम

ने गणितीय विश्लेषण, संख्या सिद्धान्त, अनन्त श्रृंखला और अनन्त भाग के लिए असाधारण योगदान दिया।

कावेरी नदी के किनारे चेन्नई से लगभग 400 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व में स्थित ऐरोड गाँव में रहते हुए रामानुजम की पहुँच उस समय यूरोप में केन्द्रित बड़े गणितीय समुदाय तक नहीं थी। उन्होंने अकेले में ही अपनी गणितीय खोज विकसित की। अंग्रेजी गणितज्ञ जी.एच. हार्डी ने उन्हें स्विस गणितज्ञ और भौतिक विज्ञानी लियनहार्ड यूलर और जर्मन गणितज्ञ कार्ल फ्रेडरिच गास की तरह प्राकृतिक रूप से प्रतिभाशाली कहा था। विज्ञान लेखक राबर्ट कैनीगेल ने रामानुजम की एक जीवनी लिखी थी, जिसमें उन्होंने रामानुजम के लिए लिखा था, वह शख्स, जो अनन्त को जानता था।

रामानुजम को धार्मिक रूप से रूढ़िवादी व्यक्ति बताया गया है जो कुछ शर्मीले और शान्त स्वभाव के हैं; वो एक सम्मानित व्यक्ति थे जिनमें एक सुखद शिष्टाचार था। कैम्ब्रिज में उन्होंने एक तपस्वी की तरह जीवन जिया और अपने शाकाहार के साथ कभी समझौता नहीं किया। रामानुज ने अपनी प्रतिभा का श्रेय उनके परिवार की देवी महालक्ष्मी और नामक्कल को दिया। रामानुज ने अपने काम की प्रेरणा उनसे ही ली और ये दावा किया कि उन्होंने सपने में खून की बूँद देखी जो देवी के पति नरसिम्हा का प्रतीक है, और उसके बाद जटिल गणितीय विचारों के पत्र उनकी आँखों के सामने खुलने लगे। वह हमेशा कहते थे, 'एक समीकरण का मेरे लिए तब तक कोई अर्थ नही हैं, जब तक वो ईश्वर के विचारों का प्रतीक नही हो।'

रामानुजम के जीवन से हम सीखते हैं कि आध्यात्मिक पहलुओं के बारे में इंसान की आस्था एक सीमित हद तक ही निरपेक्ष या परम आध्यात्मिक सत्य दिखाती है। जैसे एक इंसान के हाथ की छाया को हम सच का हाथ समझ सकते हैं, इंसान की आध्यात्मिक आस्था में भी अक्सर सच के घेरे रहते हैं। लेकिन परीक्षण करने पर पता चलता है कि मानवीय आस्था में कुछ आयाम गायब होंगे जब उनकी तुलना उनके अनन्त मूल से की जाती है। फिर भी, शक्तिशाली मानवीय आस्था कभी-कभी हमें परम सत्य की तरह मिल सकती है। जब हमें गहरी आस्था का पता चलता है तो हम आध्यात्मिक रूप से आगे बढ़ते हैं और हम उनमें अक्सर बहुत अर्थ जोड़ सकते हैं। उस बढ़ी आस्था से ऐसा अनुराग होना कठिन नहीं है कि हमें

उनसे जीवनभर जुड़े रहने का मन करे। लेकिन अधिकतर प्रेरित मानव आस्था क्षणभंगुर है और उसे जाँचने की और उसे पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है।

रोज़मर्रा के जीवन में आध्यात्मिक कामों को हम चार स्तरों पर लागू कर सकते हैं—आज्ञाकारिता, आस्था, समझ और ज्ञान। हर व्यक्ति अपने कार्यों के विशिष्ट स्तर को अपने आध्यात्मिक कार्यों के आधार पर वरीयता देगा। हमारी व्यक्तिगत आस्थाएँ ही वो स्थितियाँ बनाती हैं, जिसके अन्तर्गत हम अपनी आध्यात्मिक प्रभावकारिता सोचते हैं और आध्यात्मिक कार्य करते हैं।

जब ये सारे स्तर काम में आने लगते हैं तो ये सभी एक क्रम में कार्य करने लगते हैं। इन चार स्तरों के बारे में समझना उन स्वरूपों को समझने का आधार बनता है जिन पर मानव की आध्यात्मिक आस्था बनती है। हम व्यापक और व्यक्तिगत अध्यात्म के विकास के चरणों को भी समझ सकते हैं और उन अलग तरीकों को भी, जिनसे लोग आध्यात्मिक मुद्दों को देखते हैं।

आज्ञाकारिता, एक तरह के आध्यात्मिक कार्य की तरह, कथनी और करनी के बीच का रिश्ता है। लेकिन सवाल उठ सकता है : आज्ञाकारिता आखिर किसके लिए? यही है जो हमें ढूँढना है। आज्ञाकारिता एक आध्यात्मिक कार्य की तरह होती है जब हम अपने आध्यात्मिक आदर्शों को नियम बनाने वाले की तरह देखते हैं, जब हम अपने आध्यात्मिक उपदेशों का पालन करते हैं या जब हम विशिष्ट आध्यात्मिक अनिवार्यताओं को मानते हैं। यदि हमारी व्याख्याएँ गलत भी हों, फिर भी भलाई के लिए आज्ञाकारी होने की एक ईमानदार इच्छा में वो आध्यात्मिक शक्ति होती है, जो मुद्दों की अच्छाई के लिए प्रभावित करता है।

आज्ञाकारिता को कभी-कभी एक पूर्ण आन्तरिक गतिविधि की तरह भी किया जा सकता है। आज्ञा का पालन करने की एक आन्तरिक प्रतिबद्धता या संकल्प, जिसमें कोई बाहरी अवसर न हो, वो भी कई बार आज्ञाकारिता का काम हो सकता है—जहाँ तक आध्यात्मिक दुनिया का सवाल है—एक बाहरी कार्य की तरह। यहाँ तक कि आज्ञाकारी होने की मर्जी या इच्छा भी आज्ञाकारिता के आध्यात्मिक बल को ऊर्जा दे सकती है। आज्ञाकारिता को आध्यात्मिक कार्य के अगले स्तर से अलग करने वाली चीज हमारे व्यवहार और त्वरित सकारात्मक परिणाम में कोई मेल नहीं होना है। और आज्ञाकारिता से जुड़े कार्यों में कभी-कभी त्याग भी होता है।

हमें इसका भी ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी आज्ञा का पालन करना घातक है। सही आज्ञा का पालन करना बिना किसी समस्या का समाधान पैदा करेगा। लेकिन बेपरवाह आज्ञाकारिता के परिणाम अनुकूल भी हो सकते हैं और अनर्थकारी भी।

आज्ञाकारिता किस हद तक लाभप्रद होगी वो यह पता लगाने पर निर्भर करता है कि सही अधिकारी कौन है, आदेशों को ठीक से समझना और उस पर सफलतापूर्वक काम करना। वास्तविकता में, आदेशों को ठीक से समझना ही इनमें सबसे चुनौतीपूर्ण है। बिना सही अधिकारी के आज्ञाकारिता की अवधारणा ही सवालों के घेरे मे आ जाती है। एक तरह से, आज्ञाकारिता रिश्तों पर निर्भर है। हालाँकि किसी भी इंसान में प्रभुत्व का पहले से होना जरूरी नहीं है, बिना मानव आज्ञाकारिता पर महारत हासिल किये आध्यात्मिक आज्ञाकारिता की कल्पना करना भी कठिन है।

जिनके पास अधिक उन्नत आध्यात्मिक ज्ञान है, उन्हें सच्चा अधिकार आध्यात्मिक कानून या आध्यात्मिक सिद्धान्तों के बारे में जानकारी से मिल सकता है, अनन्त शब्द, एक अनन्त व्यक्तित्व या शुद्ध प्रेरणा। किसी भी स्थिति में, यह देखना जरूरी है कि आदेश एक विश्वसनीय अधिकारी ने दिया है। और आध्यात्मिकता खोजनेवालों के लिए वास्तविक अधिकार का इससे बहुत कम लेना-देना है कि दूसरे लोग क्या कहते हैं या सोचते हैं।

आध्यात्मिक कार्यों के दूसरे स्तर में हमारी आस्था की भूमिका है। आस्था या विश्वास वो निष्कर्ष हैं जो हम अपनी दुनिया के बारे में मानते हैं। हमारी आस्था में, खासकर वास्तविकता के बारे में, हमारी सोच होती है जो दुनिया के बारे में हमारी सोच और समझ को निर्धारित करती है। हमारी आस्था उसी तरह बनती है जैसे हम सच और वास्तविकता के बारे में निष्कर्ष को स्वीकार करते हैं। वह परिणाम के बारे में हमारी अपेक्षा को पहले से ही निर्धारित कर देते हैं। एक ओर जहाँ आज्ञाकारिता आदेश की एक स्वत: प्रक्रिया के रूप में प्रकट होती है, आस्था हमें सुविचारित कार्यों में लगाती है। जब हम दिखावे के परे अच्छाई में विश्वास को आत्मसात करते हैं, तो यह हमें विश्वास और श्रद्धा देते हैं।

आस्था को पुनर्जीवित करने के लिए, हम में अच्छे आध्यात्मिक सिद्धान्त और उन पर आधारित तर्क होने चाहिएँ। आध्यात्मिक समझ के आधार पर अपनी

आस्था को सुधारने और बढ़ाने के लिए हमें उचित मुद्दों पर आध्यात्मिक सिद्धान्तों के आधार पर विस्तार से सोचना चाहिए। आध्यात्मिक सिद्धान्तों के आधार पर सोचना विज्ञान की धारणा से हमारा परिचय कराता है। सही मायने में विज्ञान में उपलब्धि स्थापित सिद्धान्तों से और समझ के निष्कर्ष से मिलती है जिनकी पुष्टि व्यावहारिक रूप से की गयी है। जिनकी सोच का आधार आध्यात्मिक सिद्धान्त हैं और जिनके निष्कर्ष व्यावहारिक जीवन में दिखते हैं वो अपने आध्यात्मिक लक्ष्य को आध्यात्मिक रूप से वैज्ञानिक होकर महसूस करेंगे। उनके लक्ष्य वैसे ही देखे जाते हैं जैसे उन्हें संचालित किया गया है और वही ज्ञान की सच्ची राह है। और जब किसी को जान-समझ लिया जाता है तो इस समझ के साथ दिमाग में एक हल्की चमक आती है, जो एक धूमिल भीतरी दृश्य जैसी नहीं होती, ऐसे देखने की एक मिसाल : अहा! नये विचार अधिकतर दिमाग में एक क्षणिक दृश्य की तरह समझ में आते हैं। जैसे इंसान जो देखता है उसी पर विश्वास करता है—और खासकर जब कोई अपने समझे हुए विचारों को देखता है—मानसिक दृश्य जो समझ के आध्यात्मिक प्रक्रिया से निकलते हैं वह पहले से स्थापित निष्कर्षों से मेल खाते हैं : चीजें जो देखी गयी हैं। इसलिए अपनी आस्था का विकास करने और उसे बढ़ाने का प्रबुद्ध तरीका यही है कि आध्यात्मिक सिद्धान्तों के संचालन को देखने के लिए हम उसे अपनी सोच का आधार बनायें।

विवेकशील आध्यात्मिक कार्य का चौथा स्तर है ज्ञान। ज्ञान, वो जानना है जो समझ से भी गहरा है। ज्ञान सैद्धान्तिक नहीं है। यह जानने और होने की सम्मिलित भावना है। आध्यात्मिक ज्ञान तभी बढ़ता और विकसित होता है जब हम अपने आध्यात्मिक सिद्धान्तों को पहचानते हैं, उन्हें समझते हैं, ग्रहण करते हैं, और उन्हें अनन्त होने देते हैं। अपने सर्वश्रेष्ठ विचारों पर काम करते हम उनकी शुरुआत और हमारी असली पहचान में विभाजन की भावना को खत्म कर देते हैं। आध्यात्मिक ज्ञान के स्तर पर, हमारे सिद्धान्तों का आधार, हमारे आध्यात्मिक मन, अहंकार और हमारी इच्छाशक्ति से अलग नहीं होता। हम ज्ञान के लिए तैयार हैं, हम आध्यात्मिक कानून को अपना कानून मानते हैं, आध्यात्मिक आस्था को अपनी आस्था मानते हैं, आध्यात्मिक भावना को अपनी भावना मानते हैं और अनन्त पहचान को अपनी पहचान मानते हैं। हमें सच्चा ज्ञान तब मिलता है जब हम अपने आध्यात्मिक सिद्धान्त को अनन्त होने देते हैं। समझ का यह स्तर केवल शामिल सिद्धान्तों को समझने से परे है। सिद्धान्त हमारी पहचान का ही हिस्सा हैं।

यह ज़रूरी नहीं कि आध्यात्मिक ज्ञान हमारे अनुभव से ही मिले, लेकिन यह बिना अनुभव के कभी नहीं मिलता। ज्ञान समझ और अनुभव का एक सम्मिलित परिणाम है। यदि मैं कुछ समझता नहीं हूँ, लेकिन उसका अनुभव करता हूँ तो मुझे समझ और ज्ञान दोनों ही नहीं मिलेंगे। और अधिकतर ज्ञान भौतिक कल्पनीय अनुभव से परे प्रतीत होते हैं। आसमान की ओर देखिए। हम अकेले नहीं हैं। सारा ब्रह्माण्ड हमारे साथ है जो उन लोगों को सर्वश्रेष्ठ देने के लिए काम करता है जो सपने देखते हैं और उनके लिए काम करते हैं।

23

सृष्टि में जीवन की अनोखी धड़कन

हमारे जीवन का मुख्य उद्देश्य है दूसरों की मदद करना। अगर आप किसी की मदद नहीं कर सकते तो कम-से-कम उन्हें नुकसान मत पहुँचाइए।

—दलाई लामा

प्रमुख स्वामीजी ने एक सुन्दर कमल के फूल की ओर इशारा किया और कहा, 'राष्ट्रपतिजी, जैसे एक कमल का फूल पानी में जन्म लेता है, पानी में ही बढ़ता और बेदाग उससे ऊपर उठने के लिए पानी के बाहर निकलता है, वैसे ही आप, इस संसार में जन्मे, इस संसार में उठे और संसार पर विजय पा इस संसार में बेदाग जिये हैं।' मैं स्वामीजी की सरल प्रशंसा से अभिभूत था, जो मेरे लिए किसी अन्य प्रशंसा या पुरस्कार से कहीं अधिक महत्वपूर्ण था। कमल का फूल भारत में एक प्राचीन दैवी प्रतीक है : इसकी खुलती पंखुड़ियाँ आत्मा के विस्तार को बतलाती हैं; कीचड़ से इसकी उत्पत्ति से इसकी निर्मल सुन्दरता की वृद्धि एक स्वर्गीय प्रेरित रूपक है। पहले हेलिकॉप्टर के डिजाइनर और लेखक, आर्थर मिडल्टन यंग का मशहूर वक्तव्य है, 'भगवान खनिज में सोता, पौधों में जागता है, पशुओं में चलता है और आदमी में सोचता है।'[77]

जिस जमीन पर हम चलते हैं, पौधे और जीव-जन्तु, आसमान में बादल जो निरन्तर नये रूपों में बदलते रहते हैं—कुदरत की हर सौगात में उसकी खुद की दीप्तिमान ऊर्जा है, जो ब्रह्माण्डीय समन्वय से एक दूसरे से जुड़े हैं।

इस अध्याय में मैं सर जे.सी. बोस के बारे में चर्चा करूँगा, जो माइक्रोवेव भौतिकी के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा और योगदान के लिए प्रसिद्ध हैं और शायद इस संसार के पहले वैज्ञानिक थे जिन्होंने सभी उत्पत्तियों में जीवन के अनोखे स्पन्दन को समझा। जैसा एक लोकप्रिय गीत है :

कैन यू थ्रोब टू द पल्स ऑफ लाइफ?
कैन यू लेट योर हार्ट पम्प यू डाउन लॉन्ग रेड टनल्स?
कैन यू लेट योर हार्ट बिकम द सेंट्रल पम्प हाउस फॉर ऑल ह्यूमन फीलिंग?
क्या तुम जिन्दगी की नब्ज़ धड़का सकते हो?
क्या तुम अपने दिल को लम्बी लाल सुरंगों में जाने दोगे?
क्या तुम अपने दिल को हर इंसानी भाव का पम्पहाउस बनाओगे?[78]

सर जे.सी. बोस ने बीसवीं सदी के शुरुआती दिनों में अपना ध्यान पौधों की दुनिया की ओर मोड़, वनस्पति विज्ञान और भौतिकी की सीमाओं का विलय किया, जो थोड़े अलग विषय थे और जैव-भौतिकी के नवजात क्षेत्र को स्थापित किया। रॉयल इंस्टीट्यूट ऑफ रॉयल सोसाइटी में व्याख्यानों में उन्होंने धातुओं, पौधों और मांसपेशियों में अर्धचालक विद्युत प्रतिक्रियाओं के बीच समानता का वर्णन किया। उन्होंने स्पष्ट किया :

> मानव, पशु एवं पौधे अस्तित्व की निरन्तरता के सदस्य हैं और अकार्बनिक दुनिया भी इसमें शामिल है। सजीव और निर्जीव की प्रभुता के बीच कोई स्पष्ट सीमा रेखा नहीं हैं। जीवन की उत्पत्ति निर्जीव पदार्थ से नहीं हुई। बल्कि पदार्थ में जीवन जैसे गुण हैं।[79]

अर्धचालक धातुओं और पौधों के गुणों पर अपने अनुसन्धान की तुलना करने पर बोस एक क्रान्तिकारी निष्कर्ष पर पहुँचे :

> हम एक सीमा रेखा कैसे खींच सकते हैं और कहते हैं, 'जहाँ शारीरिक प्रकिया समाप्त होती है वहीं शरीर क्रिया विज्ञान की शुरुआत होती है'? कोई ऐसी सीमा मौजूद नहीं है। जीवन में अनुक्रियाशील प्रक्रियाएँ गैर-जीवन में पूर्वाभासित की गयी हैं। प्रत्येक पौधा और यहाँ तक कि प्रत्येक पौधे का अंग उत्तेजनीय होता है और विद्युतीय प्रतिक्रिया के द्वारा उद्दीपन

> पर प्रतिक्रिया करता है। आन्तरिक और बाहरी जीवन दोनों का स्रोत समान महाशक्ति है जो सजीव और निर्जीव, अणु और ब्रह्माण्ड को शक्ति प्रदान करता है।[80]

सर जे.सी. बोस ने मेरे लिये इस बात की पुष्टि कर दी कि हर विज्ञान में दर्शन होता है। मैं जानता हूँ कि पेड़-पौधों में जड़ें होती हैं और उनके तने, छाल, शाखाएँ और पत्ते प्रकाश की ओर ऊपर उठते हैं। मगर मुझे एहसास होने लगा कि असल आकर्षण प्रकाश खुद था।

अब तक के साक्ष्यों से पता चलता है कि धरती पर जीवन करोड़ों वर्षों के रासायनिक क्रमिक विकास के बाद एकल कोशिका के रूप में शुरू हुआ। यह पूर्वज कोशिका विभक्त हुई और अरबों साल में शानदार किस्म के जीवों में बदल गयी, जिन्हें हम आज जानते हैं। हम जानते हैं कि इनकी उत्पत्ति समान है, क्योंकि सभी कोशिकाएँ अपनी आनुवांशिक सामग्री हेतु समान प्रकार के राइबोन्यूक्लिक अम्ल (आरएनए) और डीआक्सीराइबोन्यूक्लिक अम्ल (डीएनए) अणुओं का इस्तेमाल करती हैं—वास्तव में, सभी जीवों में कुछ आनुवांशिक अनुक्रम मौजूद होते हैं। चार्ल्स डार्विन ने द *ऑरिजिन ऑफ स्पीशीज* में लिखा 'सभी कार्बनिक प्राणी जो कभी भी धरती में जीवित रहे हैं, हो सकता है कि एक ही मौलिक रूप से उत्पन्न हुए हों।' वास्तविक अर्थों में, धरती पर सभी जीव भाई-बहनों और चचेरे भाई-बहनों के रूप में सम्बन्धित हो सकते हैं, जैसे कि सभी मनुष्य एक ही माँ से उत्पन्न हुए प्रतीत होते हैं।

धरती पर सर्वप्रथम पहचानने योग्य कुछ जीव रूप शैवाल थे, साधारण जीवों का एक परिवार। डच व्यापारी और वैज्ञानिक एंटॉन वान लीयूनहॉक पहले व्यक्ति थे जिन्होंने देखा कि शैवाल 'छोटे जानवरों' की तरह बढ़ रहे हैं। यह साल 1678 था। उन्होंने घोषणा की 'सभी जीवन क्रियाएँ कोशिकाओं के अन्दर होती हैं जो उन्हें जीवन की सबसे छोटी इकाई बनाती हैं।' दो सौ साल बाद, जर्मन वनस्पतिशास्त्री मिथियस स्लाइडेन और उनके जीवशास्त्री सहयोगी थियोडॉर श्वान ने दावा किया : 'सभी सजीव चीजें कोशिकाओं की बनी होती हैं।' आखिरकार, जर्मन चिकित्सक रुडॉल्फ वरचू ने निष्कर्ष निकाला कि उनके निरीक्षणों के अनुसार यह सम्भव था 'कोशिकाएँ केवल पहले से मौजूद कोशिकाओं से उत्पन्न हुई हैं'।

शैवालों के विभिन्न रूप ही प्राथमिक जीवों में नहीं थे। वे धरती पर जीवों के अधिक उन्नत रूपों हेतु हालात स्थापित करने के लिए भी महत्वपूर्ण थे। प्रारम्भिक धरती का वायुमण्डल सम्भवत: शुक्र और मंगल की तरह था : लगभग 3 प्रतिशत नाइट्रोजन के साथ 95 प्रतिशत से अधिक कार्बन डाइऑक्साइड। अन्य गैसों के निशान होंगे लेकिन मुक्त ऑक्सीजन नहीं थी। इन हालात में, केवल अनॉक्सीकारक जीवाणु ही जीवित रह सकते हैं—ऐसे जीवाणु जिन्हें ऑक्सीजन की जरूरत नहीं होती। जब साइनोबैक्टीरिया यानी नील-हरित-शैवाल उभरे तो इन्होंने धरती के वायुमण्डल को पूरी तरह बदल दिया। इन्होंने श्वसन प्रक्रिया में और प्रकाश संश्लेषण के लिए सौर ऊर्जा का इस्तेमाल किया, नील-हरित शैवाल कार्बन डाइऑक्साइड सोखते थे और ऑक्सीजन छोड़ते थे। आखिरकार, वातावरण में मुक्त ऑक्सीजन जमा होना शुरू हो गयी। ओजोन परत बनी जो हानिकारक पराबैंगनी विकिरणों से जीवन की रक्षा करती है। नील-हरित शैवालों ने, अब तक हमने जो किया है उसकी तुलना में इस ग्रह को कहीं अधिक तेजी से बदला। जीवन की सतत् उपस्थिति के कारण, धरती का वातावरण अन्य ग्रहों की तुलना में अब काफी अलग है। यहाँ 77 प्रतिशत नाइट्रोजन, 21 प्रतिशत ऑक्सीजन, 1 प्रतिशत जलवाष्प और 1 प्रतिशत कार्बन डाइऑक्साइड है। प्रति दस लाख कणों में कार्बन डाइऑक्साइड का करीब 550 भाग है।[81]

प्राणवायु ऑक्सीजन के उत्पादन के अलावा, नील-हरित शैवालों ने इस धरती पर तापमान नियन्त्रित करने में सहायता की है। वैज्ञानिक दृष्टि से कहें तो घर्षण की ऊर्जा जिससे पृथ्वी का निर्माण हुआ, उसकी वजह से यह धरती पहले गर्म थी। जैसे यह ग्रह ठण्डा हुआ, प्रारम्भिक जीवाणुओं द्वारा निकले कार्बन डाइऑक्साइड और मीथेन ने ग्रीनहाऊस गैसों की तरह व्यवहार किया, इससे तापमान इतना बना रहा जो अब भी जीवन के लिए बहुत अधिक था। लेकिन उसके बाद सूर्य ने धीरे-धीरे अपना उत्पादन बढ़ाना शुरू किया। नील-हरित शैवालों ने शक्तिशाली सूर्य के प्रभाव को घटाया : उन्होंने कार्बन डाइऑक्साइड को ग्रहण किया और ऑक्सीजन को छोड़ा। कार्बन डाइऑक्साइड और मीथेन का स्तर वातावरण में गिरने लगा, ग्रीनहाऊस प्रभाव घटने लगा, इससे धरती के तापमान में और अधिक बढ़ोतरी नहीं हुई।

जीवन के लिए पानी भी धरती पर होना जरूरी था। हाइड्रोजन—पानी का प्रमुख घटक—एक हल्की गैस है। जीवन प्रक्रियाएँ अगर इसे बाँधें नहीं तो यह इस ग्रह को छोड़कर मंगल की तरह शुष्क रूप में अन्तरिक्ष में वाष्पित हो जायेगा।

यहाँ तक कि जीवन ने भूविज्ञान को भी बदल दिया। मुक्त ऑक्सीजन ने समुद्र में और जमीन पर लोहे से मिलकर लौह अयस्क और अन्य खनिज संचित किये। समुद्री जीवों के कंकाल और अवशेष समुद्र-तल में अवसाद के रूप में संचित होकर खड़िया और चूना-पत्थर बन गये। शेष अन्य जैविक पदार्थ कोयला और तेल बन गये।

धरती को सजीव और निर्जीव दोनों ने मिलकर बनाया है, जिसे ब्रिटिश पर्यावरणविद् जेम्स लवलॉक ने धरती की ग्रीक देवी के अनुरूप गेया कहा। गेया सभी की बड़ी माँ थी : धरती और स्वर्ग के सभी देवताओं की निर्मात्री एवं जननी; देवता और दानव उन्हीं से जन्मे थे।

जेम्स लवलॉक ने गेया को पौधों, पशुओं, जीवाणुओं, पहाड़ों, समुद्रों और वातावरण को पूर्णत्व में एक साथ जुड़े एक एकीकृत प्रणाली के रूप में परिकल्पित किया, जो ग्रह को आकार देती है और धरती पर जीवन को बनाये रखती है। यहाँ तक कि जीवन के प्रमुख तत्व—कार्बन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन, वायु, पौधे और पशु जीवन के माध्यम से मिट्टी, पानी और धरती की परत में चक्रों में कई लाख साल तक घूमते रहे। इस ग्रह में और सभी जीवों में हम एक हैं।

एक प्रणाली के रूप में देखें तो गेया एक एकल जीव नहीं बल्कि एक समुदाय है : सभी जीवित प्राणियों का एक सजीव, साँस लेने वाला समुदाय जो अपने निर्जीव वातावरण के साथ सद्भाव के साथ विकसित हो रहा है। उन्हें रचनात्मकता और अनुशासन के मिश्रण के साथ एक मूर्ति के रूप में बनाया गया है। विकास के रूप में, रचनात्मकता आनुवंशिक उत्परिवर्तन और यौन प्रजनन से आती है; अनुशासन उनके वातावरण से प्राकृतिक चुनाव से अनुकूल किये जीवों से आता है।

गेया की शक्तियों की सीमा है। उन्हें बहुत ठण्डी या बर्फीली जगहों में शीतल या ग्रीष्म में नहीं रखा जा सकता। वह सूर्य के आकार में भारी वृद्धि का सामना नहीं कर सकती, जो तब होगा जब कुछ अरब साल में सूर्य लाल दैत्य बन जायेगा। वह

शायद धरती पर भारी उल्का प्रभाव या नजदीकी सुपरनोवा में विस्फोट का सामना नहीं कर सके। और वह शायद हम जो क्षति उसे पहुँचा रहे हैं उसे भी सह नहीं सके।

सामान्य रुप में गेया के विकसित जीवन का कोई खास रूप नहीं है। पिछले 600 करोड़ वर्ष में, इसने पाँच से अधिक प्रमुख व्यापक सामूहिक विलुप्तताएँ देखी हैं, जिसमें डायनासोर और अम्मोनाइट्स जैसे कई प्रकार के जानवरों को विलुप्त होते देखा गया है। सभी नस्लों के 75 से 90 प्रतिशत जीव पर्मियन काल में पूर्णत: नष्ट हो गये। लेकिन जीवन फिर भी चलता रहा, और विलुप्त प्रजातियों के रिक्त स्थानों को जीवित प्राणियों के नये परिवारों ने भर दिया।

गेया ने लम्बे समय तक अच्छी तरह से कार्य किया जितने समय तक उसने स्वतन्त्र रूप से और स्वचालित तरीके से कार्य किया। उसमें दिमाग नहीं था, कोई ग्रहीय-मस्तिष्क नहीं था। उसने पदार्थ और जीवन की रचनात्मकता, अन्योन्याश्रयता के बुने जालों के ज़रिए कार्य किया। जब उसे मस्तिष्क की जरूरत पड़ी तो मानवीय समझ और तकनीकों ने चीज़ों को विकृत करना शुरू कर दिया।

मनुष्यों के पास गेया को नियन्त्रित करने हेतु ना तो काबिलियत है और ना ही स्वतन्त्रता। लेकिन हमारे पास उसे गम्भीर नुकसान पहुँचाने के लिए काफी शक्तिशाली विज्ञान और तकनीक है। पहले ही हम अधिकतर पारिस्थितिकी तन्त्रों और गेया के चार प्रमुख क्षेत्रों में से तीन पर, यानी जीवमण्डल, जलमण्डल और वायुमण्डल पर गड़बड़ी पैदा करने वाले प्रभाव डाल चुके हैं। लम्बे समय में, हमारे कार्यों का प्रभाव स्थलमण्डल पर भी होगा और धरती के भूगर्भशास्त्र को पलट देगा। किसी भी अद्भुत या रहस्यमय अर्थ में हम गेया के दिमाग नहीं हैं; हम उसे नयी ऊँचाइयों की तरफ नहीं ले जा रहे, हम उसे ऐसे गर्त में ले जा रहे हैं जहाँ वह हमारे बिना कभी नहीं पहुँच सकती है। हम बहुत ही अक्रिय किस्म के दिमाग वाले हैं। किसी बहुत ज्यादा शराब पिये हुए, ड्रग्स लेने वाले, एक के बाद एक सिगरेट पीने वाले के दिमाग की तरह हम खुद को और अपने शरीर 'गेया' का बहुत अधिक उपभोग कर रहे हैं और उसे दूषित कर रहे हैं।

कृषि के आविष्कार के बाद से, हमने स्थानीय पारिस्थितिकी तन्त्रों और जैवविविधता को नष्ट किया है। जबकि केवल बीसवीं सदी में हमने गेया प्रक्रिया के कुछ बहुत ही बुनियादी तत्वों में दखल देना शुरू कर दिया। लगभग आधी सदी पहले, हमने क्लोरो-फ्लोरोकार्बन (सीएफसी) रसायनों का इस्तेमाल करना शुरू

किया, जो पूरी तरह हानिरहित माना जाता था। सन् 1985 में हमने खोजा कि यह सुरक्षात्मक ओजोन परत को नष्ट कर रहा है। इससे मनुष्य में त्वचा कैंसर के मामले बढ़ रहे हैं। यह शायद फसलों की पैदावार को भी घटा रहा है। और यह प्लवकों की वृद्धि को प्रतिकूल तरीके से प्रभावित कर सकता है, जो कई बड़े जलीय जीवों के लिए भोजन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है और जिससे समुद्री पारिस्थितिकी प्रणालियों और प्रक्रियाओं को नुकसान होता है।

इससे भी अधिक हानिकारक रूप से तापमान नियन्त्रण हेतु गेया के तन्त्र में हम खलल डाल रहे हैं—खासतौर पर वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड और मीथेन के स्तरों में वृद्धि के द्वारा। करोड़ो वर्ष पहले के पौधों के अवशेष से कोयले और तेल निर्मित हुए थे। अपने मुख्य ऊर्जा स्रोत के रूप में उनकी खुदाई और दहन द्वारा हम कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर को औद्योगीकरण से पूर्व के 280 भाग प्रति मिलियन से 1995 में 360 पीपीएम और 2015 में 550 भाग प्रति मिलियन बढ़ा रहे हैं।

हमारे 1,300 मिलियन पशु, हमारे 250 मिलियन हेक्टेयर संचित खेत और हमारे अनगिनत मलबे के ढेर से वायुमंडल में मीथेन की मात्रा दोगुनी हो गयी है, जो 700 भाग प्रति बिलियन (पीपीबी) के प्राकृतिक स्तर से बढ़कर 1995 में 1,600 पीपीबी और 2015 में 1800 पीपीबी हो गया है।

जलवायु परिवर्तन पर अन्तर्राष्ट्रीय पैनल (आईपीसीसी) के अनुमान बताते हैं कि वर्तमान प्रवृत्तियों के आधार पर, अगले दशक के अन्त तक वैश्विक तापमान एक डिग्री सेल्सियस से चार डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। इस परिवर्तन से समुद्र का जलस्तर बढ़ेगा। यह पारिस्थितिकी जोन में बदलाव लायेगा, वर्षा के स्वरूपों को बदलेगा और कृषि में काफी खलल पैदा करेगा।

हमेशा की तरह, गेया इससे निपटने के लिए अपना सर्वश्रेष्ठ देगी। यहाँ तक कि सबसे खराब स्थिति में भी, जीवन कुछ निम्न रूप में शायद बचा रहेगा। लेकिन कई पौधे और जीवों की प्रजातियाँ जो तुरन्त अनुकूल होने में असमर्थ होंगे, खत्म हो जायेंगे। शायद हम उनमें से एक होंगे। एक कवि थे, जिन्होंने एक बार लिखा :

आप एक तारे को हिलाये बिना
एक छोटे-से फूल को नहीं तोड़ सकते हैं।[82]

सभी जीवन एक ही है। एक आम चेतना होती है जो सभी प्राणियों के जीवन को एक महान ब्रह्माण्डीय एकता में जोड़ती है। जब भी हम एक चीज को नष्ट करेंगे या अन्य चीज को बिगाड़ेंगे तो उसका परिणाम होगा। ब्रिटिश पर्यावरण लेखक पॉल हैरीसन ने बदलाव हेतु हमारी तत्काल जरूरत को बहुत ही सुन्दर तरीके से व्यक्त किया :

> जब हमारा युग युवा था तो हमने वैसे ही विश्वास किया जैसे बच्चे विश्वास करते हैं। अब हम वयस्क हैं, यह समय बचकानी बातों से दूर रहने का है। यह समय एक ऐसे धर्म को अपनाने का है जो अन्तरिक्ष युग को गले लगाता है और प्रकृति के प्रति हमारे प्यार और धरती को बचाने की हमारी कोशिशों का समर्थन करता है।[83]

राष्ट्रीय अन्तरिक्ष सोसायटी, यूएसए के कार्यकारी समिति के अध्यक्ष मार्क हॉपकिंस और मैंने सभी देशों की समृद्धि और शान्ति के साथ मिलकर रहने के मानवीय सपने को लम्बे समय तक सँजोया है। हमने धरती के द्वारा सामना की जा रही चुनौतियों से निपटने के लिए अन्तरिक्ष में वैश्विक सहयोग के माध्यम से आगे बढ़ती एक दुनिया की कल्पना की है। हम सचेत हैं कि सभी देश हमारे ग्रह को दोबारा जीने योग्य बनाने हेतु प्रयास करें। ऐसा, इसके वातावरण और पारिस्थितिकी तन्त्रों की सदियों की तबाही और जीवाश्म ईंधन और ताजा पानी समेत इसके कीमती खनिज संसाधनों में तेजी से आयी कमी की वजह से हुआ है। हमें उम्मीद है कि हमारा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग, इस ग्रह को रहने योग्य बनाने में एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करेगा जो देशों में और उनके बीच समृद्धशाली और शान्तिपूर्ण सम्बन्धों को प्रोत्साहित करेगा।

24

ब्रह्माण्ड के स्रोत हैं परमेश्वर

'जहाँ आपकी प्रतिभा और संसार की जरूरतें आपस में मिलती हैं, वही आपके जीवन का उद्देश्य होता है।'

—अरस्तू
ईसा पूर्व यूनानी दार्शनिक एवं वैज्ञानिक

एक समय में, ब्रह्माण्ड के सारे पदार्थ एक ही बिन्दु में समाहित थे, जिसे ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति माना जाता है। एक बहुत बड़ा विस्फोट 'बिग बैंग' हुआ जिसकी वजह से ऊर्जा का फैलाव हुआ और वह पदार्थ में बदल गयी। बिग बैंग के कारण उत्पन्न अणुओं में हाइड्रोजन और हीलियम प्रमुख थे साथ ही थोड़ा-बहुत लिथियम भी उत्पन्न हुआ था। आधुनिक गणनाओं के मुताबिक यह घटना तकरीबन 13.82 अरब साल पहले हुई थी। ईश्वर एक अद्वितीय शक्ति है; ईश्वर की वजह से बिग बैंग हुआ और समान उद्देश्य हेतु ब्रह्माण्ड का निर्माण हुआ। ईश्वर धार्मिक विचार नहीं है बल्कि जो भी मौजूद है उससे परे सर्वोच्च शक्ति है। हम केवल हमारी समझ से परे इस गतिशील ब्रह्माण्ड का एक हिस्सा हैं और ईश्वर इस ब्रह्माण्ड से परे है।

ऋग्वेद के सृष्टि श्लोकों में से एक हिरण्यगर्भ है :

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत ।
स दाधार पृथ्वीं ध्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

वो था हिरण्यगर्भ सृष्टि से पहले विद्यमान...
वो ही तो सारे भूत जाति का स्वामी महान...

जो है अस्तित्वमान धरती आसमान धारण कर....

ऐसे किस देवता की उपासना करें हम हवि देकर?

अबू धर के अधिकार पर एक हदीस है, जिसने पैगम्बर मुहम्मद (उनको शान्ति मिले) से पूछा :

'क्या आपने परमेश्वर को देखा?'

पैगम्बर ने कहा, 'वह प्रकाश है; मैं उसे कैसे देख सकता हूँ?'[84]

वैज्ञानिक दृष्टि से कहा जाता है कि बिग बैंग के होने पर प्रारम्भिक विस्तार के बाद—जो प्रकाश का एक महाविस्फोट होगा—प्रोटोन, न्यूट्रॉन और इलेक्ट्रॉन समेत सूक्ष्म अणुओं की उत्पत्ति होने हेतु ब्रह्माण्ड पर्याप्त रूप से ठण्डा हो गया। गुरुत्वाकर्षण एवं आन्तरिक गैस दबाव के बीच तीव्र एवं जटिल संघर्ष में ब्रह्माण्डीय गैस के बादलों से तारों की उत्पत्ति हुई। इस उथल-पुथल में, गैस का घनत्व उसके खुद के गुरुत्वाकर्षण बल के कारण बढ़ गया। इसके कारण गैस गर्म हो गयी; परिणामस्वरूप दबाव बढ़ गया और सम्पीडन प्रक्रिया एक पड़ाव पर पहुँच गयी। तापीय ऊर्जा के परिणामस्वरूप गैस निकलने लगी और सम्पीडन प्रक्रिया आगे भी चल सकी और एक नये तारे का जन्म हुआ।[85]

सौरमण्डल लगभग 4.6 अरब साल पहले या बिग बैंग के लगभग नौ अरब साल बाद बनना शुरू हुआ। ज्यादातर हाइड्रोजन से बना और थोड़े-बहुत दूसरों तत्वों की भी मौजूदगी वाला आणविक बादल नष्ट होना शुरू हो गया, इससे इसके केन्द्र में एक बड़ा-सा गोला बनने लगा जो आगे चलकर सूर्य और इसके अगल-बगल का घेरा बनने वाला था।

केन्द्र के आसपास बढ़ा हुआ यह डिस्क मिलकर छोटे पिण्डों में बदल गया होगा, और जो बाद में ग्रह, क्षुद्रग्रह और धुमकेतु बन गये होंगे। सूर्य नई पीढ़ी का तारा है और सौर प्रणाली में पिछली पीढ़ियों के तारों द्वारा निर्मित पदार्थ शामिल हैं। भारतीय मूल के अमेरिकी खगोलशास्त्री सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर ने अपने गणितीय सिद्धान्त के लिए भौतिकी में 1983 में नोबेल पुरस्कार जीता जो विशालकाय तारों के बाद के क्रमिक विकास के चरणों पर मौजूदा स्वीकृत सिद्धान्त से जुड़ा है।

हर चीज़, जो शुरू होती है उसका अन्त होना ही है जिसमें हमारी सौर प्रणाली और वास्तव में खुद ब्रह्माण्ड का अन्त भी शामिल है। ब्रह्माण्ड का क्या होगा? ब्रह्माण्ड का कोई भी एक निश्चित मॉडल नहीं है। अल्बर्ट आइंस्टीन के सिद्धान्त

पर मेरा पूरा विश्वास है, जब तक कि इस मुद्दे पर उभर रहे विरोध पर सहमति नहीं बन जाती, कि ब्रह्माण्ड दोलनों की एक अनन्त श्रृंखला का अनुसरण कर रहा है, वह हर बार बिग बैंग के साथ शुरू होता है और बिग क्रंच के साथ खत्म हो जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड तब तक फैलता रहेगा, जब तक कि पदार्थों के गुरुत्वीय आकर्षण की वजह से वह अन्दर की तरफ आकर गिरने न लगें और फिर से वापस प्रतिकर्षित होने लगे। यह एक ऐसे समय के पैमाने पर घटित होगा जो हमारे लिए लगभग अकल्पनीय है।

ब्रह्माण्ड के बारे में सोचने में, अपनी लघुता का एहसास होना बहुत महत्वपूर्ण है। हमारा अस्तित्व अवर्णनीय रूप से मामूली और नगण्य है! हम अपने आसपास जो देखते है वह वृहत वास्तविकता का केवल एक छोटा हिस्सा है। ब्रह्माण्ड में हमारा स्थान थार के मरुस्थल में रेत के कण जैसा है। इससे पहले कि हम इसके भव्य डिजाइन के बारे में चिन्तन करने का प्रयास करें चलिए हम इस ब्रह्माण्ड की विशालता को समझ लें। धरती का एक चक्कर लगाने में प्रकाश को सेकण्ड के दसवें हिस्से से भी कम का समय लगेगा। जबकि ब्रह्माण्ड का अनुमानित व्यास लगभग 500 अरब प्रकाश वर्ष है!

सूर्य अपेक्षाकृत एक छोटा तारा है लेकिन यह लगभग 13 लाख धरतियों को अपने अन्दर रख सकता है। बीटलगीज़, एक लाल दानव तारा है जो धरती से लगभग 640 प्रकाशवर्ष दूर है वह अपने व्यास में 1,000 सूर्यों को समा सकता है। समझने के लिए, यदि सूर्य सन्तरे के आकार का है तो उस पैमाने पर धरती, रेत का एक कण है जो लगभग 10 मीटर की दूरी पर अपनी कक्षा पर चक्कर काट रही है। और इसी पैमाने पर, सूर्य से सबसे नजदीक का तारा अल्फा सेंचुरी नामक तारा है जो 2,000 किलोमीटर दूर है। और दोबारा इसी पैमाने पर, आकाशगंगा को सन्तरों के एक गुच्छे के रूप में देखा जा सकता है, (जो असल में व्यास में 3 करोड़ किलोमीटर का है), जहाँ प्रत्येक सन्तरा आपस में औसतन 3,000 किलोमीटर की दूरी पर है।

सभी प्रमुख धार्मिक परम्पराओं में सूर्य को जीवन का स्रोत बताया गया है। यह इस अर्थ में सत्य है कि धरती इसीलिए अस्तित्व में है क्योंकि सूर्य मौजूद है। धरती पर प्रत्येक जीव सूर्य से निकलने वाली प्रकाश ऊर्जा से अपना आहार प्राप्त करता है। सूर्य का भीतरी भाग प्लाज्मा का बना है—गैस इतनी गर्म होती कि यह

पूरी तरह आयनित हो जाता है और इसके अणु अपने इलेक्ट्रॉनों का त्याग कर देते हैं। इस तापमान पर, हाइड्रोजन नाभिक के प्रोटॉन इतनी तेजी से गति करते हैं कि वे अपने आपसी प्रतिकर्षण पर काबू पा लेते हैं और हीलियम नाभिक तैयार करने हेतु आपस में मिल जाते हैं। इस तरह की प्रतिक्रिया नाभिकीय संलयन कहलाती है। सूर्य में प्रत्येक सेकण्ड 60 करोड़ टन हाइड्रोजन परमाणु हीलियम में बदलते हैं, और प्रकाश के रूप में उत्सर्जित 4×10^{22} मेगावाट ऊर्जा पैदा कर रहे हैं।

भविष्य की बात करें तो 1.1 अरब साल बाद सूर्य आज से 10 प्रतिशत अधिक चमकीला होगा। अतिरिक्त ऊर्जा के कारण नम ग्रीनहाउस प्रभाव पैदा होगा। आखिरकार, धरती का वायुमण्डल सूख जायेगा क्योंकि जलवाष्प अन्तरिक्ष में चला जायेगा और कभी भी वापस नहीं आयेगा। आज से 3.5 अरब साल बाद सूर्य आज की तुलना में 40 प्रतिशत अधिक चमकीला होगा। यह इतना गर्म होगा कि समुद्र उबलने लगेंगे और इसके परिणामस्वरूप जलवाष्प अन्तरिक्ष में गुम हो जायेगा। बर्फ की चादरें लम्बे समय के लिए स्थायी रूप से पिघल जायेंगी और बर्फ प्राचीन इतिहास हो जायेगी; धरती की सतह पर कहीं पर भी जीवन रहने लायक नहीं रह जायेगा। धरती शुक्र की तरह शुष्क और गर्म हो जायेगी।[86]

लगभग छह अरब साल में, सूर्य के कोर में हाइड्रोजन खत्म हो जायेगा। कोर में बनी निष्क्रिय हीलियम की राख अस्थिर हो जायेगी और अपने खुद के भार से टूट जायेगी। इसके कारण कोर गर्म होगा और घना हो जायेगा। सूर्य का आकार बढ़ने लगेगा और अपने फैलाव के लाल दानव चरण में प्रवेश कर जायेगा। फैलता सूर्य बुध और शुक्र की कक्षाओं को निगल जायेगा और शायद धरती को भी निगल जाये। यहाँ तक कि यदि धरती बच जाती है तो भी लाल दानव बने सूर्य से तीव्र गर्मी हमारे ग्रह को झुलसा देगी और किसी भी रूप में जीवन का बने रहना बिल्कुल असम्भव हो जायेगा।

उस समय सूर्य के जलते हीलियम से कार्बन उत्पन्न होगा। यह चरण लगभग 10 करोड़ साल के बाद ईंधन के इस स्रोत के खत्म होने के बाद समाप्त होगा। अन्त में, हीलियम का आवरण अस्थिर हो जायेगा जिसके कारण सूर्य घातक तरीके से स्पन्दन करने लगेगा। यह कई स्पन्दनों के क्रम में अन्तरिक्ष में अपने वायुमण्डल का एक बड़ा अंश उड़ा देगा। जब सूर्य अपनी बाहरी परतों का विस्फोट करेगा तो केवल कार्बन का केन्द्रीय कोर बाकी रह जायेगा। असल में, यह तारे के द्रव्यमान

वाला धरती के आकार का हीरा होगा, जो खरबों सालों के दौरान धीरे-धीरे ठण्डा होगा।

सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर ने अनुमान लगाया कि एक स्थिर श्वेत वामन का अधिकतम आकार लगभग 3×10^{30} किलोमीटर होगा जो सूर्य के द्रव्यमान का लगभग 1.4 गुणा होगा। चन्द्रशेखर-सीमा से अधिक द्रव्यमान के तारे आखिरकार अपने खुद के भार के अन्दर से टूट जाते हैं और न्यूट्रॉन तारे या ब्लैक होल या श्याम विवर बन जाते हैं। इस सीमा से कम द्रव्यमान के तारे अपने इलेक्ट्रानों के ह्रास के दबाव से टूटने से बच जाते हैं।

ब्रह्माण्ड का अध्ययन करना उतना ही गहरा प्रेरणादायक अनुभव है जितना ईश्वर के बारे में अध्ययन करना। ब्रह्माण्ड का अध्ययन करने में हम ईश्वर के कार्य पर विचार करते हैं। और ईश्वर का अध्ययन करना वास्तव में एक सन्तुलन का कार्य है। गूढ़ सत्यों को समझने के क्रम में बड़े-बड़े धर्मशास्त्रियों की साँस रुक जाती है और पवित्रता की हेकड़ी दफा हो जाती है। ईश्वर की उपस्थिति का अध्ययन घुटनों के बल बैठ कर ही हो सकता है—मानसिक और शाब्दिक दोनों ही अर्थों में। ब्रह्माण्ड में हर ओर उत्कृष्ठ तालमेल के उदाहरण फैले पड़े हैं जिन्हें देखना बहुत दिलचस्प है। हम ब्रह्माण्ड के हर अंश में ईश्वर की मौजूदगी के साक्ष्य देख सकते हैं। भौतिक अचरों के तार्किक विश्लेषण के लिए जैसे आध्यात्मिक रूप से साँस रोकने की जरूरत है।[87]

राष्ट्रीय मानव जीनोम अनुसन्धान संस्थान के पहले निदेशक और अब राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान (एनआईएच), यूएसए के निदेशक फ्रांसिस कॉलिंस से बेहतर मानव जीवन के रहस्य को कोई भी नहीं जान पाया। कॉलिंस ने मानव डीएनए की व्याख्या करने का प्रयास किया और इस प्रक्रिया में रोग हेतु जीनों की जाँच की क्रान्तिकारी पद्धति विकसित की। उन्होंने बहुत ही अर्थपूर्ण ढंग से कहा : 'वह ईश्वर एक ईश्वर है जिन्होंने ब्रह्माण्ड का निर्माण किया, और उन्होंने साथ ही मुझे एक मानव के रूप में शामिल करने की योजना भी बनायी। साक्ष्य इस विचार का समर्थन करते हैं कि सभी सजीव एक ही पूर्वज के वंशज हैं यह बात वाकई जबरदस्त है।'[88]

फ्रांसिस कोलिंस ने द *लैंग्वेज ऑफ गॉड : ए साइंटिस्ट प्रेजेन्ट्स एविडेंस फॉर बिलीफ* में लिखा है :

> यदि ईश्वर ने आपको और मुझे एक प्राकृतिक और आध्यात्मिक प्राणी के रूप में सृजन करने हेतु चुना है और उस लक्ष्य को पूरा करने हेतु विकास तन्त्र के इस्तेमाल का फैसला लिया, तो मेरी राय में यह अविश्वसनीय रूप से मनोहर है। और चूँकि ईश्वर स्थान और समय से बाहर हैं, तो वह जानते थे कि शुरुआत में कौन-सा परिणाम सही होने जा रहा है। ऐसा नहीं है कि ऐसे हालात थे कि यह कारगर सिद्ध नहीं होगा। इसलिए तब, वह असंगति कहाँ है जिसकी वजह से कई लोग विज्ञान और आत्मा के इन दृष्टिकोणों को परस्पर विरोधी मानते हैं? मुझमें वे दोनों मौजूद हैं। दोनों दिन में एक ही समय में मौजूद होते हैं। वे वर्गीकृत नहीं हैं। वे पूरी तरह से संगत हैं। और वे उसी का हिस्सा हैं जिसका कि मैं हूँ।[89]

हालाँकि, विज्ञान प्राकृतिक दुनिया को समझने का एकमात्र विश्वसनीय तरीका है और जब इनके उपकरणों का सही तरीके से इस्तेमाल किया जाये तो भौतिक अस्तित्व में चकित करने वाला ज्ञान मिल सकता है। लेकिन विज्ञान 'ब्रह्माण्ड अस्तित्व में क्यों आया?', 'मानव अस्तित्व का क्या अर्थ है?' और 'हमारे मरने के बाद क्या होता है?' जैसे प्रश्नों का जवाब देने में नाकाम है। मानव जाति के लिए गहरे सवालों का जवाब ढूँढ़ना सबसे मजबूत प्रेरणाओं में से एक है और हमने क्या देखा और क्या नहीं देखा को समझने के लिए वैज्ञानिक और आध्यात्मिक दोनों की शक्ति को समझने की जरूरत है।

वास्तव में विशुद्ध वैज्ञानिक होने और या हम सबमें निजी दिलचस्पी रखने वाले ईश्वर में विश्वास रखने वाला शख्स होने में कोई टकराव नहीं है। विज्ञान का कार्यक्षेत्र प्रकृति की खोज करना है। ईश्वर का अधिकार क्षेत्र आध्यात्मिक संसार में है, विज्ञान के उपकरणों एवं भाषा के साथ एक अनन्त दायरा। इसकी दिल से, दिमाग से और आत्मा से जाँच की जानी चाहिए—और दिमाग को दोनों दायरों को मिलाने का रास्ता खोजना चाहिए।

मैंने भिन्न आस्थाओं वाले कई वैज्ञानिकों के साथ काम किया है। मेरे कई सहयोगी तो नास्तिक भी हैं। मैं मानता था कि यदि आप ईश्वर के अस्तित्व को मानते हैं तो एक स्तर पर आप नियन्त्रण छोड़ देते हैं और आप जो चाहते हो वह केवल इसलिए नहीं कर सकते क्योंकि वह अच्छा लगता है। और मुझे नियन्त्रण में रहना बहुत पसन्द था। जब कोई ईश्वर के साथ सम्बन्ध रखने की इच्छा प्रकट करता है तो वह अपनी खुद की भारी कमियों के साथ आमने-सामने आता है। यदि आप खुद के आईने के रूप में किसी तरीके से भगवान को देख सकते हैं तो

आपको एहसास होता है कि कोई भी चीज़ जिस पर आप वास्तव में गर्व कर सकते थे उससे आप बस कितनी दूर रह गये। यह प्रारम्भिक तौर पर किसी भी व्यक्ति के लिए एक बहुत ही तकलीफदेह अनुभव हो सकता है। भगवान के पास जीवों की रचना करने के लिए योजना थी जिसके साथ वे मैत्री कर सकें : जिनमें वे नैतिक कानून डाल सकें; जिनकी आत्माओं में वे संचरित हो सकें और जिनको वे उनके खुद के व्यवहार के बारे में निर्णय लेने की मुक्त इच्छा दे सकें—एक उपहार जिसका बार-बार दुरुपयोग किया जाता है। ईश्वर अपने लोगों को मैत्री के तरीके देने में, वह कितने शक्तिशाली और दयालु हैं इसे प्रमाणित करने और याद रखने के लिए अनोखे हैं। प्रमुख स्वामीजी के साथ मेरी मैत्री इसका प्रमाण है।

इस किताब के चौथे और अन्तिम भाग में मैं बदलाव के साधन के रूप में रचनात्मक नेतृत्व पर चर्चा करूँगा। रचनात्मक नेता जन्म से ऐसे नहीं होते हैं। वे विशेष परिस्थितियों और हालातों की उपज होते हैं; वे बेहतरी के लिए बदलाव लाने हेतु विकसित होते हैं। मैंने रचनात्मक नेतृत्व की निर्भयता, साहस, नैतिक जीवन, अहिंसा, क्षमा, दया, दूरदर्शिता और सहयोग नामक आठ पहलुओं को गिनती की है। मैं इन पहलुओं के प्रतीकपुरुषों नचिकेता, अब्दुल कादिर, अब्राहम लिंकन, तिरुवल्लुवर, महात्मा गाँधी, नेल्सन मण्डेला, दलाई लामा, विक्रम साराभाई और वर्गीज कुरियन की कहानियाँ भी बताऊँगा।

भाग चार

रचनात्मक नेतृत्व का विकास

'एक सर्वश्रेष्ठ नेता वही है जिसके अस्तित्व से लोग अनजान हों, जब वह अपने काम करते हुए, अपने लक्ष्य को हासिल कर ले, तब लोग कहें : यह सब हमने अपने आप किया है।'

—लाओ त्जु

प्राचीन चीन के दार्शनिक और कवि

25

हर तथ्य के चेहरे में निर्भयता से देखो

'सच्चे, कोमल और निडर व्यक्ति बनो।'

—महात्मा गाँधी

पुस्तक के इस चौथे और अन्तिम भाग में, मैं आपके साथ नेतृत्व के विषय पर अपने वे अनुभव साझा करूँगा, जो प्रमुख स्वामीजी के साथ रहकर मुझे प्राप्त हुए। वे एक महान आध्यात्मिक नेता है। दुनिया भर में बीएपीएस के कार्यक्रमों के दौरान उनके क्रियाकलापों का अवलोकन करते हुए मैं इस बात को परखना सीख गया कि किस तरह एक महान नेता का विकास होता है। किसी संस्था विशेष को ध्यान में रखते हुए किसी भी सन्दर्भ में नेतृत्व को कई प्रकार से परिभाषित किया गया है। यह सन्दर्भ राजनैतिक, सैन्य, व्यापारिक, आध्यात्मिक, बौद्धिक, रोमांचक, खेलों, कला या मानव व्यवहार से जुड़े हो सकते हैं। साहित्य में उपलब्ध सभी परिभाषाओं को ध्यान में रखते हुए मैं मौलिक नेतृत्व की प्रक्रिया की मूल रूप से इस तरह व्याख्या करूँगा कि यह वो क्षमता है, जिसके तहत लोगों में एक समान लक्ष्य हासिल करने के लिए क्षमताओं को उत्पन्न किया जाता है।

अपने व्यवसाय को चलाने के लिए हम चाहें किसी भी वित्तीय, तकनीकी या रणनीतिक संसाधनों का इस्तेमाल करें, उनको ज़मीनी हकीकत लोग ही देते है। लेकिन इस प्रक्रिया में अब नेतृत्व का महत्व भी आँका जा रहा है, क्योंकि इसमें अच्छा नेतृत्व ही किसी कार्य को पूरा करने के लिए लोगों को एकजुट करता है और कार्य पूरा कर लिया जाता है। यही अच्छे प्रबन्धन की पहचान है। इस हिस्से के आठ अध्याय आपको उन गुणों को खोजने में मदद करेंगे, जिसके जरिए आप सही

नेतृत्व, कार्यक्षमता और अच्छे प्रबन्धन के गुणों को विकसित कर सकते हैं और एक प्रभावशाली नेता बन सकते हैं। मैं निर्भयता के गुण के साथ शुरुआत करता हूँ, जो मेरे हिसाब से किसी भी सशक्त नेतृत्व की नींव होता है। अगर मार्गदर्शक या नेता निडर नहीं है, तो संकट के वक्त उसका अभियान कमज़ोर पड़ जायेगा, जैसे तूफान, बाढ़ या भूकम्प के वक्त कमज़ोर नींव वाली इमारत ढह जाती है।

प्राचीन हिन्दू पौराणिक कथाओं में आत्मा और ब्रह्म के गुणों के बारे में बालक नचिकेता अग्रणी माने जाते हैं। इस कहानी को कठोपनिषद में वर्णित किया गया है। नचिकेता के काल में यज्ञ के अन्त में मन्दिर में पारम्परिक रूप से गाय दान की जाती थी। नचिकेता ने अनुभव किया कि उनके लोभी पिता बुज़ुर्ग, बाँझ, अन्धी, लँगड़ी गायों को दान करते थे, जो दूध नहीं देती थी। यह देखकर नचिकेता बहुत विचलित हुए। उन्होंने अपने पिता से पूछा। 'मैं भी आपकी सन्तान हूँ। आप मुझे किस ईष्ट को समर्पित करेंगे?' यह सुनकर उनके पिता क्रोधित हो गये, लेकिन उन्होंने कुछ उत्तर नहीं देने का निर्णय लिया। नचिकेता ने फिर से प्रश्न किया। पुत्र के प्रश्नों से चिढ़कर पिता ने गुस्से में कहा, 'मैं तुम्हें मृत्यु के देवता—यम को दूँगा।'

एक आज्ञाकारी लड़के की तरह नचिकेता ने अपने पिता के निर्देश का पालन किया और यम के घर गये, लेकिन वह कहीं बाहर गये हुए थे। नचिकेता ने तीन दिन तक उनके घर के दरवाज़े पर बैठकर बिना कुछ खाये-पिये उनका इन्तज़ार किया। जब यम वापस लौटे, उन्हें यह देखकर बहुत बुरा लगा कि एक बच्चा इस अवस्था में उनका इन्तज़ार कर रहा है। अपनी झेंप मिटाने के लिए यम ने नचिकेता को तीन वरदान माँगने को कहा। नचिकेता ने पहले वरदान में स्वयं और अपने पिता के लिए शान्ति माँगी। यम ने स्वीकार कर लिया। फिर नचिकेता ने पवित्र अग्नि होम में आहुति सीखने की इच्छा व्यक्त की, जिसे यम ने फिर स्वीकार कर लिया।

अपने तीसरे वरदान में नचिकेता ने यह बात सीखने की इच्छा जतायी कि मृत्यु के बाद मनुष्य का क्या होता है। यम यह वर देने पर तैयार नहीं हुए। आखिर यह रहस्य तो खुद देवताओं के लिए भी नहीं खोला गया था। उन्होंने नचिकेता से कुछ और वरदान माँगने के लिए कहा और उन्हें कई अन्य प्रलोभन दिये। यहाँ तक कि यम ने उन्हें स्वर्ग के सुख देने का भी प्रस्ताव दिया। लेकिन नचिकेता नहीं माना। उसने यम से कहा कि भौतिक वस्तुएँ केवल कुछ ही वक्त के लिए रहेंगी। और जिसने खुद मृत्यु को देखा हो, भोगा हो, उसके लिए भौतिक वस्तुओं का क्या

मोल है। यह सब देखकर यम, नचिकेता के निर्भय व्यवहार, आध्यात्मिक ज्ञान और भौतिक और मृत्यु के परे की आत्मिक वस्तुओं में अन्तर जानने की क्षमता से प्रभावित हो गये। उन्होंने समझाया कि प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा, उस परम शक्ति ब्रह्म से जुड़ी हुई है, जो इस सृष्टि को चला रही है।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था, 'अगर मुझे नचिकेता जैसे विश्वास करने वाले 10-12 लोग मिल जाते हैं, तो मैं इस देश की सोच और विचारधारा को बदल सकता हूँ।' प्रमुख स्वामीजी नचिकेता की इसी निडरता को एक बच्चे का सबसे बड़ा गुण मानते हैं।

गाँधीनगर में स्वामीनारायण अक्षरधाम परिसर प्रतिदिन शाम को सत्-चित-आनन्द वॉटर लेज़र शो के माध्यम से नचिकेता की कहानी को पर्यटकों को दिखाता है। जब मैंने यह शो देखा, मुझे गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की कुछ बेहद खूबसूरत पंक्तियाँ याद आ गयीं :

मुझे खतरों में छिपने के लिए प्रार्थना नहीं करनी है,
बल्कि उन चुनौतियों का सामना करने के लिए निडर होने की प्रार्थना करनी है।
मुझे अपने दर्द की ज्वाला से बचने के लिए प्रार्थना नहीं करनी है,
बल्कि उस दर्द पर जीत हासिल करने के लिए प्रार्थना करनी है।[90]

एक अन्य साहसी बालक था नौ वर्षीय अब्दुल क़ादिर, जिसने बग़दाद में जाकर शिक्षा ग्रहण करने के लिए 14वीं सदी में अपनी विधवा माँ से घर छोड़ने की आज्ञा माँगी थी। माँ ने अब्दुल कादिर के हिस्से की पैतृक सम्पत्ति की चालीस दीनारें उसकी जाकेट के भीतर छिपा कर सिल दीं थीं और उसे एक कारवाँ के साथ जो हमदान शहर तक तो सुरक्षित पहुँच गया, पर जब कारवाँ यहाँ से पहाड़ी इलाकों की तरफ चला, 60 डकैतों ने आक्रमण कर दिया, जिसका सरगना था अहमद बादवी। कारवाँ में मौजूद लोगों के पास डकैतों से लड़ने की ताकत नहीं थी। डकैतों ने उनकी सारी कीमती चीज़ें छीन ली और उन्हें आपस में बाँटने के लिए बैठ गये। अब्दुल कादिर शान्ति से एक कोने में खड़ा था। एक डकैत ने उनसे पूछा कि क्या उसके पास भी कुछ कीमती चीज़ देने के लिए है? कादिर ने बेहद निडर अन्दाज़ में जवाब दिया : 'हाँ, मेरे पास 40 दीनार हैं।' डकैत ने उनका विश्वास नहीं किया और चला गया। दूसरे डकैत ने भी वही सवाल पूछा और अब्दुल कादिर ने वही जवाब दिया। डकैत ने फिर उस पर विश्वास नहीं किया और हँसता हुआ चला गया।

दूसरा डकैत अहमद बादवी के पास गया और उसे लूटा हुआ सामान दिखाया। उसने अब्दुल कादिर के बारे में भी बताया। सरदार ने डकैत से बच्चे को उसके पास लाने को कहा। अब्दुल कादिर को डकैतों के सरदार के पास लाया गया। अहमद बादवी ने उससे पूछा, 'मुझे सच बताओ कि क्या तुम्हारे पास कुछ कीमती सामान है?' अब्दुल कादिर ने जवाब दिया, 'हाँ, मैं बता चुका हूँ कि मेरे पास 40 दीनार हैं।' सरदार ने पूछा, 'कहाँ है वो?' अब्दुल कादिर ने जवाब दिया, 'वे मेरी जाकेट के अन्दर सिलकर रखे हुए हैं।' डकैतों के सरदार ने अपनी तलवार से उसकी जाकेट को काट कर देखा तो उसे दीनारें मिल गयीं। उसे यह देखकर बड़ा अचम्भा हुआ कि छोटा-सा बच्चा बड़ी बहादुरी और साफगोई से जवाब दे रहा है और सच बता रहा है।

अहमद बादवी ने अब्दुल कादिर से पूछा, 'तुम्हें इतना साहसी किसने बनाया?' अब्दुल कादिर ने कहा, 'जब मैं अपना घर छोड़ रहा था, मेरी माँ ने मुझे हमेशा सच बोलने की हिदायत दी थी और कहा था कि कभी झूठ मत बोलना चाहे मौत ही क्यों न सामने खड़ी हो। फिर मैं सिर्फ 40 दीनार के लिए अपनी माँ की हिदायत को कैसे नकार सकता हूँ।' अहमद बादवी पर इन शब्दों का बड़ा असर हुआ। उसका पत्थर दिल पिघल गया, मन के अँधेरे और बुराई को धोते हुए उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे। उसने कहा, 'ऐ नेक बच्चे। तुमने अपनी माँ के लफ़्ज़ों को इतनी शिद्दत के साथ तवज्जो दी और मैं इतने वक्त से अपने मालिक खुदा की बात को नकार रहा हूँ।' यह कहकर वह इतनी ज़ोर से रोया कि उसे शान्त कराना मुश्किल था। अहमद बादवी, अब्दुल कादिर के पैरों में गिर पड़ा और डकैती और दूसरों को पीड़ा पहुँचाने के लिए पश्चाताप करने लगा। अपने सरदार को ऐसे देखकर गिरोह के बाक़ी डकैत भी अब्दुल कादिर के पैरों में गिर गये। अहमद बादवी ने कहा, 'लोगों को लूटते वक्त मैं सरदार था, अब प्रायश्चित के वक्त में आप हमारी अगुवाई करेंगे।' यह साहसी बालक अब्दुल कादिर बड़ा होकर अल-कुतुब अर-रब्बानी, हज़रत शेख अब्दुल कादिर जिलानी बना। अल्लाह उन पर हमेशा मेहरबानी बनाये रखे।[91]

ज़िन्दगी में किसी भी चीज़ से डरने की ज़रूरत नहीं है। यह सिर्फ समझने की बात है। 1937 में अपनी पुस्तक *थिंक एण्ड ग्रो रिच* में नेपोलियन हिल ने 6 भय के प्रकार बताये हैं, जिसमें एक या ज्यादा प्रकार के भय मिलकर हर इंसान के लिए

मुश्किलें खड़ी करते हैं। ऐसे लोग काफी भाग्यशाली हैं, जिनकी ज़िन्दगी में यह सारे 6 भय नहीं हैं। अपनी सामान्य उपस्थिति के आधार पर उनके नाम रखे गये हैं। यह हैं ग़रीबी का डर, आलोचना का डर, खराब स्वास्थ्य का डर, किसी प्रिय को खोने का डर, बूढ़ा होने का डर और मौत का डर। नेपोलियन हिल ने कहा था कि 'बाक़ी सब प्रकार के डर इन छह प्रकार के भय के सामने तुच्छ हैं।'[92]

यह 6 प्रकार के भय अपने आप में अपनी व्याख्या करते हैं। परिस्थितियों में इनमें कुछ बातें समान होती हैं। उदाहरण के तौर पर ग़रीबी के डर की बात करते हैं, जिसे नेपोलियन हिल सभी प्रकार के डरों में सबसे ज्यादा घातक मानते हैं। वह कहते हैं कि ग़रीबी का डर कई कारणों में रुकावट डालता है, कल्पना को खत्म करता है, उत्साह को कम करता है, लक्ष्य से भटकाता है, विलम्ब के लिए उकसाता है और प्रयासों में कमी करता है। यह प्रेम, मित्रता और अन्य भावनाओं को भी खत्म करता है और अनिद्रा और दुख उत्पन्न करता है।

डर, व्यक्ति की मनोस्थिति से ज्यादा कुछ भी नहीं है। किसी व्यक्ति की मनोस्थिति नियन्त्रण और दिशा पर निर्भर करती है। बगैर दिमाग में किसी विचार के आये, व्यक्ति कुछ भी नहीं बना सकता है। मनुष्य का विचार, किसी क्रिया को शारीरिक रूप से तुरन्त शुरू करने के लिए आवेग पैदा करता है, चाहे वह ऐच्छिक हो या अनैच्छिक हो। महज़ इत्तफाक़ से पैदा किये गये विचार किसी व्यक्ति के वित्तीय, व्यापारिक, पेशेवर या सामाजिक भाग्य को उसी तरह निर्धारित करते हैं जैसे सोच-समझकर पैदा किये गये विचार बदलाव लाते हैं।

अपने डर को जीतने के लिए हमें कुछ जागरूकता के साथ फैसले लेने की ज़रूरत है। आप बिना किसी चिन्ता के जितनी सम्पत्ति जमा कर सकते हैं, उसी परिस्थिति में आप शान्ति के साथ सोच समझकर ग़रीबी के डर से निपट सकते हैं। आप कोई काम चिन्ता किये बगैर भी कर सकते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि आप मेहनत करना बन्द कर दें, बल्कि आप धन से बेवजह चिपके नहीं रह सकते। आलोचना के भय से आप तभी छुटकारा पा सकते हैं, जब आप यह फैसला कर लें कि कोई आपके फैसलों को लेकर कुछ भी कहे, आप नहीं डरेंगे। आप वो काम करें, जो आपका अन्तर्मन कहता है, अपने उच्च्च लक्ष्य से निर्देशित हों। बढ़ती उम्र को अपंगता का कारण ना बनने दें। बल्कि अपने ज्ञान, अनुभव और तरक्की के लिए दिशा दृष्टि में बढ़ोत्तरी पर ध्यान दें। अपने दिमाग के स्वस्थ रहने पर ज़ोर दें।

अपने स्वास्थ्य को लेकर असावधान ना रहें, अपने शरीर का ध्यान रखें। अगर आप अकेले हैं, तो भी अपना ख्याल रखें। अगर आपके पास प्रेम नहीं हैं, तो भी शान्तिपूर्ण तरीके से जीवन जियें। आप अकेले हो सकते हैं पर असहाय नहीं। अपने हर दिन में कुछ ना कुछ लाभकारी कार्य करें। और सबसे बड़ी बात, यह स्वीकार करिये कि मौत को टाला नहीं जा सकता। अगर आप एक स्वरूप से दूसरे स्वरूप में परिवर्तित हो रहे हैं, तो भय किस बात का? रवीन्द्रनाथ टैगोर ने बड़ी खूबसूरती से इसे वर्णित किया है, 'सवेरा होने पर दिये का बुझना उसकी मृत्यु नहीं है, वह तो उसके लक्ष्य की प्राप्ति है।'[93]

अपने हर एक भय को परे रखकर आपको खुद से यह पूछना चाहिए : 'मैं किस प्रकार का नेता बनूँगा? उस प्रकार का व्यक्ति, जो सभी को साथ लेकर अनिश्चित समय में भी संस्था को आगे ले जाये या उस प्रकार का व्यक्ति जो डर और अनिश्चितता से जड़ और शिथिल हो जाता है। अवसरों को हाथ से ना जाने दें और चुनौतियों का सामना करें।' आप कैसे बता सकते हैं कि आप किस तरह के नेता हैं? अपने आपसे यह तीन सवाल पूछें—क्या आपने कभी रियलिटी चेक किया है? निडर नेता को ऐसे लोगों और वस्तुओं की ज़रूरत होती है, जो उन्हें इंकार को टालने की शक्ति दें। अक्सर लोग निर्णय लेने से बचने के लिए उन्हें कुछ पता नहीं है कहते पाये जाते हैं या ऐसी कहानी बहाने के तौर पर सुनाते हैं, जो किसी एक अप्रिय वास्तविकता को दर्शाती है। ऐसे लोग अपने लक्ष्य में ज्यादा देर तक नहीं टिक पाते हैं। एक बार आप सच्चाई का सामना करते हैं, तो वह आप को इसके निदान हेतु कदम उठाने लायक बनाता है। रियलिटी चेक का मतलब सिर्फ सच्चाई जानना ही नहीं है, बल्कि यह जानना है कि अब आप इस परिस्थिति में क्या कुछ कर सकते हैं।

दूसरा प्रश्न है : क्या आप विषम परिस्थितियों में भी त्वरित निर्णय ले सकते हैं? अच्छे नेता तेज़ी से काम करते हैं। आपको किसी भी किस्म की परेशानी होने के बावजूद जल्द कार्रवाई करना आना चाहिए। हालाँकि ज्यादातर गुणी व्यक्ति आरामदायक स्थिति को सब कुछ सही होने की स्थिति का संकेत मानते हैं, लेकिन मेरा मानना है कि इसके उलट होना चाहिए। अगर आप एकदम सन्तुष्ट और आरामदायक स्थिति में हैं, तो आपको यह पूछना शुरू कर देना चाहिए, 'ऐसी कौन विपरीत परिस्थितियाँ हैं जहाँ मेरे काम की जरूरत है?'

तीसरा प्रश्न है : अगर चीज़ें गलत होती हैं, तो क्या आप बिना किसी और को दोष दिये ज़िम्मेदारी खुद पर ले सकते हैं? ऐसे भी नेता हैं, जो हर समस्या को किसी और का दोष बताने के लिए तत्पर रहते हैं। यह कर्मचारी का दोष है, यह तरीके का दोष है इत्यादि। और कुछ नेता ऐंसे भी होते हैं जो किसी की गलती के लिए भी उसे दोष नहीं देते हैं, लेकिन आशा के विपरीत खुद सारा दोष ले लेते हैं। ऐसी स्थिति बड़ी लज्जाजनक होती है। सही तरीका वह है, जिसमें ना आप किसी दूसरे पर, ना ही खुद पर सारा आरोप मढ़ते हैं। निडर नेता बगैर किसी को दोष दिये समस्या को पहचानने की कोशिश करते हैं। शीशे में खड़े होकर कहते हैं कि इस समस्या में मेरा भी योगदान है, लिहाज़ा अब मैं इस समस्या को हल करूँगा।

अथर्ववेद (XIX, 15:6) में एक प्रार्थना है, जो निडरता को समग्र रूप से समझाती है :

अश्यं मित्रादश्यममित्रा दश्यम ज्ञातादश्यं परो यः।
अश्यं नक्तमश्यं दिवा नः सर्वा आषा मम मित्रं श्वन्तु।।

हम अपने दोस्तों-शत्रुओं, जाने-अनजाने लोगों के प्रति निडर बनें।
रात हो या दिन, सभी दिशाएँ हमारे हित में कार्य करें।

एक अच्छा नेता जानता है कि सच बोलते वक्त अल्पकालिक भय से परेशान होना अनकहे सच को लेकर बने अनवरत डर से बेहतर है। जब मैं प्रमुख स्वामीजी के जीवन को देखता हूँ, तो अनुभव होता है कि वे सदैव अपने हृदय, दिमाग और आत्मा के कप्तान रहे हैं। बाहरी सच से सन्तुष्ट हुए बिना उन्होंने भीतरी सच जानने का जोखिम उठाया ताकि वे ना सिर्फ अपने अनुयायियों का सही नेतृत्व कर सकें अपितु आत्मशान्ति से भी उनका साथ न छूटे। उन्होंने दूसरों की अपेक्षाओं पर खरा उतरने का ढोंग ना रचते हुए इस बात पर ध्यान दिया कि पूर्णतया गुणातीत होने के असल मायने क्या हैं?

26

मेरे निर्देश पर सजदे से तुम्हें कौन रोकता है?

'यह व्यक्ति का घमण्ड ही है, जिसने फरिश्ते को शैतान में बदल दिया, वो नम्रता ही है जिसने इंसानों को फरिश्ता बना दिया।'

—सन्त ऑगस्टीन

चौथी सदी के ईसाई धर्मशास्त्री और दार्शनिक

प्राचीन काल में पुराने यूनान और पुराने रोम की सभ्यताओं के सम्मिश्रित दौर में भविष्यवाणी करने के लिए व्यक्ति को ईश्वर की इच्छा के अनुसार चुना जाता था। ओरेकल नामक इस व्यक्ति को उस माध्यम के तौर पर माना जाता था, जिसके जरिए स्वयं ईश्वर मनुष्य से बात करते हैं। डेल्फी में अपोलो मन्दिर के प्राचीन इतिहास में एक पुजारिन को पायथिया नाम से बुलाया गया है।

डेल्फी, यूनान की फोसिस घाटी में पार्नेसस पर्वत दक्षिणी-पश्चिमी स्कन्ध में बना एक पवित्र स्थान है। मान्यता है कि सृष्टिक राजा ज़्यूस ने इस स्थान को धरती माता गेया के केन्द्र के रूप में अपनाया था। उन्होंने पूर्वी और पश्चिमी किनारों से दो चीलें भेजीं, और उन दोनों की उड़ानों ने डेल्फी के ऊपर एक दूसरे को काटा जिसके चलते इस जगह को गेया का केन्द्र बनाने का निर्णय लिया गया।

जब सुकरात के मित्र केरीफोन अपोलो मन्दिर आये, उन्होंने डेल्फी के ओरेकल से पूछा कि क्या कोई सुकरात से बुद्धिमान है। ओरेकल ने उत्तर दिया कि उनसे बुद्धिमान कोई नहीं है। एथेंस वापस आने पर केरीफोन ने यह बात सभी को बतायी। हालाँकि सुकरात ने ओरेकल के कथन को अतिशयोक्ति माना, क्योंकि उन्हें लगता था कि उनके पास कोई बुद्धि नहीं है। लेकिन ओरेकल की घोषणा को

नकारना इतना आसान नहीं था। लिहाज़ा सुकरात इस पहेली को सुलझाने और ओरेकल के वक्तव्य को ग़लत ठहराने के लिए एथेंस के बुद्धिमान माने जाने वाले लोगों—विद्वानों, कवियों, कलाकारों से मिलने लगे।

उनसे प्रश्न करने के बाद सुकरात इस नतीजे पर पहुँचे कि हर व्यक्ति जो स्वयं को बुद्धिमान समझता है, वास्तव में या तो उसे बहुत कम जानकारी है या वह बिल्कुल ही बुद्धिमान नहीं है। सुकरात को अहसास हुआ कि ओरेकल ने सही कहा था। ऐसे में जब तथाकथित बुद्धिजीवी लोग बुद्धिमान ना होते हुए भी खुद को बुद्धिमान समझ रहे थे, सुकरात जानते थे कि वे बुद्धिमान नहीं है। क्योंकि सिर्फ उन्हें ही अपनी अज्ञानता के बारे में पता था इसीलिए ओरेकल ने उन्हें सबसे बुद्धिमान कहा। सुकरात ने तब घोषणा की कि उत्कृष्टता बुद्धि से अधिक दैवीय कृपा का प्रसाद है।[94]

प्रमुख स्वामी जी, सुकरात के ज्ञान के जीते-जागते उदाहरण हैं। मैंने उनसे सीखा कि हमारी पाँच इन्द्रियों के स्पर्श, सूँघना, स्वाद, दृश्यता और सुनने की क्षमता के सामने हमें अपनी आत्मा के गुणों—अन्तर्मन की आवाज़, शान्ति, दूरदर्शिता, विश्वास और संवेदनाओं को नहीं भूलना चाहिए। लोगों में अन्तर अपनी इन खूबियों के इस्तेमाल की वजह से होता है; ज्यादातर लोग अपनी अन्दरूनी खूबियों के बारे में कम ही जानते हैं, जबकि कुछ लोग अपनी शारीरिक क्षमताओं पर भरोसा करते हैं, कभी-कभी तो शायद बस उन पर ही।

मैंने अपने जीवन में जल्दी ही सत्य के मार्ग पर चलने का महत्व जान लिया था। सत्य के रास्ते पर चलते हुए मनुष्य सिर्फ दो गलतियाँ कर सकता है—या तो पूरा रास्ता ना तय करे और या फिर वो उस मार्ग पर चले ही नहीं। बचपन में अरबी की कक्षाओं के दौरान मैंने इबलिस या शैतान के बारे में जाना। मनुष्य के मुकाबले में शैतान की क्या भूमिका है। क्या शैतान के पास मनुष्य को हराने वाली ताकत है, वह भी इतनी कि मनुष्य ईश्वर की इच्छा के साथ भी अच्छे कर्मों के मार्ग में आगे न बढ़ सके?

पवित्र क़ुरान में इबलिस के शरीर को आग से बना हुआ बताया गया है। उसे बाग़ी बताया गया है, जो अपने ही बनाने वाले के सामने अभिमान की लड़ाई लड़ रहा है और उस मनुष्य के आगे स्वयं को श्रेष्ठ दिखा रहा है जो मिट्टी से बना है। इबलिस के मन में मनुष्य के प्रति द्वेष है। वह ईश्वर से मनुष्य को परखने का

वरदान माँगता है, ताकि वह उस पर अपनी श्रेष्ठता साबित कर सके। उसका लक्ष्य मनुष्य को उसके ऊँचे स्थान से हटाना है, जहाँ उसे ईश्वर ने बिठाया है और मनुष्य को अच्छाई और बुराई के बीच संघर्ष में फँसाना है। वो हर वह कोशिश करता है, जिससे मनुष्य अपना स्तर नीचे गिराकर खुद का सर्वनाश कर ले और ईश्वर के समक्ष उसकी छवि खराब हो जाये।

ईश्वर ने इबलिस का मनुष्य को परखने की इजाजत देते वक्त उसे और हम मनुष्यों को यह भली-भाँति साफ कर दिया कि इबलिस की शक्ति, हमें ईश्वर के प्रति अवज्ञा प्रकट करने और घृणित कार्य करने से अधिक किसी और कार्य के लिए काम नहीं आ पायेगी। सिवाय इंसान को बहकाने के इबलिस को बल प्रयोग करने, दबाव अथवा मनुष्य के दमन के लिए कोई ताकत नहीं है।

वास्तव में वह व्यक्ति इबलिस को अपने ऊपर नियन्त्रण करने देता है, जो ईश्वर में सच्चा विश्वास नहीं रखता जिसके चलते वह इबलिस के बहकावे में आकर ग़लत काम करता है। इसके उलट वह व्यक्ति है जो अपने अटूट विश्वास और इच्छा शक्ति के मार्ग पर अडिग रहता है और इबलिस को मार्ग से भटकाने का कोई मौका नहीं देता है।

إِنَّ عِبَادِي لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطَانٌ وَكَفَى بِرَبِّكَ وَكِيلاً

मेरे बन्दों, किसी भी मुश्किल को सुलझाने के लिए मेरी ख्वाहिश से ऊपर कुछ नहीं है। दुनिया की सारी मुश्किलों को आसान करने के लिए खुदा काफी है। (पवित्र कुरान : 17.65)

इबलिस एक ऐसी अदृश्य वस्तु है, जिसके बारे में हमें तब पता चला जब ईश्वर ने अपने पैगम्बरों को इसके बारे में बताया। इबलिस के पास मनुष्य को बुरे कार्य करने के लिए उकसाने, और सच्चाई के मार्ग से भटकाने के अलावा मुनष्य को अपनी तरफ खींचने की कोई और ताकत नहीं है।

दूसरी तरफ मनुष्य के पास वो जागृत बुद्धि है, जो उसे अच्छाई और बुराई में फर्क बताती है और दैवीय सन्देशों को स्पष्ट रूप से उस तक लाती है। इन सभी बातों से ईश्वर के मार्ग तक पहुँचने के लिए ज़रूरी ज्ञान प्राप्त करने का मार्ग मिल जाता है। मनुष्य को ईश्वर ने इच्छाशक्ति भी प्रदान की है, जिससे वह सही निर्णय लेने

और सही मार्ग पर चलने के लिए फैसले ले सकता है। यही मनुष्य और इबलिस को बराबरी के मुकाबले में लाकर खड़ा करता है। इस लड़ाई में मनुष्य के पास बुरी इच्छाओं, लुभावने दृश्यों और नारकीय सुझावों के बीच सही विकल्प चुनने की आज़ादी है। और उसके पास इच्छाशक्ति, बुद्धिमत्ता और दृढ़विश्वास के साथ ऐसी स्थिति में बिना कमज़ोर पड़े और बिना हार माने जीतकर आने की क्षमता है। कुल मिलाकर पवित्र कुरान, उसमें विश्वास करने वाले लोगों में दृढ़ विश्वास का वो भाव जगाती है, जो सभी बुराईयों पर जीत दिला सकता है। और वे लोग जो इबलिस की लुभावनी बातों में आ जाते हैं, वे अपनी कमज़ोरियों की वजह से नहीं हारते, बल्कि अपनी शक्तियों को शून्य में ले जाने और उनका इस्तेमाल ना करने की वजह से हारते हैं।

इस तरह, अब हमें यह समझना चाहिए कि सृष्टि की रचना के वक्त शैतान को मनुष्य को बहकाने की आज़ादी देना, जिसके पास दृढ़ता की लड़ाई लड़ने के सारे हथियार मौजूद हैं, ईश्वर का मनुष्य में विश्वास होना साबित करता है। यह इसलिए है ताकि इंसान अपनी इच्छाशक्ति और क्षमता के मुताबिक अपना भाग्य चुन सके, न कि दबाव और नियन्त्रण के बल पर, क्योंकि उससे इंसान अपने लक्ष्य के प्रति कमज़ोर पड़ जायेगा और लड़खड़ा जायेगा। इससे इंसान की इच्छा शक्ति बढ़ेगी और उसकी क्षमता उसे और मज़बूत बनायेगी। एक इंसान की इच्छा शक्ति का विवेकशील भाव और काबिलियत उसकी पहचान है, जो खुद अपनी किस्मत का मालिक है और अपनी इच्छाशक्ति और चुनाव से अपना रास्ता बनाता है।

अब्राहम लिंकन का जीवन नैतिक संकट के वक्त ईश्वर द्वारा दी गयी इच्छा शक्ति को दर्शाता है। अब्राहम लिंकन एक बेहद आध्यात्मिक इंसान थे, जिन्होंने कभी संगठित धर्म को स्वीकार नहीं किया। हठधर्मिता उन्हें कभी रास नहीं आयी। उन्होंने ईश्वर में अपने विश्वास को अपने कामों में साकार करना बेहतर समझा। मैंने वाशिंगटन डीसी के नैशनल कैथेड्रल में अब्राहम लिंकन की इबादत में झुकी हुई मूर्ति देखी। मूर्ति का यह स्वरूप वास्तविक धार्मिकता को दर्शाता है, ताकतवर नेता का ईश्वरीय सत्ता में विश्वास नैतिक नेतृत्व का सबसे सच्चा रूप है।

सन् 1862 में लिंकन के जीवन में एक नाटकीय बदलाव आया। संघ के लिए गृहयुद्ध ठीक साबित नहीं हो रहा था और लिंकन को यैंकी और कॉनफिडरेट प्रेस में बेअदब माना जा रहा था। उनके पुत्र विली की अचानक मौत हो गयी। उनकी

पत्नी मानसिक अस्थिरता और निराशा के दौर से गुज़र रही थीं। इन सबके बीच मैनेसस की दूसरी लड़ाई में संघ की एक और हार बेहद घातक साबित हो रही थी। इन सवालों का आसान जवाब नहीं था। उन्हें भरोसा हो गया कि युद्ध के लिए दोनों पक्ष ज़िम्मेदार हैं। ईश्वर द्वारा दिये गये उनके अन्दर के यथार्थवाद ने ही उन्हें इन सभी परेशानियों में भी विचलित नहीं होने की शक्ति दी। जिसके चलते उनकी ज़िन्दगी का लक्ष्य पूरा हुआ। उन्होंने अपने एक दोस्त से कहा, "जब सभी लोग परेशानी और चिन्ता से घिर गये, तब मैंने घुटने टेककर ईश्वर से प्रार्थना की। जल्द ही मेरी आत्मा को चैन मिल गया।"[95]

लिंकन ने प्राकृतिक सन्देहवाद में कभी भरोसा नहीं किया। उन्होंने लिखा, 'मैं अब पहले से ज्यादा धार्मिक था।' आस्था में उनका भरोसा ना होने के बावजूद उन्होंने कभी किसी का अनादर नहीं किया। प्रत्यक्ष के रहस्य के लिए उनके संघर्ष ने उनके व्यक्तित्व का संचालन किया। चर्च के पाप स्वीकार करने वाली प्रक्रिया को ना मानने वाले लिंकन का भरोसा उस दैवीय शक्ति में था जो इंसान और उसके कार्यों के पीछे है। बाइबिल उनकी पसन्दीदा पुस्तक थी और उनके भाषणों और ख़तों में बाइबिल के कुछ अंश और छवि झलकती है।

4 मार्च, 1865 को दिये अपने दूसरे औपचारिक भाषण में लिंकन ने तनाव भरे माहौल में शान्ति की प्रार्थना की। 'हम सब मिलकर ईश्वर से इस बात की प्रार्थना करते हैं कि मुश्किलों भरा यह समय जल्द से जल्द निकल जाये।'

वे इस बात से चकित थे कि यह क्रूर युद्ध इतने लम्बे वक्त तक क्यों चला। उन्होंने महसूस किया कि यह विडम्बना ही थी कि गृहयुद्ध के हालात में भी दोनों पक्ष एक दूसरे के खिलाफ लड़ाई में ईश्वर का साथ माँग रहे थे। हालाँकि ईश्वर के फैसले को कोई टाल या नकार नहीं सकता था। लिंकन ने घोषणा की—अगर ईश्वर की यह इच्छा थी कि खून की हर बूँद गिरने तक युद्ध जारी रहे और दूसरे की तलवार उसका हिसाब करे, जैसा कि 3000 साल पहले कहा गया था, तो भी ईश्वर के फैसले को सही और सच्चा माना जायेगा।[96]

राल्फ वाल्डो इमर्सन ने इसे बेहद खूबसूरती से लिखा है :

अगर लाल कातिल सोचता है कि वह हत्या करता है,
या अगर मरने वाला सोचता है कि वह मारा गया है,
तो वे मेरे रहस्यपूर्ण मार्ग को नहीं पहचानते हैं

मैं ही जीवन हूँ, मैं ही आता हूँ, जाकर फिर लौटता हूँ।[97]

अब्राहम लिंकन की तरह हम भी सन्देहवाद और आध्यात्मिक आशंकाओं से ग्रस्त हैं। हमें सन्देह, अन्दरूनी और बाहरी मुश्किलों ने घेर रखा है। हम लगातार अपने लिए खुद अपना मानसिक घर बना और बिगाड़ रहे हैं। लेकिन चिन्ता में अपना घर बनाने और बिगाड़ने के बजाय हमें शायद वह करना चाहिए, जैसा अब्राहम लिंकन अवसाद के क्षणों में किया करते थे—हमें घुटनों के बल बैठकर परमपिता से प्रार्थना करनी चाहिए। अगर हम अपने दिमाग को खाली कर दें, उसे शान्त बनायें तो ईश्वर का दिखाया रास्ता हमारे मस्तिष्क में ज़रूर आ जायेगा। ईश्वर की इच्छा को जानने का सबसे आसान तरीका है खुद को उपकरण की तरह समझना न कि एक कर्मयोद्धा की तरह। अगर हम ईश्वर की योजना को लागू करने वाले उपकरण की तरह बन जाते हैं, तो ईश्वर खुद और हमारे जरिए काम करना शुरू कर देगा। ईश्वर काम करता है। वह सब कुछ है। हम तो सिर्फ चीज़ों को होता हुआ देखते हैं। हमारी एक नाकामी हमें सृष्टिसृजन के दिन के उसी सवाल पर लाकर खड़ा कर देती है, जो उत्पत्ति के दिन इबलिस के सामने था, 'मेरे निर्देश पर झुकने से तुम्हें कौन रोकता है?'

तुम्हें कैसे पता चलेगा कि तुम ईश्वर की इच्छा पर काम कर रहे हो या अपना अहं शान्त कर रहे हो? जब तुम अपना दम्भ भर रहे होते हो तब तुम अभिमान से फूल जाते हो। अहं शान्त होने पर हमेशा तुम्हारे अन्दर बड़ाई की भावना आयेगी। लेकिन जब तुम ईश्वर की इच्छा पूरी करते हो, छोटे या बड़े का सवाल नहीं सामने आता। उस वक्त तुम सिर्फ स्वयं होते हो। तुम्हें महसूस होता है कि खुदा ने तुम्हें चुना है या खुदा ने तुम्हें अपना ज़रिया बनाया है या खुदा तुम्हारे अन्दर तुम्हारे जरिए काम कर रहा है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम्हें कुछ छोटी चीज़ हासिल हुई या बेहद बड़ी कामयाबी, तुम्हारे अन्दर व्यक्तिगत अंहकार की भावना नहीं आयेगी। बल्कि तुम खुद को ईश्वर के प्रति बेहद कृतज्ञ मानोगे कि उन्होंने अपने मकसद के लिए तुम्हें चुना। उस वक्त किसी अभिमान की भावना नहीं होगी, बस एक विस्तार की भावना होगी।

ईश्वर की इच्छा के सामने
बिना किसी नाकामी के
खुद को दे देना

एक धीरे पकने वाले फल के जैसा है
जो सबसे अधिक मीठा होता है।

आयरिश लेखक सी एस लूइस ने द *प्रोब्लम ऑफ पेन* में लिखा, 'चाहे जैसे भी हो, तुम निश्चित रूप से ईश्वर के मकसद के लिए काम करोगे, लेकिन फर्क इससे पड़ता है कि तुम धोखेबाज़ यूदास की तरह काम करते हो या वफादार जॉन की तरह।'[98]

प्रमुख स्वामीजी के सान्निध्य में मैंने जाना कि एक व्यक्ति के पुण्यों का असर कैसे दूसरों का कल्याण कर सकता है। स्वामी जी कभी-कभार ही निर्देश देते हैं। वह कभी आज्ञा, बहस, डाँट या चीज़ों को मनवाते नहीं हैं। वह ईश्वर में मगन रहते हैं। उनके लाखों अनुयायी और शुभचिन्तक उनमें विश्वास करते हैं, जैसे हम विश्वास करते हैं कि सूर्य सिर्फ इसलिए ही नहीं निकला है कि हम इसे देखते हैं, बल्कि इसलिए भी निकला है कि हम इसके जरिए बाक़ी सबकुछ देख सकें।

27

देवत्व का स्त्रीलिंग है पवित्रता और पुल्लिंग है सत्य

'जो व्यक्ति ईश्वर को पाने की दिशा में काम करता है,
उसे वाक्शक्ति, दिमाग, इन्द्रियों और दयावान हृदय
की पवित्रता की ज़रूरत होती है।'

—चाणक्य

भारतीय प्रायद्वीप के दक्षिणवर्ती केन्द्र पर कन्याकुमारी में दो सागर और एक महासागर—बंगाल की खाड़ी, अरब सागर और हिन्द महासागर मिलते हैं। इस अद्भुत समागम स्थल पर तमिल कवि, दार्शनिक और तिरुक्कुरल के लेखक तिरुवल्लुवर की 40 मीटर ऊँची पत्थर की प्रतिमा खड़ी है। तमिल भाषा में तिरू का अर्थ सम्मान के परिप्रेक्ष्य में लिया जाता है, जो लेखक वल्लुवर और उनकी पुस्तक को दिया गया है, जो ईसा पूर्व दूसरी सदी में लिखी गई थी।

कहीसुनी बातों के अलावा तिरुवल्लुवर के जीवन के बारे में कोई लिखित जानकारी नहीं है। एक धार्मिक और सन्त प्रवृत्ति के गृहस्थ व्यक्ति के तौर पर उनका सम्मान किया गया। वल्लुवर ऐसा नाम था, जो बिनाई के पेशे से जुड़े लोगों के नाम के साथ जुड़ा था। यह उस व्यक्ति के नाम पर भी लागू होता था, जो हाथी पर सवार होकर, ढोल बजाकर राजा के आदेशों की घोषणा करता था। अपने नाम की अनुपयुक्त उत्पत्ति होने के बावजूद, तिरुवल्लुवर ने कुशाग्रता, साहित्य में निपुणता और असाधारण गुणों के साथ मानव के मनोविज्ञान की व्यक्तिपरक धारणाओं को खोजते हुए मानव व्यवहार की जटिलताओं की पहचान की।

तमिल भाषा में तिरुक्कुरल सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थों में से एक है। यह कई अन्य नामों से भी जाना जाता है, जैसे तमिल मरई, तमिल वेद, पोयामोज़ी (वह अकाट्य शब्द जो कभी विफल नहीं होते) और देवं नूल (दैवीय शब्द)। 133 अध्यायों में 1330 दोहे हैं, जिन्हें तीन श्रेणियों में बाँटा गया है। आरम (सही), पोरुल (धन) और इन्बम (प्रेम)। आरम और इन्बम मानव जीवन में आदर्शवादी जीवनचर्या की बात करते हैं, वहीं पोरुल मनुष्य के आचार-विचार की चर्चा करता है। तिरुक्कुरल द्वारा स्थापित नीतिशास्त्र सर्वाधिक उपयोगी और वैश्विक है। इसका मुख्य केन्द्रबिन्दु मुख्यतः हमारे संसार से है। यह मानव जीवन की विचारधारा के अनुकूल है और वल्लुवर में जाति और धर्म के आधार पर कोई अन्तर नहीं है। उनके अनुसार वास्तव में लोग दो वर्ग में होते हैं—नेक लोग और अकुलीन लोग। परन्तु जन्म का इससे कोई वास्ता नहीं है। नेक व्यक्ति कुछ भी करके हमेशा दूसरे की मदद करेगा और डर और लालच से भरा अकुलीन व्यक्ति अनुपयोगी होता है और संकट के वक्त हमेशा बस अपना हित ही देखता है। (कुरल 1080)

वल्लुवर गुणों को सर्वाधिक महत्व देते हैं। वह कहते हैं कि व्यक्ति के जीवन का प्रत्येक भाग, प्रत्येक पहलू उसके गुणों द्वारा तय किया और जिया जाना चाहिए। वह उन गुणों और अच्छी चीज़ों की बात करते हैं, जिन्हें अपने अन्दर समाहित करना चाहिए और उन नकारात्मक चीज़ों के बारे में भी, जिन्हें त्याग देना चाहिए। वल्लुवर खासतौर से दो चीज़ों पर बहुत गम्भीर हैं। पहली बात है अकृतज्ञता। बाकी सभी गुनाह माफी योग्य हैं, पर अकृतज्ञता नहीं। दूसरी बात है मांस का सेवन। वे कहते हैं, कोई दूसरे के मांस का सेवन करके कोई अपना मांस कैसे बढ़ा सकता है। किसी को मारना बेहद अपमान की बात है और मांस खाना अर्थहीन है। (कुरल 254)

वल्लुवर शराब के सेवन के प्रति भी कठोर हैं। वह कहते हैं, शराब, ज़हर से अलग नहीं है। (कुरल 926)

वल्लुवर धार्मिकता पर बहुत ज़ोर देते हैं। वह कहते हैं कि अच्छा व्यवहार और चरित्र उत्कृष्टता की ओर ले जाते हैं। इससे हमें लोगों से तारीफ और सम्मान मिलता है। इससे हृदय भी पवित्र होता है, जो उच्च स्तरीय आध्यात्मिक ज्ञान के लिए बेहद ज़रूरी है। दूसरी तरफ बुरे व्यवहार से अपयश फैलता है क्योंकि यह बुराइयों का स्रोत है और इससे तकलीफें और बरबादी मिलती है। (कुरल 137)

इसमें कोई सन्देह नहीं कि मूल्यों, गुणों, उत्तमता और पवित्रता से ही मनुष्य में बदलाव आता है। प्रमुख स्वामी जी कहते हैं, 'हमारा पवित्र होना बेहद महत्वपूर्ण है। मैं सिर्फ इन्द्रियों की पवित्रता की बात नहीं करता हूँ। हमें अपनी इच्छाओं में, इरादों में, सभी कार्यों में पवित्रता लानी होगी।' जबसे मैं प्रमुख स्वामी जी के सानिध्य में हूँ, मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि 18वीं सदी के अंग्रेजी कवि ने उनके लिए यह लिखा है—

> प्रेम की रोशनी, पवित्रता का तेज,
> दिमाग़ और संगीत उनके चेहरे से सांस ले रहा है,
> ऐसा हृदय जिसकी कोमलता से सब सन्तुलित होता हो,
> हाँ .. उसकी दृष्टि में आत्मा झलकती है।[99]

प्रमुख स्वामीजी मूल्यपरक जीवनशैली को बढ़ावा देते हैं। वह जीवन के तथ्यों से जुड़े फैसलों को लेने का दर्शन सिखाते हैं, जिसमें नैतिक मूल्यों का समावेश होता है। उनके साधारण से ज्ञान में सततता, पर्यावरणवाद, वन्यजीव संरक्षणवाद और जीव कल्याण शामिल हैं। वह मूल्यों और नैतिक मूल्यों को निजी इच्छा के तौर पर लेते हैं ना कि किसी धर्म के आधार पर। उनके सरल शब्दों में, नैतिकता का अर्थ 'नैतिक मूल्यों से है, जिसका हम रोज़ाना लिये जाने वाले फैसलों के दौरान सामना करते हैं।' मूल्यपरक जीवनशैली प्राथमिक तौर पर हमारे व्यवहार के अन्दरूनी आयामों से जुड़ी है। हम एक-दूसरे से अकेले में या समूह में किस तरह से बात करते हैं और हमारी जाति या पर्यावरण में कैसा रवैया अपनाते हैं? खास बात यह है कि हमारी नैतिकता ही हमें किसी व्यक्ति के नज़दीक लाती है और उसके प्रति गुणवत्ता बरकरार रखने को कहती है। हम स्वयं से प्रश्न पूछने लगते हैं : 'क्या किसी के साथ बर्ताव करने का मेरा यही तरीका है?' 'क्या इसी तरीके से किसी अन्य को भी मेरे साथ बर्ताव करना चाहिए?' चूँकि हमारे अन्दर अन्तर्वैयक्तिक व्यवहार की आलोचना करने और जीवों के साथ संचार करने की क्षमता है, हमारे पास उस व्यवहार और वार्तालाप के लिए कूट भाषा और प्रतिमान स्थापित करने की क्षमता है। जब हम नैतिक मूल्यों की बात करते हैं, हमारे अच्छे व्यवहार के लक्षणों के साथ ही यह नैतिक कूटभाषा और प्रतिमान ही उस वक्त कार्य कर रहे होते हैं।

हमारी नैतिकता ऐसे मुद्दों को लेकर सवाल उठाती है कि हम किसी सम्बन्ध में किस तरह का व्यवहार करते हैं या किसी के साथ रहते वक्त कैसे पेश आते हैं।

हमारे नैतिक मूल्य हमें अच्छे और बुरे कार्यों में समझ बढ़ाने के लिए प्रेरित करते हैं। यह हमें उन गुणों के बारे में भी बताते है, जिनसे रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में मनुष्य का स्वभाव बेहतर होता है (जैसे ईमानदारी, शराफत, विश्वासपात्रता और क्षमा)। समय और संस्कृति के हिसाब से नैतिक मूल्य और आदर्शों का विकास हुआ है, जो यह दर्शाता है कि किस वक्त, किन हालात में व्यक्ति ने अपने सद्गुणों का परिचय देते हुए निर्णय लिया।

प्रमुख स्वामीजी के नियमों और कार्यों का अध्ययन करने के बाद जब मैंने तिरुक्कुरल का पुनर्अध्ययन किया, उस वक्त मेरे दिमाग में व्यवस्थित पद्धति का सुझाव आया। पाँच ऐसे सवाल हैं जिन्हें अगर रोज़ाना सोचा जाये, तो उससे हमारी नेकी में सुधार आ सकता है।

पहला प्रश्न है : 'क्या आज मेरे अन्दर किसी गुण की उत्पत्ति हुई?' यह गुण हमारे हृदय की ऐसी आदतें है, जो हमारे माता-पिता या बाल्यावस्था में अध्यापकों के द्वारा सिखायी गयी हैं। वास्तव में यही हमारा सर्वश्रेष्ठ गुण है। क्या आज मैंने अपने किसी गुण को खोते हुए कोई रेखा लाँघी है? या कम-से-कम कुछ वक्त के लिए मैंने एक ऐसे व्यक्ति की तरह बर्ताव किया, जिसने ईमानदारी, विश्वासपात्रता, पवित्रता या किसी अन्य गुण को दर्शाया है, जो मुझे बचपन में सिखाया गया था?

दूसरा प्रश्न है : 'क्या आज मैंने किसी की भलाई से ज्यादा किसी को नुकसान पहुँचाया? या मैंने ऐसी कोशिश की?' अपने कार्यों के अल्पकालीन और दीर्घकालीन परिणामों के परिप्रेक्ष्य में देखें।

तीसरा प्रश्न है : 'क्या मैंने लोगों के साथ सम्मान और गरिमा के साथ व्यवहार किया?' सभी मनुष्यों के साथ एक समान भाव से गरिमा के साथ बर्ताव किया जाना चाहिए क्योंकि वे मनुष्य हैं। सभी मनुष्यों के पास यह नैतिक अधिकार है, खासकर यह मौलिक अधिकार है कि उनके साथ स्वतन्त्र और समान मनुष्यों जैसा बर्ताव किया जाये, ना कि किसी वस्तु की तरह। क्या मेरे कार्यों द्वारा किसी के मौलिक अधिकारों का हनन तो नहीं हुआ, जो हर व्यक्ति के लिए सुरक्षित होने ही चाहिए।

चौथा प्रश्न है : 'क्या आज मैं सभी के साथ निष्पक्ष था? नैतिकता को लेकर किसी विशेष स्थिति के अलावा क्या मैंने आज सभी के साथ समान व्यवहार किया?' न्याय के लिए यह ज़रूरी है कि हम सुविधाओं और ज़िम्मेदारियों को

बाँटते वक्त निष्पक्ष बने रहें। मैंने किसको सुविधाएँ दीं और किसको ज़िम्मेदारियाँ दीं? मैंने किस तरह यह फैसला किया?

पाँचवाँ प्रश्न है : 'क्या मेरी उपस्थिति की वजह से मेरा समुदाय अच्छा था? क्या मैं इसलिए बेहतर था, क्योंकि मैं अपने समुदाय का हिस्सा था?' अपने प्राथमिक समुदाय को समझें, आप इसे किसी भी प्रकार से वर्णित कर सकते हैं—पड़ोस, अपार्टमेंट की इमारत, परिवार, कम्पनी आदि। क्या मेरे पास अपने समुदाय को मज़बूत बनाने के लिए अपने हितों से आगे बढ़कर जाने की क्षमता थी? खुद को अच्छा इंसान बनाने के लिए क्या मैं अपने समुदाय से कुछ अच्छे गुण ग्रहण कर पाया?

रोज़ाना की यह नैतिक सोच हमारे मन में ज़रूर आनी चाहिये, जब हम किसी बड़े नैतिक सवाल पूछने के लिए खड़े हों। उस व्यक्ति के लिए खुद के अन्दर की चीज़ों और वास्तविकता के लिए विशेष ज़िम्मेदारी को समझना बेहद ज़रूरी है, जो वैश्विक स्तर पर नैतिक नेतृत्व का हिस्सा बनने जा रहा हो, ताकि उस स्तर पर लोगों का फायदे से ज्यादा नुकसान ना हो सके। हम सभी अच्छे काम के लिए नेतृत्व कर सकते हैं, यह हमारी इच्छा पर निर्भर करता है। चूँकि हम अपने-आप के अलावा रोशनी की किरण या प्रतिबिम्ब के रूप में भी खुद को स्थापित करते हैं, लिहाज़ा बाहरी दुनिया के प्रति भी हमारी ज़िम्मेदारी है। हम या तो उम्मीद की किरण होते हैं या निराशा की भावना का अँधेरा होते हैं। हमें किस तरह खुद को सामने रखना है, इसके लिए हमारे पास विकल्प होते हैं और हमारे यही विकल्प विश्व के सृजन में हमारा योगदान होते हैं।

अरस्तू ने कहा था कि केवल गुण होने भर से ही अच्छे कार्य नहीं हो जाते हैं, बल्कि 'किसी व्यक्ति द्वारा किये गये अच्छे कार्य से ही भला होता है।'[100] अच्छे कार्य करने से नेक इंसान बनना मानवीय प्रकृति है, क्योंकि यह अच्छाई ही है कि हम अपने अस्तित्व के कारणों को जानते हैं और पूर्ण मानवीय जीवन का ज्ञान प्राप्त करते हैं। एक पवित्र व्यक्ति को इस बात की समझ है कि सत्य ही सभी चीज़ों का मूल्य है। जैसा कि प्रमुख स्वामीजी कहते हैं कि हम सभी सत्य को जानना चाहते हैं, क्योंकि यह इस बात का इशारा करता है कि ईश्वर ने बड़े प्रेम से हमें बनाया है।

सत्य को जानने का वास्तविक अर्थ क्या है? कोई व्यक्ति किस तरह सत्य जान सकता है? हम सभी को शान्ति कायम करने के लिए मिलकर काम करने की

ज़रूरत है। आइये हम सब यह मानें कि यही सत्य की खोज है। यह किसी भी तरह से आसान कार्य नहीं है। हम इतने लम्बे वक्त तक अँधेरे और दूषित माहौल में रहे हैं कि अब अविश्वास हमारी दूसरी प्रवृत्ति बन गया है। हर जगह हिंसा और अपराध की ही आशंका जताई जाती है, बुराई से लड़ा नहीं जा रहा बल्कि उसे सहा जा रहा है। लेकिन इस स्थिति को बदलना होगा। धीमी और लगातार कोशिशों से ही हम सत्य को पा सकते हैं। हम अपने डर को भगा सकते हैं और हममें से हर कोई खुद को सर्वश्रेष्ठ बनाने की कोशिश कर सकता है। यही प्रमुख स्वामी जी ने किया और अपने अनुयायियों और भक्तों के जरिए साल-दर-साल करते रहे। यही दोनों के बीच मैत्री की नींव है।

हम इस बात पर विश्वास करते हैं कि विश्व को अच्छा स्थान बनाने के लिए व्यक्तिगत स्तर पर हर शख्स को बदलाव लाना होगा। यह एक सत्य मार्ग है। हममें से हर कोई अच्छाई को बुराई पर चुन सकता है, अच्छाई के लिए अच्छे काम कर सकता है, घृणा पर प्रेम को चुन सकता है, हर चीज़ में अच्छाई की सम्भावना तलाश सकता है, बुरे कार्यों और विनाशकारी कार्यों का विरोध कर सकता है, किसी जीवित व्यक्ति को दुख देने से बच सकता है, वगैरह। अगर हम सभी सच्चे मार्ग पर चलकर जीवन जी सकते हैं, तो ऐसा कुछ नहीं है कि जो हम हासिल ना कर सकें। ऐसा कुछ नहीं है जो हमें मिल न सके, सफलता, स्वास्थ्य, फलदायकता, आनन्द, रक्षा और समृद्धि। (कुरल 738)

एक असत्य मानवीयता के लिए वायरस की तरह काम करता है। और वह असत्य यह है कि हमारे आसपास ज्यादा अच्छाई नहीं है। माहौल में एक प्रकार की कमी और तंगी है। सच तो यह है कि हमारे आसपास ज़रूरत से ज्यादा अच्छाई मौजूद है। बहुत से रचनात्मक विचार हैं। हमारी ज़रूरत से ज्यादा ऊर्जा है। आवश्यकता से ज्यादा प्रेम मौजूद है। आवश्यकता से ज्यादा खुशी है। यह सब उसी दिमाग की उत्पत्ति हो सकता है, जो अपने असीम भविष्य के प्रति सचेत है। यहाँ सबके लिए बहुत कुछ अच्छा है। अगर आपमें विश्वास है, तो आप सब कुछ देख सकते हैं। अगर आप किसी चीज़ पर गम्भीरता से कार्य करते हैं, तो वह अपना सुफल जरूर देती है। यही सत्य है।

28

अहिंसा की राह में पराजय नहीं होती

'अहिंसा उच्चतम नैतिकता तक ले जाती है, जो समस्त क्रमिक विकास का लक्ष्य है। जब तक हम बाकी के जीवों को नुकसान पहुँचाना नहीं छोड़ेंगे, तब तक हम जंगली ही रहेंगे।'

—थॉमस ए. एडीसन

उन्नीसवीं सदी के सफल आविष्कारक

कई युवाओं ने मुझसे यह प्रश्न पूछा है कि क्या आध्यात्मिकता केवल पूजा-प्रार्थना स्थलों और मठों तक ही सीमित है, या क्या दैनिक जीवन में आध्यात्मिक दृष्टिकोण ग्रहण किया जा सकता है, और क्या यह सांसारिक जीवनयापन का सूत्र हो सकता है? मैंने आमतौर पर उन्हें महात्मा गाँधी का उदाहरण दिया है जिन्होंने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम को आम लोगों की आध्यात्मिक खोज बना दिया। उन्होंने एक शक्तिशाली साम्राज्य के खिलाफ अहिंसक अभियान छेड़ा, जो मानवीय इतिहास में अद्भुत है। अन्य लोगों की तरह मैंने भी पूरी जिन्दगी अहिंसा का पालन किया और किसी भी प्रकार के मांस को नहीं खाकर इसे प्रकट किया है। लेकिन मैं प्रमुख स्वामीजी से मिलने के बाद ही इसका असली मतलब समझ सका। मैंने प्रमुख स्वामीजी को अहिंसा का अवतार पाया। वे करुणा से भरे और अपनी आस्था में अटल हैं—दोनों ही बातें उच्च चेतना की पहचान हैं। उनसे मेलजोल से मुझे समझ आ गया कि उच्च चेतना तक पहुँचना ही मानव विकास का एकमात्र उद्देश्य है और अहिंसा उस उच्च चेतना तक पहुँचने का एकमात्र साधन है। मैं काव्य उदाहरण के माध्यम से अहिंसा की व्याख्या करना चाहूँगा :

एक गुणातीत साधु एक मधुमक्खी की तरह
घूमता है,
बिना किसी फूल को हानि पहुँचाए
बस पराग बिना उसकी रंग, सुगन्ध लिये
चुन लेता है तनिक भर
और शहद बनाकर बाँट देता है।

इस अध्याय में, मैं जीवन के अर्थ को चरम सीमा तक बढ़ाने के लिए सबसे शक्तिशाली युक्ति के रूप में अहिंसा का आदर्श प्रस्तुत करने की कोशिश करूँगा। चलिए भगवान बुद्ध के साथ शुरुआत करते हैं। बुद्ध के पथ की शुरुआत 'मारना नहीं' के संकल्प के साथ होती है, लेकिन इसकी परिणति नफरत, भय और स्वयं को प्रचारित करने के मोह से दिल और दिमाग को मुक्त करने पर होती है। बुद्ध ने जो सिखाया उसका भाव अहिंसा है। अहिंसा मुक्ति है, क्योंकि प्रत्येक और हर पल में जैसे ही यह किसी के मन को आप्लावित करता है, मन अन्य प्राणियों के साथ दया, पहचान और सहानुभूति महसूस करता है। बुद्ध के लिए, अहिंसा एक नियम है जो स्वयं के मौलिक अर्थ को अनुभव करने हेतु यात्रा को सक्षम बनाता है। प्रारम्भ में छात्र अहिंसा के नियम का पालन करते हैं। अन्त में, वह जीवन के पोषित सार के रूप में अहिंसा को मूर्त रूप देते हैं।

जैन धर्म के चौबीसवें और अन्तिम तीर्थंकर (शाब्दिक अर्थ 'पायाब' या आध्यात्मिक अग्रदूत जो सांसारिक जीवन के सतत प्रवाह को पार करने हेतु नाव के समान है) वर्धमान महावीर ने आत्मबोध के आठ उपाय बताये। उनमें से तीन दृष्टिकोण से जुड़े हैं जबकि अन्य पाँच जीवन में आचरण के बारे में हैं। उचित ज्ञान, उचित दर्शन और उचित चरित्र महावीर के द्वारा बताये गये तीन उपयुक्त दृष्टिकोण हैं। उचित ज्ञान—सम्यक् ज्ञान—संसार और मानवता के बारे में उपयुक्त ज्ञान प्राप्त करने हेतु जीवन में किसी व्यक्ति को दिया गया एक कर्तव्य है। उचित दर्शन—सम्यक् दर्शन—स्वस्थ दृष्टिकोण और एक अर्थपूर्ण जीवन सुनिश्चित करने हेतु उपयुक्त दर्शन की जरूरत होती है। उचित चरित्र—सम्यक् चरित्र—किसी के चरित्र के बारे में देखभाल की माँग और यह नैतिक और हितकारी होता है। उचित चरित्र, सम्यक चरित्र को सुनिश्चित करने हेतु महावीर ने अपने अनुयायियों के लिए पाँच महान प्रतिज्ञाओं की हिदायत दी। यह हैं अहिंसा, सत्य; अस्तेय (चोरी नहीं करना), ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (जमा नहीं करना)।[101]

प्राचीन भारत में अहिंसा का व्यापक प्रचार वर्धमान महावीर के समय से लगभग तीन सदियों के बाद लिखित इतिहास की खूनी विजयों में से एक के परिणामस्वरूप समाप्त हो गया। महान मौर्य साम्राज्य भौगोलिक रूप से उपमहाद्वीप का सबसे बड़ा साम्राज्य था। 300 ईसा पूर्व में, आज के तमिलनाडु और केरल के हिस्सों और कलिंग के सामन्ती गणराज्य जो बंगाल की खाड़ी में अवस्थित थे और जो मौजूदा वक्त में ओडिशा और उत्तरी आन्ध्र प्रदेश हैं, को छोड़कर सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप में इनका बोलबाला था।

सम्राट अशोक के पूर्वजों को कलिंग की सम्पन्न धरती पर कब्जा करने की प्रबल इच्छा थी और एक भारी-भरकम सेना के साथ अशोक ने मौर्यों की दीर्घकालिक साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए लगभग 260 ईसा पूर्व में इस पर हमला कर दिया। इसके बाद युद्ध में काफी खून बहा और विशेष रूप से भयावह जनहानि हुई। माना जाता है कि उस समय युद्ध के औजार तलवार, भाले और तीर थे। इस युद्ध में मारे गये सैनिकों की संख्या जो सम्भवतया 250,000 कलिंग और मौर्य योद्धा थे, की बराबरी बीसवीं सदी के कई प्रमुख युद्धों से की जा सकती है।

कलिंग की सेना की संख्या बेहद कम थी लेकिन वह वीरतापूर्वक लड़ी। हालाँकि वे लोग इस रक्तरंजित मुकाबले में नेस्तनाबूद हो गये। किंवदन्ती है कि वीरों के खून से दाया नदी का पानी लाल हो गया था। इस विनाश और युद्ध से जीवन और सम्पत्ति पर टूटी तबाही को देखकर अशोक दुःख और पश्चाताप से भर गया और अपने सैन्य आक्रमण पर उसे पछतावा हुआ। वह अहिंसा की ओर मुड़ गया और चट्टानों और स्तम्भों पर सन्देश गोद कर अशोक ने अपने साम्राज्य के दूर-दराज के कोनों तक अहिंसा का सन्देश फैलाया।

यह परिवर्तन राजनैतिक रूप से बहुत ही होशियारी भरा कदम साबित हुआ। अहिंसा को अपनाकर अशोक ने अपने विशाल और विविधतापूर्ण साम्राज्य में किसी भी विद्रोह की सम्भावना को पहले ही रोक दिया। अधीन राजाओं, राजकुमारों, अभिजात वर्गों, नौकरशाहों, कमाण्डरों और अन्यों ने अहिंसा और अनाक्रमण की खूबी को आत्मसात किया। उनकी कथन शुचिता ने मौर्य साम्राज्य की विस्तृत सीमाओं पर पड़ोसी क्षेत्रों के साथ शान्ति स्थापित करने में भी सहायता की। अहिंसा ने उनकी अत्यधिक केन्द्रीकृत साम्राज्य की नींवों को मजबूत किया जिस

पर उन्होंने बाद में पहले की अपेक्षा अच्छी तरह से शासन किया। दो सहस्राब्दियों से अधिक के बाद, गाँधी जी के अहिंसा पर जोर ने प्रारम्भिक तौर पर उनके ब्रिटिश और भारतीय आलोचकों को प्रभावित नहीं किया। ब्रिटिश शासकों ने अहिंसा को एक छद्मावरण के रूप में देखा; और राजनैतिक विरोधियों ने भावुकतावाद के रूप में। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम को यूरोप के अशान्त इतिहास के चश्मे से देखने वाले अंग्रेजों के लिए गाँधीजी के आन्दोलनों का उल्लेखनीय शान्तिपूर्ण सार समझ से परे था। फ्रांसीसी और रूसी क्रान्ति या इतालवी और आइरिश राष्ट्रवादी आन्दोलनों से काफी हद तक परिचित कट्टरपंथी राजनीतिज्ञों को राजनीति की तुलना में नैतिकता हेतु अधिक प्रासंगिक कारणों के लिए अवसरों को खोना और सामरिक बढ़त का परित्याग करना कोरी मूर्खता लगा।

अंग्रेज धार्मिक शिक्षक होरेस अलेक्जेंडर गाँधीजी के अच्छे दोस्त थे। उन्होंने गाँधी जी को काम करते देखा था, और अपने प्रतिद्वन्द्वी के अहिंसक प्रतिरोध का सजीव वर्णन किया :

> आपके पक्ष में आपके साथ आधुनिक राज्य की सभी अहम शक्तियाँ हैं : हथियार, धन, एक नियन्त्रित प्रेस वगैरह। मेरे पक्ष में, मेरे पास केवल सही और सच का मेरा दृढ़विश्वास, एक व्यक्ति की अतृप्त आत्मा, जो आपकी निर्दयी ताकत के सामने झुकने की तुलना में अपने दृढ़विश्वास हेतु मरने को तैयार है। मेरे पास मेरे निःशस्त्र साथी हैं। यहाँ हम खड़े हैं; और यदि जरूरत पड़ी तो यहीं हम मर सकते हैं।[102]

कठिनाई और खतरे से डरकर भागने से अलग, अहिंसक प्रतिरोध के लिए अदम्य साहस की जरूरत होती है : विद्वेष के बिना अन्याय का विरोध करने, अत्यन्त विनम्रता के साथ अत्यन्त दृढ़ता को एकजुट करने, पीड़ा को आमन्त्रित करने न कि इसे थोपने, मरने नहीं कि मारने, के लिए साहस।[103]

गाँधी जी ने मानव जाति का 'अच्छे' और 'बुरे' में सहज विभाजन नहीं किया था। उन्हें दृढ़विश्वास था कि हर इंसान—यहाँ तक कि 'शत्रु' में भी शालीनता के बीज होते हैं : केवल बुरे कृत्य होते है, सम्पूर्ण व्यक्ति बुरा नहीं होता है।

सत्याग्रह का उनका काम करने का ढंग प्रतिद्वन्द्वी को विवश करने के लिए नहीं बल्कि गतिमान शक्तियों के अन्दर स्थापित करने के लिए बनाया गया था, जो उनके रूपान्तरण का नेतृत्व कर सके। अनुनय और समझौते के रूप में किये गये भरोसे या गाँधीजी की पद्धतियों से हमेशा तुरन्त परिणाम नहीं आते थे लेकिन

शान्तिपूर्ण ढंग से हासिल किये गये परिणामों के ज्यादा टिकाऊ होने की सम्भावना थी। गाँधीजी ने दृढ़तापूर्वक कहा 'यह मेरा दृढ़विश्वास है कि हिंसा से कुछ भी स्थायी नहीं बनाया जा सकता।' अहिंसक विधियों के माध्यम से सामाजिक बदलाव की दर हिंसक विधियों से पाये गये बदलाव की तुलना में काफी धीमी रही हो। लेकिन निश्चित तौर पर यह संस्थानों के सामान्य कामकाज से होने वाले बदलाव की तुलना में तेज थी। यह संस्थान रूढ़िवादी होने और यथास्थितिवाद की ओर प्रवृत्त हो गये थे।[104]

गाँधीजी ने रातों-रात समाज की संरचना में व्यापक बदलाव लाने के बारे में नहीं सोचा था। न ही वे इस भ्रम के शिकार हुए कि चीजों की नयी व्यवस्था हेतु मार्ग केवल पवित्र इच्छाओं और सुन्दर शब्दों से प्रशस्त किया जा सकता है। विपक्षी पर आरोप लगाना भी असन्तोषजनक है और उस वक्त को दोष देना भी, जिस दौर में कोई पैदा होता है तो कोरी मूर्खता है। बाधाओं के दुश्वार होने के बावजूद यह सत्याग्रहियों का कर्त्तव्य था कि वह कभी भी असहाय महसूस न करें। कम-से-कम जो वे कर सकते थे करें यही खुद के साथ शुरुआत के उनके उपदेश का मर्म था।

यदि उन्होंने किसानों के लिए नये समझौते हेतु जंग छेड़ी तो वह खुद गाँव गये और वहाँ रहे। यदि वे किसी अशान्त गाँव में शान्ति लाना चाहते तो वे इससे होकर गये और उन लोगों के दिलो-दिमाग में प्रवेश कर गये जिन्हें उस त्रासदी से होकर गुजरना पड़ा था। यदि छुआछूत जैसी सदियों पुरानी बुराई से लड़ना पड़ा तो एक सुधारक के लिए अछूत बच्चे को अपनाने से अधिक प्रभावी चुनौती का संकेत क्या हो सकता था? यदि लक्ष्य विदेशी कानून को चुनौती देना था तो क्यों न इस धारणा का प्रभाव डाला जाये कि देश पहले से ही आजाद था, विदेशी सरकार की उपेक्षा की जाये और लोगों की सहज, रचनात्मक और सहकारी प्रयास को काम में लाने हेतु वैकल्पिक संस्थान बनाये जायें? यदि लक्ष्य विश्व शान्ति था तो क्यों नहीं आज ही अपने ठीक बगल के पड़ोसी से शान्तिपूर्वक व्यवहार किया जाये, उन्हें समझने भर से उन पर जीत के लिए आधे से अधिक का रास्ता तो यूँ ही तय हो जाये?

भले ही किसी को वह चमकदार आँखों वाले आदर्शवादी दिखते हों, सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं के प्रति गाँधीजी का रवैया बेहद व्यावहारिक था। उनमें एक गहरी रहस्यमयी चमक थी फिर भी यहाँ तक कि उनका रहस्यवाद इसके बारे में लगभग अलौकिक लगा। उन्होंने कभी स्वर्ग के सपने नहीं

देखे या अवचेतन में चीजों को अकथनीय तरीके से नहीं देखा; जब 'स्थिर हल्की आवाज'[105] में वे कहते, प्राय: यह बताते कि कैसे वह दो परस्पर विरोधी समुदायों के बीच सामाजिक बुराई के खिलाफ लड़ सके या दरार को पाट सके। सार्वजनिक मामलों में उनकी भूमिका से उनका ध्यान भटकाने से अलग, गाँधीजी की धार्मिक खोज इसे अधिक प्रभावी तरीके से निभाने की शक्ति देती थी। उनके लिए, केवल शास्त्रों को पढ़ना, प्राचीन ग्रन्थों का विश्लेषण करना या यहाँ तक कि एकान्त सद्गुण होना ही सच्चा धर्म नहीं था—उनका धर्म राजनीतिक और सामाजिक जीवन के चुनौतीपूर्ण सन्दर्भ में सच्चे रास्ते पर चलने का संघर्ष था।

गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका और भारत में अपने हमवतनों के हित में अहिंसक विधियों का इस्तेमाल किया, लेकिन उन्होंने कभी भी भारतीय राष्ट्रवाद के शस्त्रागार में केवल एक हथियार के रूप में अहिंसक विरोध को नहीं अपनाया। इसके विपरीत, उन्होंने गलत चीजों को सही करने और विरोधी समूहों, प्रजातियों और राष्ट्रों के बीच संघर्षों को हल करने हेतु इसे तैयार किया। सन् 1924 की शुरुआत में, उन्होंने घोषणा की कि 'आज विश्व को जिस बेहतर दिमाग की जरूरत है, वह पूरी तरह स्वतन्त्र अवस्थाओं में नहीं है, लोग एकदूसरे के विरुद्ध लड़ रहे हैं, बल्कि अनुकूल अन्योन्याश्रित राज्यों के स्वतन्त्र संघ में निहित हैं'। उन्होंने विश्व की एक बड़े परिवार के रूप में कल्पना की।[106]

पादरी और अफ्रीकी मूल के अमेरिकी नागरिक अधिकार आन्दोलन के नेता मार्टिन लूथर किंग को अहिंसा के माध्यम से जातीय असमानता का मुकाबला करने हेतु 1964 में नोबल पुरस्कार मिला। उनकी मशहूर घोषणा है : 'ईसा मसीह ने भावना और प्रोत्साहन को प्रस्तुत किया जबकि गाँधी ने विधि को प्रस्तुत किया।' फरवरी 1968 में, अपनी हत्या से लगभग दो महीने पहले उन्होंने इसके बारे में बताया कि वह अपनी मृत्यु के बाद कैसे याद रहना चाहते हैं, किंग ने कहा :

> मैं चाहता हूँ कि कोई उस दिन का उल्लेख करे कि मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने दूसरों की सेवा की खातिर अपना जीवन न्यौछावर करने की कोशिश की। मैं चाहता हूँ कि कोई उस दिन के बारे में कहे कि मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने किसी को प्यार करने की कोशिश की। मैं सच्चाई के लिए बजनेवाला एक बड़ा ढोल भर था। और अन्य सभी उथली चीजों से बेमानी थीं। मेरे पीछे कोई धन बचा नहीं रहेगा। मेरे पास बढ़िया और

शानदार चीजें पीछे छोड़ने के लिए नहीं है। बल्कि मैं अपने पीछे केवल एक प्रतिबद्ध जीवन छोड़ना चाहता हूँ।[107]

यह अहिंसा का असली सार है। हर वो चीज़ जो आप करते हैं उनका अन्य लोगों पर, धरती पर और पशु-पक्षी जिनके साथ आप इस संसार में रहते हैं, उन पर प्रभाव पड़ता है। जीवन जीने के तरीके के रूप में अहिंसक तरीके से रहने में सही सम्बन्ध बनाना निहित होता है। यह सही चुनाव करने में निहित होता है ताकि आपके कार्य आपके नैतिक मूल्यों से मेल खायें। आज संसार में लगभग सभी प्रकार की समस्याएँ इस तथ्य से उपजी हैं कि लोग भूल गये हैं कि असल में वे कौन हैं। अहिंसा दिशा प्रदान करती है, ताकि आप याद रख सकें कि आप कौन हैं और पुनः जुड़ाव भरे तरीके से कार्य करें। यह जीवन का एक विजयी तरीका है। आप खुद के लिए एक बेहतर जीवन और प्रत्येक लोगों के लिए एक बेहतर विश्व का निर्माण करें। जागरूक और अपने मूल्यों से जुड़े होने से आप सचेत, सम्पूर्ण और अधिक शक्तिशाली बनते हैं। और जब लाखों सचेत, सशक्त लोग अहिंसा के माध्यम से एक-दूसरे से मिलेंगे हैं तो वह ऐसे आन्दोलनों का निर्माण करेंगे जिसे संसार ने कभी नहीं देखा है।

'वसुधैव कुटुम्बकम' एक संस्कृत वाक्यांश है जिसका मलतब है कि सम्पूर्ण संसार एक ही परिवार है। यही अवधारणा 300-100 ईसा पूर्व संगम काल में तमिल पुराणानुरु कविताओं में पायी जाती है, जिसका मतलब है 'हर देश मेरा अपना है और सभी लोग मेरे स्वजन हैं'। अहमदिया मुस्लिम समुदाय एक खुदा, एक धर्म और एक मानवता नामक तीन श्रेणियों के साथ एक्य (तौहीद) के मत को विस्तार से बताता है। बहाई धर्म के संस्थापक, बहाउल्लाह ने मक़सूद की अपनी तख्ती में लिखा, '... यह धरती एक देश है और इंसानियत इसके नागरिक'।

'उबंटू' शब्द, जो दक्षिण अफ्रीका में एक प्रमुख दर्शन का नाम है, इसका शाब्दिक अर्थ 'इंसानियत' होता है। इसे प्राय: 'दूसरों के प्रति मानवता' के रूप में व्याख्यायित किया जाता है और इसका मतलब होता है 'साझा करने के वैश्विक बन्धन में विश्वास जो सम्पूर्ण मानवता को जोड़ता है'।[108]

किसी जाति या पंथ की परवाह किये बिना दूसरों के प्रति मानवता प्रमुख स्वामीजी में भरपूर है। जब मैं प्रमुख स्वामीजी के साथ बैठा, मैंने महसूस किया कि उनकी आँखों के माध्यम से ब्रह्माण्ड खुद को अनुभव करता है और उनके कानों के

माध्यम से ब्रह्माण्ड अपने स्वरों को सुन रहा है। वास्तव में प्रमुख स्वामीजी साक्ष्य हैं जिनके माध्यम से ब्रह्माण्ड अपनी महिमा, अपनी भव्यता के प्रति संजग हो जाता है। जब मैं उनके साथ बैठा मुझे महसूस हुआ कि सभी चीजें जुड़ी हुई हैं। संक्षेप में, अहिंसा इस अन्त:सम्बन्ध का एक भाव है।

जैसे किसी पेड़ के पत्ते हवा के रुख के साथ ही परागण की क्रिया को प्रभावित करते हैं। ठीक उसी तरह स्वामीजी की आँखों में प्रकाश चमककर भक्तों के भीतर की वास्तविकता को उजागर करता है। सभी चीज़ सम्पूर्णता का एक भाग है और इस सम्पूर्णता में मैंने महसूस किया कि एक बेहतर संसार के निर्माण के लिए अहिंसा एक सक्रिय और शक्तिशाली तरीका है। यह इस बुनियादी समझ को शामिल करता है : हर चीज़ और हम एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। अहिंसा का मतलब होता है अपने जीवन को ईमानदारी से जीना, इन सम्बन्धों का समर्थन करना। जहाँ लड़ाई नहीं होती वहाँ हार नहीं होती; वहाँ केवल सभी के साथ मिलकर एक हो जाने की जीत होती है जो सत्य है।

29

क्षमा हमें अस्तित्व से परे बढ़ने को प्रेरित करती है

'अँधेरा, अँधेरे को नहीं हटा सकता; केवल प्रकाश ही अँधकार को दूर कर सकता है। नफरत, नफरत को नहीं हटा सकती; केवल प्रेम ही नफरत को खत्म कर सकता है।'

—मार्टिन लूथर किंग जूनियर
अफ्रीकी-अमेरिकी नागरिक अधिकारों के आन्दोलन के नेता

हम सभी जानते हैं कि हमारी ज़िन्दगी शान्त बहता दरिया नहीं हैं। जो भी दूसरों से जुड़ा हो, चाहे वह दोस्त हों, अनजान हों या परिजन हों, दुख पहुँचने का खतरा हमेशा बना रहता है और ऐसा कष्ट हमेशा मिलता है। हमारे माता-पिता ने हम पर सख्ती बरती होगी; स्कूल या यूनिवर्सिटी में हमारे शिक्षक खड़ूस रहे होंगे; हमारे सहयोगियों ने हमारे काम में समस्याएँ पैदा की होंगी। दुख होना जीवन का ही एक जरूरी हिस्सा है। दुखी होने पर सबसे आम प्रतिक्रिया है गुस्सा आना और उसके साथ ही हम हदें पार करने लगते हैं। हम उन्हें उसी प्रकार दुख देना चाहते हैं। हम चाहते हैं की उन्हें भी दुख हो। दुर्भाग्यवश, हममें से कई इस अँधेरी जगह से गुज़र चुके हैं। यह एक जेल की तरह है।

लोग, टीमें, संगठन, संस्थाएँ और समाज तभी आगे बढ़ सकते हैं जब हम अतीत के दर्द में न उलझे रहें। और उन कारणों में से एक जो बदलाव लाने वाले महानायकों को आम नेताओं से अलग करता है, वह है रोष, कड़वाहट और निन्दा को रचनात्मक और सुधारने वाली ऊर्जा में तब्दील करने की उनकी क्षमता।

जब महानायक क्षमा करते हैं, वह भड़के हुए गुस्से, कड़वाहट और द्वेष को दूर करते हैं, इस तरह वह काफी जमा ऊर्जा को बाहर निकालते हैं जिसे कई रचनात्मक तरीकों से इस्तेमाल किया जा सकता है।

क्षमा करना लोगों को खतरा उठाने का मौका देता है, रचनात्मक होने के मौके देता है और अपनी खुद की नेतृत्व क्षमता को सीखने और विकसित करने की सम्भावनाएँ निर्मित करता है। क्षमा करना बदलाव लाने वाले महानायकों के अनुयायियों में गर्व, सम्मान और भरोसा लाता है जिससे प्रतिबद्धता, आत्म बलिदान, प्रेरणा और प्रदर्शन का स्तर बढ़ता है। क्या कोई रोल मॉडल है? इसकी सबसे अच्छी मिसाल कौन हैं?

नेल्सन मण्डेला को मैं अपने युग की सबसे उल्लेखनीय हस्तियों में से एक मानता हूँ। मण्डेला का जन्म 18 जुलाई 1918 में दक्षिण अफ्रीका के पूर्वी तटीय इलाके के एक छोटे-से गाँव में हुआ था। उनके पिता को आदिवासी प्रमुख के पद से एक श्वेत मजिस्ट्रेट ने केवल इसलिए हटा दिया था क्योंकि उन्होंने उसके आदेश का पालन नहीं किया था। मण्डेला केवल नौ साल के थे और उनके पिता की मृत्यु हो गयी। फिर उन्हें खोसा के एक आदिवासी मुखिया के घर ले जाया गया जिन्होंने उन्हें कूटनीति और शाही तौर-तरीकों की सीख दी, जो अलग-अलग गुटों के लोगों को साथ लाने के लिए बहुत जरूरी थी। यह उनके लालन-पालन का बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा था, जिसने उनकी नेतृत्व शैली और शाही अन्दाज़ में अमिट छाप छोड़ी।

मण्डेला अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस (एएनसी) में एक छात्र नेता की हैसियत से शामिल हुए। शुरुआत में पार्टी समानता के लिए गाँधीवादी और अहिंसक संघर्ष में भरोसा रखती थी। लेकिन 1960 में शार्पविले में 69 प्रदर्शनकारियों के नरसंहार के बाद एएनसी ने फैसला लिया कि सशस्त्र संघर्ष ही सही समाधान है। 1963 में मण्डेला और उनके साथियों ने सेना और सरकार के संस्थानों को निशाना बनाया और उन्हें सशस्त्र बल में सक्रिय रहने की वजह से जेल भेजा गया। रिवोनिया मुकदमे के दौरान उन्हें लोकतन्त्र और दक्षिण अफ्रीका के नागरिकों के समान अधिकारों पर अपने विचार रखने के लिए पर्याप्त तवज्जो मिली थी। मण्डेला को तख्तापलट की साजिश रचने की एवज़ में आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई गई।

मण्डेला ने 27 साल जेल में काटे, शुरुआत में वह रोबेन आईलैंड जेल में थे, फिर पोल्समोर जेल में और आखिर में विक्टर वेर्स्टर जेल में रहे। रोबेन आईलैंड जेल में मण्डेला से मजदूरी करवायी गयी, उन्हें अन्य कैदियों के साथ कड़ी धूप में पत्थर तोड़ने पड़ते थे। लन्दन और दुनिया भर से समर्थकों ने उन्हें छुड़ाने के लिए और रंगभेद के खात्मे के लिए मार्च निकाले। 'फ्री नेल्सन मण्डेला' गाना एक पीढ़ी के लिए भजन हो गया। मण्डेला 1990 में जेल से छूटे।

जेल से छूटने के तुरन्त बाद उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के लोगों से अपील की कि 'जो हो गया उसे जाने दो' और हिंसा के बजाये शान्तिपूर्ण लोकतन्त्र की ओर बढ़ने के लिए कहा। इस विज़न और उदारता के साथ उन्होंने एक राजनेता की तरह अपने जीवन के दूसरे पड़ाव में प्रवेश किया। एक राजनेता के रूप में उन्हें अपनी चट्टान जैसी इच्छाशक्ति से ताकत मिली; लेकिन इसके साथ एक उदार मन और लोगों के लिए एक-दूसरे का सम्मान करना और सौहार्दपूर्वक रहना भी उनकी दिली इच्छा थी। उनके चरित्र के यह पहलू उनके भाषणों में साफ नज़र आते थे, जब 1964 में वह मृत्युदण्ड की सजा पाने के बहुत करीब थे। उन्होंने अदालत से कहा :

> मैंने अपना पूरा जीवन अफ्रीकी लोगों के इस संघर्ष के लिए समर्पित कर दिया। मैं गोरे लोगों के प्रभुत्व से लड़ा और अश्वेत लोगों के प्रभुत्व से भी लड़ चुका हूँ। मैने हमेशा एक ऐसे लोकतन्त्र और स्वतन्त्र समाज का सपना देखा है, जहाँ लोग सौहार्द्रपूर्वक साथ रहते हैं और सबको जहाँ समान अधिकार हैं। यह एक आदर्श है जिसे मैं जीना चाहता हूँ और पाना चाहता हूँ। लेकिन अगर जरूरत पड़ी तो यह एक ऐसा आदर्श है जिसके लिए मैं अपनी जान भी देने को तैयार हूँ।[109]

इसी घोषणा ने उन्हें अपने युग के दूसरे अश्वेत नेताओं से आगे खड़ा कर दिया और उन्हें रंगभेद के खिलाफ लड़ रहे नेताओं में एक अलग पहचान दी। अश्वेत दक्षिण अफ्रीकी उनकी विरासत का श्रेय उनको और उनके साथियों की मौत की सजा न देने को दे सकते हैं। फाँसी में लटकाने की बजाय उन्हें बेड़ियों में जकड़कर एक द्वीप की जेल में भेज दिया गया। आप सोचेंगे के 27 साल जेल में गुज़ारकर आया इंसान गुस्से, कड़वाहट और बदले की भावना से भरा होगा। लेकिन मण्डेला ने सुलह, क्षमा और सहिष्णुता का सन्देश दिया और उन्हें निरस्त्र कर दिया जो रंगभेद से स्वतन्त्रता और समानता के परिवर्तन को कमज़ोर करना चाहते थे।

मैं सितम्बर 2004 में दक्षिण अफ्रीका गया, और जब मैं वहाँ था मैं नेल्सन मण्डेला से मिला। जब मैंने उनके घर में प्रवेश किया तो मैंने उन्हें बहुत ही उत्साही पाया। मैं इस कमजोर लेकिन धाकड़ विद्वान को देखकर मैं चकित हो गया था : यह वही महान इंसान है जिसने दक्षिण अफ्रीका को रंगभेद के अत्याचार से आजादी दिलायी। जब मैं उनके घर से लौट रहा था तो वह मुझे दरवाजे तक छोड़ने आये। उन्होंने अपनी छड़ी छोड़ दी और मैं उनका सहारा बना। मैंने उनसे पूछा, 'डॉ. मण्डेला, जब 27 साल बाद आप जेल से निकले थे, तो आपको कैसा महसूस हुआ था?' उन्होंने कहा, 'जब मैं उस दरवाजे की तरफ बढ़ा जो मुझे आज़ादी देने वाला था, मुझे पता था कि अगर मैं अपनी कड़वाहट और घृणा को पीछे नहीं छोड़ जाऊँगा, तो मैं सारी उम्र बाहर रहकर भी इसी जेल में कैद रहूँगा।'

जब मैंने उनसे एक सन्देश के लिए कहा, तो वह बोले, 'मैं आपको क्या सन्देश दूँ, राष्ट्रपति जी? आप गाँधी जी के देश से आये हैं। वह दक्षिण अफ्रीका की स्वतन्त्रता के महान अग्रेताओं में से एक थे। जो सबसे पहली बात हमने उनसे सीखी वह थी अपने-आपसे ईमानदार होना। आप समाज पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकते, अगर आपने खुद को नहीं बदला है...सभी महान शान्तिदूत वह लोग हैं, जो सत्यनिष्ठ, ईमानदार और विनम्र हैं।'

नेल्सन मण्डेला के क्षमा के नेतृत्व के सिद्धान्त की उनके पड़ोसी देश जिम्बाब्वे से तुलना करना आँखें खोलने वाला है। सज्जनता, संयम और क्षमा की बजाय वहाँ आजादी के बाद कड़वाहट, बदले की भावना, क्रोध और घृणा को बढ़ावा दिया गया। बदले की भावना न केवल श्वेत शासक वर्ग के प्रति दर्शाई गयी, बल्कि मूल निवासियों के एक बड़े हिस्से के प्रति भी ऐसा ही किया गया, जिनमें वह अश्वेत देशवासी भी थे जिनके विचार सरकार के खिलाफ थे। जिम्बाब्वे आज एक बर्बाद अर्थव्यवस्था है, जहाँ की जनता दयनीय स्थिति में डर-डर कर अपना जीवन बिता रही है।

महात्मा गाँधी ने चेताया था कि 'कमज़ोर कभी भी माफ नहीं कर सकते, माफ करना सबलों का गुण है।' हमारे साथ जो हो चुका है हम उसे बदल नहीं सकते; बीते कल के लिए कोई डिलीट बटन नहीं है। जो भी पाप हमसे हो गये हैं, वह हमारे साथ हमेशा रहेंगे। इसलिए जरूरी सवाल यह है कि हम इन पापों से कैसे निपटते हैं, और हम किस तरह अपनी घृणा की भावना को खत्म करते हैं।

अधिकतर लोगों के लिए दुख की यादें एक स्थायी वीडियो रिकार्डिंग की तरह उनके जेहन में बसी रहती हैं, और जितनी बार यह रिकार्डिंग चलती है, उन्हें फिर से दुख महसूस होता है। कोई कैसे इसे रोक सकता है? कोई इस पीड़ा का अन्त कैसे करे? जवाब आत्म-प्रतिबिम्ब, खुद को समझने और आत्म अभिव्यक्ति में छुपा है। मैंने यह प्रमुख स्वामी जी से सीखा, जिन्होंने अक्षरधाम मन्दिर में हुए हमले के बाद अनुकरणीय शान्ति और क्षमा दिखायी। एक ओर जहाँ दुनिया ऐसे बड़े दयालुता के कामों से सीखती है, वहीं दूसरी ओर लोग प्रमुख स्वामी जी के छोटे अदृश्य कामों से प्रेरणा लेते हैं। वह सैकड़ों और हज़ारों लोग जो उनसे मिल चुके हैं अपराध स्वीकार करने या सीख लेने के लिए मिले हैं उन्होंने उनकी सारी व्यापक और बिला शर्त की क्षमा और स्वीकृति को महसूस किया है। उनका हृदय ऐसा है जहाँ पूरा संसार रह सकता है और क्षमा कर सकता है।

क्षमा करना पाँच चरणों की प्रक्रिया है। क्षमा की ओर की यात्रा का पहला कदम स्वयं को यह याद दिलाना है कि कैसे ईर्ष्या की भावना को जाग्रत रखने के लिए लगने वाली ऊर्जा हमारी जीवनी शक्ति को ही खत्म कर देगी। हमें इस बात से परिचित होना चाहिए कि बदले की भावना कैसे हमारे अन्दर के खाली स्थान को मलिन कर देगी, और हमें एक ऐसे इंसान में बदल देगी जो उस व्यक्ति जितना ही क्रूर होगा जिसने हमें दुख पहुँचाया। और हमें यह जानना होगा कि माफ करना एक ज्यादा अच्छा विकल्प है बजाये इसके कि हम पुराने जख्मों को कुरेदते रहें, जो हमारे लिए बोझ बन जाते हैं और हमारे जीवन से खुशियाँ छीन लेते हैं। सकारात्मक स्वभाव को खुद को समझ प्रोत्साहन देने की लिए और सामाजिक पारस्परिक भाव और सम्बन्ध बढ़ाने के लिए आत्म-प्रतिबिम्ब बहुत आवश्यक है।

तिरुवल्लुवर ने बड़ी सुन्दरता से लिखा है (कुरल 156) :

> जो अपना गुस्सा उतारते हैं, उन्हें एक दिन की खुशी मिलती है;
> जो सहते हैं, वो तब तक सराहे जायेंगे जब तक यह धरती है!

दूसरा, आत्म-प्रतिबिम्ब की प्रक्रिया से गुजरने के दौरान, यह समझना जरूरी है कि गलती हुई ही क्यों। और दिमागी तन्दरुस्ती के लिए हमें स्पष्टीकरण भी खोजना होगा। यहाँ पर असल में श्रेष्ठ होने की क्षमता की जरूरत होती है। यह समझने के लिए कि असल में हुआ क्या है, स्वयं को गलती करने वाले की जगह रखना जरूरी है। यह करने के दौरान हम शायद उस कारण से सहमत ना हों जिसकी

वजह से यह गलत काम हमारे खिलाफ हुआ है लेकिन, हम काफी हद तक यह समझ जायेंगे कि यह वाकया किस वजह से हुआ होगा।

तीसरी बात, दुख से जुड़ी हुई भावनाओं को जाहिर करना जरूरी होगा। इन भावनाओं को जाहिर किये बिना, उन्हें भूल जाना बड़ा मुश्किल है। यदि गलत काम से गुस्सा और दुख होता है तो इन भावनाओं को अन्दर से महसूस और जाहिर करने की जरूरत है। सामान्यत:, सबसे अच्छा विकल्प है कि हम अपनी भावनाएँ उनसे जाहिर करें, जिन्होंने हमें दुख पहुँचाया है, क्योंकि शायद उन्हें यह पता भी ना हो कि उन्होंने आपको दुख पहुँचाया है। आप जिस इंसान को माफ करना चाहते हैं उससे सम्बन्ध बनाये रखें, आपको यह बताने का जरिया ढूँढना होगा कि आप क्रोधित हैं और समाधान निकालने के लिए क्या किया जाना चाहिए। जो भी गलती हो, जो क्षमा करता है उसे अच्छी तरह से अभिव्यक्त करने की जरूरत है कि इससे उसे कैसा महसूस हुआ। केवल भूल जाने की कोशिश करना मददगार साबित नहीं होगा, क्योंकि सिर्फ भावनाओं को दरकिनार करना सच्ची क्षमा भावना नहीं लाता।

चौथा, सच्ची क्षमा के लिए, क्षमा करने वाले को यह समझ होनी चाहिए कि गलती प्रतिबन्धात्मक थी। कभी-कभी उस गलती करने वाले को माफ करना ज्यादा दुखदायी होगा, क्योंकि उसने भी गलत चीजें झेली हैं। और फिर भी बिना क्षमा भावना के कोई शान्ति नहीं है। इसलिए, क्षमा भावना बिना किसी शर्त के होनी चाहिए।

अन्त में, वह कदम जो क्षमा करने के चक्र को पूरा करता है वह है भूलना, और यह सबसे कठिन कदम हो सकता है। किसी ईर्ष्या की भावना को भूलने का वादा करना कभी आसान नहीं होता—भूल जाने का मतलब है कि उस बात के बारे में सोचना बन्द करना, खुद को उस अन्याय के बारे में सोचने से रोकना और यह सुनिश्चित करना कि उस गलती की बात भविष्य में नहीं की जायेगी। यह करने में सफल होने का मतलब भी अधिकार की स्थिति को छोड़ना होगा; जब क्षमा करने वाला प्रभावी भूमिका को छोड़ देगा, केवल तभी गलती करने वाला और वह खुद समान अवस्था में एक-दूसरे से जुड़ पायेंगे। कई लोगों के लिए इसी एक कदम का लेना माफ करने की प्रक्रिया को एक चुनौती बना देता है।

माफ करने के रास्ते पर चलना आसान नहीं है। कई लोग रास्ते में ही फँस जाते हैं क्योंकि उनके लिए नकारात्मक विचारों को और कड़वाहट को छोड़ना मुश्किल होता है।

लेकिन इन लोगों को यह याद दिलाना चाहिए कि उनके पास एक विकल्प है। वह या तो चीज़ों के बारे में पछताते रह सकते हैं या फिर वह यह नज़रिया लेकर चल सकते हैं कि जो हुआ वह किसी कारण से हुआ और वह इस अनुभव से सीख ले सकते हैं। ऐसी समझ उन्हें यह सिखा सकती है कि वह उस गलती को रोकने के लिए क्या अलग कर सकते थे। उन्हें यह भी समझना होगा कि जीवन केवल हमें दुख पहुँचाने वालों को क्षमा करना ही नहीं है। लेकिन यह भी समझना जरूरी है कि हम सभी इंसान हैं और गलती इंसानों से ही होती है। यह जानना जरूरी है कि क्षमा करना हमारे लिए एक तरह का उपहार है। केवल क्षमा करने से ही जख्म भरे जा सकते हैं। और जब हम घृणा को भूल जाते हैं, तो हम अपने जीवन को अपने दुख के इर्दगिर्द नहीं सँजोते। नवनिर्माण करते हैं।

सच यह है कि जब तक हम भूलते नही हैं—जब तक हम खुद को माफ नहीं करते, जब तक आप हालात को माफ नहीं करते, तब तक आप यह नहीं समझते कि बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि लेई—आप आगे नहीं बढ़ सकते।

30

ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ नाम करुणा है

'मानव जीवन का उद्देश्य सेवा करना, करुणा दिखलाना और दूसरों की मदद की इच्छा रखना है।'

—अल्बर्ट श्वाइट्ज़र

दार्शनिक और नोबेल शान्ति पुरस्कार विजेता

चौदहवें दलाई लामा, जिनका धार्मिक नाम तेनज़िंग ग्यात्सो है, भारत के धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश में रहते हैं। वह चीन गणराज्य से सत्ता से बेदखली के बाद से और उनके द्वारा सन् 1959 में निर्वासन में तिब्बत सरकार के गठन के बाद से वहीं रह रहे हैं। इन दरमियानी वर्षों में वह पूरी दुनिया में घूमे और वह तिब्बतियों के कल्याण की वकालत करते रहे, दुनिया भर में वह तिब्बती बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ पढ़ाते और करुणा के महत्व को सुखी जीवन का स्रोत बताते रहे। प्रमुख स्वामीजी और मैंने उनसे कई बार मुलाकात की, और हम दोनों को ही उनकी मानसिक शान्ति को दी गयी अहमियत बहुत भायी। दलाई लामा का यह कथन बहुत मशहूर है :

> खुला दिल सेहतमन्द लोगों, सेहतमन्द परिवार और सेहतमन्द समुदायों के लिए बहुत जरूरी है। वैज्ञानिक कहते हैं कि एक तन्दरुस्त दिमाग एक तन्दरुस्त शरीर के लिए बहुत आवश्यक है। अगर आप अपनी सेहत को लेकर संजीदा हैं, तो अपनी मानसिक शान्ति बारे में सोचिये और इसकी देखभाल कीजिये। यह बेहद महत्वपूर्ण है।[111]

6 अक्तूबर 1950 को, पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (पीएलए) ने जिन्शा नदी पार की और तिब्बती सेना को हरा दिया। लेकिन सैन्य अभियान को आगे बढ़ाने की बजाय, चीन ने तिब्बत से अपना एक प्रतिनिधि संघर्ष विराम पर बातचीत के लिए बीजिंग भेजने को कहा। तिब्बती प्रतिनिधिमण्डल के सदस्यों ने सन् 1951

में दबाव के तहत एक समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये, जिसने तिब्बत पर चीनी अधिकार को मान्यता दे दी। चीनी सरकार ने तिब्बती प्रतिनिधियों को ल्हासा में मौजूद दलाई लामा से बात करने की अनुमति नहीं दी। चीन ने तिब्बत पर सैनिक ताकत के दम पर कब्जा कर लिया और अपने सैनिक दलाई लामा के महल और अन्य मठों के चारों तरफ तैनात कर दिये।[112]

मार्च 1959 में, पीपुल्स लिबरेशन आर्मी की गोलाबारी ने ल्हासा के तीन बड़े मठों सेरा, गांदेन, और ड्रेपुंग को काफी क्षतिग्रस्त कर दिया। दलाई लामा के अंगरक्षकों को निरस्त्र कर सार्वजनिक रूप से फाँसी दे दी गयी। हज़ारों तिब्बती भिक्षुओं को या तो मार डाला गया या गिरफ़्तार कर लिया गया, शहर के आसपास के मन्दिरों और बौद्ध विहारों को या तो लूट लिया गया या नष्ट कर दिया गया। नैतिक खतरे में पड़े और चीनी सेना के कब्जे को चकमा देते हुए, दलाई लामा ने पन्द्रह दिनों की एक जोखिम भरी यात्रा की और हिमालय के रास्ते ल्हासा से भारतीय क्षेत्र में पहुँच गये। 18 अप्रैल 1959 को वह और उनके साथ के बीस लोग, जिनमें छह कैबिनेट मन्त्री भी थे, असम के तेजपुर पहुँचे।

कुछ महीनों की अवधि में, दलाई लामा ने धर्मशाला में तिब्बत की निर्वासित सरकार गठित की। उन्होंने करीब 80,000 तिब्बती शरणार्थियों को भी खेतिहर बस्तियों में पुनर्वासित किया, जो निर्वासन में उनके साथ आ गये थे। उन्होंने तिब्बती बच्चों को उनकी भाषा, इतिहास, धर्म और संस्कृति की शिक्षा देने के लिए तिब्बती शिक्षा व्यवस्था स्थापित की। सन् 1959 में मंचीय कलाओं का तिब्बती इंस्टीट्यूट स्थापित किया गया और सेण्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ हायर तिब्बतन स्टडीज भारत में तिब्बतियों के लिए सबसे अहम विश्वविद्यालय बन गया। दलाई लामा ने तिब्बती बौद्ध शिक्षण तथा तिब्बती जीवनशैली को संरक्षित रखने के लिए 200 से अधिक मठों और महिला मठों को मदद दी।[113]

आने वाले दशकों में, दलाई लामा भारत के अहिंसा और धार्मिक समरसता के सन्देश को फैलाने में काफी सक्रिय रहे और उन्होंने कहा, 'मैं भारत के प्राचीन विचारों को पूरी दुनिया को बताता हूँ।' उन्होंने कहा कि भारत में लोकतन्त्र की काफी गहरी जड़ें हैं और वह भारत को गुरु और तिब्बत को शिष्य मानते हैं, ठीक उसी तरह जैसे महान विद्वान नागार्जुन बौद्ध धर्म की शिक्षा देने के लिए आठवीं सदी में नालन्दा से तिब्बत गये थे। उन्होंने कहा कि हिंसा की वजह से लाखों लोगों को

जान गँवानी पड़ी है, और बीसवीं सदी में दुनिया के कई देशों की अर्थव्यवस्थाएँ संघर्षों की वजह से बर्बाद हो गयी हैं।

उन्होंने ऐलान किया, 'आइए, हम इक्कीसवीं सदी को सहिष्णुता और संवादों की सदी बनायें।'[114] लेकिन बिना करुणा के सहिष्णुता और संवाद इस सदी में भी प्रबल हो पायेंगे इसकी तो कल्पना भी नहीं की जा सकती। हिन्दुत्व के शास्त्रीय साहित्य में, करुणा को एक सदाचार बताया गया है जिसके कई रंग हैं। इसके हर रंग की अलग तरह से व्याख्या की जा सकती है। दया, करुणा, कृपा और अनुकम्पा इसके लिए चार सामान्य पद हैं। इनमें से कुछ को करुणा की संकल्पना, इसके स्रोत, इसके प्रभाव और प्रकृति की व्याख्या के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

करुणा का मतलब होता है किसी के मस्तिष्क को दूसरे के पक्ष में स्थापित करना, और इस तरह यह अपने दृष्टिकोण से दूसरे के दिमाग़ को समझने की कोशिश है। कृपा दया या समझिए कि दुश्वारी झेल रहे व्यक्ति के लिए दुख महसूस करना, नम्रता के साथ जुड़ा हुआ है। अनुकम्पा किसी की वह स्थिति है जिसमें वह दूसरे की पीड़ा और मुश्किलों को देखे और उसे समझे। दया, सभी सजीवों में करुणा का गुण है, और यह हिन्दू दर्शन का केन्द्रीय भाव है।

दया, दूसरों के विषाद और कठिनाइयों को कम करने की नेक इच्छा और इसके लिए की गयी हरमुमकिन कोशिशों का नाम है। यह एक ऐसा गुण है जो सभी जीवों को स्वयं की तरह मानता है। दूसरों का कल्याण और उनकी भलाई सर्वोपरि है। इस तरह की करुणा खुश होने का अपरिहार्य मार्ग है। दया किसी अजनबी, रिश्तेदार, दोस्त या दुश्मन के साथ खुद जैसा ही व्यवहार करना है। यह अस्तित्व की ऐसी स्थिति है जिसमें सभी जीव खुद के ही हिस्से प्रतीत होते हैं, और जब हर किसी का दुख अपना ही दुख प्रतीत होने लगता है। दया का विपर्यय अभिमान है, जिसमें हेकड़ी और दूसरों के लिए अवमानना का भाव भरा होता है। जैसे करुणा धार्मिक जीवन का स्रोत है, वैसे ही हेकड़ी पाप का मूल।

तिरुवल्लुवर ने स्पष्ट किया है कि हरेक को अपना जीवन करुणा के मार्ग पर चलाना चाहिए; हर जीवन को प्रेम की जरूरत होती है, और करुणा के बिना किया गया दान खाली और धारणातीत होता है। (कुरल 243)

ऐसे लोग, जिनके हृदय दया की तरफ खिंचते हैं वह कभी अँधकार और शोकमय दुनिया की तरफ नहीं खिंचेंगे। मुस्लिम परम्परा में, ईश्वर के सबसे महान

गुणों में दया और करुणा ही है, अरबी में जिसे रहमान और रहीम कहते हैं। क़ुरान के सभी अध्याय इसी आयत से शुरू होते हैं,

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

बिसमिल्लाह उर रहमानो रहीम

(दयालु और करुणामय अल्लाह के नाम पर शुरू करता हूँ)

मशहूर तिब्बती विद्वान थुप्तेन जिंपा, जो लम्बे समय से दलाई लामा के अंग्रेजी अनुवादक भी रहे हैं, 'एक ऐसी मानसिक स्थिति जो दूसरों की कष्टों की चिन्ता से भरा हो और उन कष्टों को खत्म होने की उम्मीद रखता हो' कहकर करुणा को पारिभाषित करते हैं। खासकर, वह करुणा में तीन तत्वों के समावेश का जिक्र करते हैं : एक संज्ञानात्मक घटक : 'मैं आपको समझता हूँ;' एक भावात्मक घटक : 'मेरे मन में आपके लिए भावनाएँ हैं;' और एक प्रेरक घटक : 'मैं आपकी मदद करना चाहता हूँ।'

काम के सन्दर्भ में करुणा का सबसे सम्मोहक लाभ है कि करुणा प्रभावशाली नेतृत्व पैदा करती है। अत्यन्त प्रभावशाली नेता बनने के लिए आपको महत्वपूर्ण कायान्तरण से गुजरना होता है। अच्छे नेता 'मैं' से 'हम' की ओर स्थानान्तरित होते हैं। करुणा का पथ सदैव स्व से अन्यों तक जाता है। एक तरीके से, करुणा भी 'मैं' से 'हम' की तरफ जाती है। इसलिए, अगर 'मैं' से 'हम' की तरफ जाना विश्वनीय नेता बनने की तरफ जाने की महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जो करुणा के पथ पर चलते हैं वह भी इससे अवश्य परिचित होंगे, और उनकी शुरुआत भी बढ़त के साथ होगी।[115]

प्रमुख स्वामीजी करुणा आधारित नेतृत्व की जिन्दा मिसाल हैं। वह एक ऐसे नेता हैं, जो न सिर्फ उच्च क्षमताओं से भरपूर हैं, बल्कि दो विरोधाभासी गुणों वाले भी हैं : उच्च प्रेरणा और व्यक्तिगत रूप से बेहद विनम्र। वह बेहद दृढ़निश्चयी हैं लेकिन अपनी इच्छाओं के केन्द्र वह स्वयं नहीं हैं, बल्कि उनका विज़न मानवता का कल्याण है। चूँकि, उनका पूरा ध्यान मानवता की सम्पूर्ण भलाई पर केन्द्रित है, तो उन्हें खुद की छवि की कोई चिन्ता नहीं है। यही बात, प्रमुख स्वामीजी को प्रेरक और प्रभावशाली बना देती है।

सन् 1985 में अक्षरब्राह्मण गुणातीतानन्द स्वामी के द्विशतवार्षिकी समारोह में हिस्सा लेते हुए परमपावन दलाई लामा ने अहमदाबाद में कुछ ऐसे भाव व्यक्त किये :

> आपका संस्थान भलाई और उल्लास का सन्देश देकर मानवता की बहुत बड़ी सेवा कर रहा है। निश्चित रूप से यह बहुत प्रशंसनीय है कि स्वामीनारायण आन्दोलन ने अपना काम सिर्फ अपने आन्दोलन तक ही सीमित नहीं रखा है, बल्कि इसने समाज में घर-घर जाकर समाज की बुराइयों के खिलाफ एक धर्मयुद्ध शुरू कर दिया है, ताकि शान्ति और समरसता को बढ़ाया जा सके। मैं इस तथ्य से बहुत प्रभावित हुआ हूँ कि इस आन्दोलन के कार्यकलापों से युवा बड़ी सक्रियता से जुड़े हुए हैं।

अगर हम करुणा के तीन घटकों (संज्ञानात्मक, भावात्मक और प्रेरक) के सन्दर्भ में प्रमुख स्वामीजी के दो अलग गुणों, महान प्रेरणा और व्यक्तिगत विनम्रता की तरफ देखें, तो हम पाते हैं कि करुणा के संज्ञानात्मक और भावात्मक घटक, जो लोगों को समझने और उनसे सहानुभूति रखने की ओर प्रवृत्त करता है, जो अत्यधिक आत्म-श्लाघा को कम करता है और इस तरह मानवता के लिए स्थितियाँ उत्पन्न करता है। करुणा का प्रेरणादायी घटक यानी लोगों की मदद करने की इच्छा, यही भलाई की महत्वाकांक्षाएँ पैदा करती है। दूसरे शब्दों में, करुणा के तीन घटकों का इस्तेमाल करुणा पर आधारित दो गुणों को उज्ज्वल बनाने में किया जा सकता है।

मैं इसरो और डीआरडीओ जैसे दो काफी बड़े संस्थानों में काम कर चुका हूँ, और फिर भारत के राष्ट्रपति के रूप में, मुझे विभिन्न स्तरों के नेताओं के साथ बातचीत के बहुत मौके मिले। इस दौरान नेतृत्व की प्रक्रिया को लेकर मुझे अन्तर्ज्ञान भी हासिल हुआ। मैं बड़े भरोसे के साथ कह सकता हूँ कि सर्वश्रेष्ठ दिनों में—जब हम नियन्त्रण, स्थिर और आशान्वित महसूस करते हैं—हममें से अधिकतर लोग प्रभावशाली नेता होते हैं जो जीवन्तता और उस रिश्ते को कायम रख सकते हैं जो हमारे काम के बेहतर होने के लिए जरूरी होता है। लेकिन प्रायः अच्छे दिन बितने के बाद यह सन्तुलन गायब हो जाता है। हमारे रिश्ते वैसे नहीं होते, जैसा हम चाहते हैं : हमारी देह थकान, बीमारी या लापरवाही का शिकार हो जाती है, और हमारे फ़ैसले असन्तुलित होने लगते हैं। ऐसा क्यों होता है और हम अपने ज्यादातर वक्त में सर्वश्रेष्ठ बने रहने के लिए क्या कर सकते हैं? नेतृत्व तनावपूर्ण

होता है और यह तनाव हमारे मस्तिष्क के दाहिने प्री-फ्रण्टल कॉर्टेक्स की विद्युतीय सक्रियता को बढ़ा देता है, जिससे ऐसे हॉर्मोन स्रावित होते हैं, जो लड़ो या भागो जैसी प्रतिक्रियाओं को जगा देते हैं। हमारा शरीर हाई अलर्ट पर चला जाता है और उसी के मुताबिक प्रतिक्रिया जाहिर करता है। आदर्श स्थितियों में, हमारे शरीर को आराम के लिए वक्त चाहिए होता है और यह इन तनावपूर्ण हॉर्मोन्स और शारीरिक प्रतिक्रियाओं का स्वांगीकरण करता है।

लेकिन आजकल के नेतृत्व के वातावरण में, तनाव हमेशा मौजूद होता है और हमें इससे कभी छुटकारा नहीं मिलता। इसी वजह से, नेतृत्वकर्ताओं को सजग रूप से खुद को समायोजित करना होता है और तनाव से मुक्त होना पड़ता है और साथ खुद को पुनर्नवीकृत भी करते रहना होता है।

यह पुनर्नवीकरण मस्तिष्क के विभिन्न लिम्बिक तन्त्रों में होता है और यह उन हिस्सों को बन्द करने के लिए सक्रिय होता है जो तनाव के दौरान काम करने लगे थे। जब मैं फादर जॉन को अन्ना विश्वविद्यालय में न्यूरोप्लास्टिसिटी पर उनके पी-एच.डी. के लिए गाइड कर रहा था, जो मानसिक रूप से विशेष सशक्त बच्चों के उनके रोज़मर्रा के कामों में बेहतर प्रदर्शन से जुड़ा था। उस दौरान मैंने जाना कि जब पारासिम्पैथेटिक नर्वस सिस्टम (पीएसएनएस) में सक्रियता बढ़ जाती है, तो सिम्पैथेटिक नर्वस सिस्टम (एसएनएस) में कार्यकलाप कम हो जाते हैं। पीएसएनएस कुछ हॉर्मोन्स को सक्रिय कर देता है जो रक्त के दवाब को कम कर देता है और प्रतिरोधी तन्त्र को मजबूत बना देता है। नेतृत्व की माँग और दबाव को देखते हुए, सिर्फ तनाव को सन्तुलित करके और पुनर्नवीकरण के जरिए ही नेतृत्व को जारी रखा जा सकता है। और यह पुनर्नवीकरण अपरिहार्य रूप से पीएसएनएस के कामकाज को सक्रिय करता है और उसे सहारा देता है।

सच्चा पुनर्नवीकरण तीन मुख्य चीजों पर निर्भर करता है जो नेतृत्व की कड़ी मेहनत के सामने शायद बहुत नर्म बातें प्रतीत हो सकती हैं, लेकिन यह असल में, एक नेता के लिए बहुत जरूरी हैं अगर वह अपनी जीवन्तता को बरकरार रखना चाहता है। इसका पहला तत्व है सजगता, यानी स्वयं को सम्पूर्णता के साथ जीना, अपने आत्म, दूसरे लोगों और उस सन्दर्भ को लेकर चेतन और सजग होना जिसमें हम रह रहे हैं और काम कर रहे हैं। परिणामस्वरूप, सजगता का मतलब होता है जगे रहना, खुद पर और आसपास की दुनिया पर गौर करना। दूसरा तत्व है आशा,

जो हमें यह भरोसा करने योग्य बनाती है कि भविष्य को लेकर हमारा विज़न प्राप्य है और हमें विश्वास दिलाता है कि हम अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ें और दूसरों को भी उनके सपने पूरा करने की प्रेरणा दें। हम जब पुनर्नवीकरण के तीसरे तत्व, करुणा का अनुभव करते हैं, तो हम यह समझते हैं कि लोगों को किस चीज़ की ज़रूरत है और हम उस दिशा में काम करने के लिए प्रेरित महसूस करते हैं।

सजगता की शुरुआत आत्म-बोध से होती है : खुद को जानना आपको लोगों और स्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया देने के लिए विकल्प हासिल करने लायक बनाता है। खुद के बारे में गहन ज्ञान आपको सुसंगत बनने में मदद करता है, ताकि आप खुद को विश्वसनीय तरीके से पेश कर सकें। इसी तरह मानसिक सजगता आपको खुद के बारे में, या आपके आसपास के बारे में बारीक से बारीक ब्योरों की तरफ गौर करने की काबिलियत देती है। प्रमुख स्वामीजी भी यही करते हैं—वह लोगों की खुद के प्रति आयी प्रतिक्रिया में छोटे लेकिन महत्वपूर्ण बदलावों को पकड़ लेते हैं। इन छोटे परिवर्तनों पर दिया गया ध्यान बारीक चीजों की दुरुस्त करने के लिए ठीक होता है और इससे उनके मिशन को आगे बढ़ने में मदद मिलती है।

मैं यहीं इस बात को रेखांकित करना चाहूँगा कि प्रमुख स्वामीजी किसी असफलता के डर से बदलाव की तरफ उन्मुख नहीं हुए; वह अपनी शक्ति से हुए हैं। एक नेता के तौर पर अपनी शक्ति संचित करना कब परिवर्तन करना है और उसे दुरुस्त करना है इसी पर निर्भर करता है। यही नहीं, प्रमुख स्वामीजी की बदलाव की प्रतिबद्धता की लौ को चिंगारी दिखाने वाली चीज़ है उनका अच्छा होना और दूसरों की भलाई के लिए काम करना। वह सिर्फ बीएपीएस या अपने भक्तों की ही भलाई या बढ़ोत्तरी के लिए ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया के लिए प्रार्थना करते हैं।

यह उनके नेतृत्व की आधारशिला है। हालाँकि वह प्रमुख हैं, लेकिन वह हृदय की तरह कार्य करते हैं। प्रमुख स्वामीजी ने प्यार और स्वतन्त्रता का एक ऐसा वातावरण तैयार किया है जहाँ हर कोई उनसे मिल सकता है और बात कर सकता है। वह सबकी सुनते हैं, समझते हैं और दूसरों को सोचने के लिए उत्साहित करते हैं। वह विचार पर अड़ते नहीं और नये विचारों का खुले दिल से स्वागत करते हैं। उसमें हैरत की बात नहीं कि उन्होंने युवा नेतृत्व, समर्पित टीम और संकल्पित स्वयंसेवकों की एक पीढ़ी तैयार की है। प्रमुख स्वामीजी नेताओं के भी नेता हैं, जो आध्यात्मिकता के मर्म को बदले बिना बदलाव का स्वागत करते हैं।

धारा पार करने के बाद नाव छोड़ देने के बारे में एक बहुत मशहूर बौद्ध कहावत है। नाव सिर्फ़ नदी को पार करने में ही उपयोगी है। राह में आगे जाने के लिए हमें नाव को पानी में ही छोड़कर आगे बढ़ना होगा। इस तरह, प्रमुख स्वामीजी एक लक्ष्य से दूसरे की तरफ बड़ी सरलता से आगे बढ़ते हैं और कभी-कभी जानबूझकर यह प्रतीती करवाते हैं कि वह अपने साथ लोगों को ले जा रहे हैं। उन्होंने कभी भी अपने उद्देश्य और अपने अनुयायी लोगों पर से अपनी दृष्टि नहीं हटायी है। अपने अन्तरतम और बाह्य वातावरण से ऐसा सम्पर्क सजगता को एक आदत बना लेने के आवश्यक है, और यह जीवन भर की एक प्रक्रिया है।

अन्य सकारात्मक भावनाओं और सजगता की तरह ही उम्मीद का हमारे मनो-मस्तिष्क और हॉर्मोन्स पर सकारात्मक असर पड़ता है। यह हमारे आसपास की घटनाओं पर हमारे नजरिए पर असर डालता है, ताकि हम चीज़ों को ज्यादा सकारात्मक तरीके से देखने लगें। ऐसा चिन्तन हमारे श्वास को कम कर देता है, रक्त के दवाब को भी कम करता है, प्रतिरोधी क्षमता को मजबूत बनाता है और पारासिम्पैथेटिक नर्वस सिस्टम को व्यस्त कर देता है। हम शान्त, खुश और आशान्वित महसूस करने लगते हैं। हम आगे की चुनौतियों के लिए तैयार हो जाते हैं। उम्मीद तो संक्रामक होती है : ऐसा नेता जो भविष्य में भरोसा करता है वह सहकर्मियों को भी प्रेरित करेगा, ऐसे में वह कठिन परिस्थितियों में भी एक ज़ीवन्त वातावरण बनाये रखते हैं। मुश्किल परिस्थितियों में खासकर यह बेहद महत्वपूर्ण है, जैसे आशावान लोग—शारीरिक और मानसिक रूप से—चुनौतियों से निबटने में अधिक योग्य होते हैं। प्रमुख स्वामीजी बेहद गहन आध्यात्मिक तरीके से उम्मीदों को प्रेरित करते हैं : न सिर्फ शब्दों, भावनाओं या कार्यकलापों से, बल्कि ईश्वर से सम्बन्धी सभी कार्यों में अन्तर्ज्ञान भी देते हैं। जो भी ईश्वर के हाथों से फिसलता है वह उनकी गोद में आता है। विचार यह है कि ईश्वर सदैव हमारे साथ है और कभी भी हमें छोड़ता नहीं है, और यह बात मुश्किलों के वक्त में हमारी उम्मीद कायम रखती है।

इसीलिए बीएपीएस कई देखी-अनदेखी चुनौतियों से पार पा सका है और अब भी नवीकृत और विकसित हो रहा है, और यह दूसरे धर्मार्थ संस्थानों को उम्मीद और निर्देश उपलब्ध कराता है। एक सकारात्मक, उम्मीद भरे नजरिए और

अपने 'स्व' और अन्यों की सुनना, यह शारीरिक और मनोवैज्ञानिक नवीकरण के दो तरीके हैं। नवीकरण का एक और तत्व है : करुणा।

तीसरे तत्व को आमतौर पर नेतृत्व का महत्वपूर्ण घटक नहीं माना जाता है। लेकिन वास्तव में, कारोबार से लेकर नेतृत्व तक इसका हर जगह पर महत्व है। करुणा एक बुनियादी मानवीय अनुभव है जो व्यक्तिगत नवीकरण और सांस्थानिक जीवन्तता को जाग्रत करता है।

नवीकरण की यह यात्रा हर किसी के लिए उपलब्ध है जो इसे करना चाहते हैं। लेकिन इस स्तर का व्यक्तिगत परिवर्तन आसान नहीं है। बहुत सारे लोग बिना सोचे-समझे नेतृत्व के सामने आने वाले दबाव पर प्रतिक्रिया दे देते हैं, और इसके तहत वह अधिक मेहनत से काम करते हैं और उसी काम को और ज्यादा करने लगते हैं। यह मिसाल कुछ ऐसी है कि केतली से पानी उबलकर बाहर निकलने के खतरे के वक्त तापमान और बढ़ा दिया जाये। असली समाधान नवीकरण में है, जो सजगता, उम्मीद और करुणा के हमारी निजी क्षमता में ही निहित है।

यही नहीं, नवीकरण की तरफ स्वयं के प्रति ईमानदार होना सबसे पहला, और सबसे कठिन कदम है। सजगता से, हम प्रतिबिम्बित होना सीखते हैं, इससे हम अपने अन्तरतम की मौन आवाजों को भी सुनते हैं और दूसरे तथा अपने वातावरण से हासिल होने वाले सूक्ष्म संकेतों को भी पकड़ पाते हैं, जो हमें सही दिशा में ले जा सकता है। उम्मीद के जरिए, हम स्वयं को पुनर्जीवित करते हैं और दूसरो को प्रेरणा देते हैं। करुणा के जरिए, हम शारीरिक और मनोवैज्ञानिक नवीकरण की लौ जलाते हैं, और इससे हम मज़बूत, भरोसेमन्द और अर्थपूर्ण रिश्ते बनाते हैं। सचेतन रूप से खुद और हमारे चारों ओर के लोगों को सुनकर—इनमें वह समुदाय भी शामिल हैं जहाँ हम काम करते और रहते हैं—वह भी हमें, हमारे रिश्तों को और संस्थानों को महत्वपूर्ण लाभ दे सकता है।

प्रमुख स्वामीजी ने एक बार मुझसे कहा था, 'मेरे पास सिखाने के लिए महज तीन चीजें हैं : सरलता, धैर्य और करुणा। यह तीन गुण दुनिया के सबसे बड़े ख़ज़ाने हैं।' मैं सोच रहा हूँ, इससे अधिक किसी और को भला चाहिए भी क्या ?

31

विज़न और मेहनत से बदलेगी दुनिया

'आपकी दृष्टि तभी साफ होगी जब आप अपने दिल की बात सुनेंगे। जो व्यक्ति प्रेरणा के लिए बाहर की ओर देखता है, वह सपना देखता है और जो अन्दर की तरफ देखता है वह जागृति की अवस्था को प्राप्त होता है।'

—कार्ल जंग
मनोचिकित्सक और लेखक

सन् 1962 में मेरा चयन इण्डियन कमेटी फॉर स्पेस रिसर्च में रॉकेट इंजीनियर की नौकरी के लिए हुआ। इस संस्थान (संक्षिप्त में : इंकोस्पार) का गठन टाटा इंस्टिट्यूट ऑफ फण्डामेंटल रिसर्च (टीआईएफआर) बम्बई (अब मुम्बई) की प्रतिभाओं से हुआ था ताकि भारत में अन्तरिक्ष अनुसन्धान को संगठित रूप दिया जा सके। डॉ. विक्रम साराभाई के नेतृत्व में एक बोर्ड ने मेरा साक्षात्कार लिया। जैसे ही मैंने साक्षात्कार कक्ष में प्रवेश किया, मुझे डॉ. साराभाई की तरफ से एक सकारात्मक ऊर्जा आती हुई प्रतीत हुई। उनके व्यक्तित्व के चारों तरफ एक कोमल-सी आभा पसरी हुई थी। उस समय तक वह एक महान हस्ती बन चुके थे लेकिन मैं उन्हें पहली बार देख रहा था। डॉ. साराभाई के सवालों ने मेरे मौजूदा ज्ञान या कौशल का परीक्षण नहीं किया। बल्कि वह मुझमें कुछ सम्भावनाओं को तलाश रहे थे। वह मुझमें एक बड़ी तस्वीर के सन्दर्भ में मानो कुछ खोज रहे थे। उनके साथ मेरा पूरा साक्षात्कार ऐसा लगा मानो सत्य का कोई सम्पूर्ण क्षण हो जिसमें मेरा स्वप्न एक बड़े स्वप्न के भीतर समा गया।

मैंने किसी अखबार में अफ्रीकी-अमेरिकी धावक विल्मा रुडॉल्फ का कोई उद्धरण पढ़ा था। उन्होंने 1960 में हुए रोम ओलम्पिक में एथलेटिक्स में तीन स्वर्ण पदक जीते थे और उस समय दुनिया में सबसे तेज गति से दौड़ने वाली महिला के रूप में प्रख्यात हुई थीं। उनके एक वक्तव्य ने मुझ पर गहरा प्रभाव डाला : 'स्वप्न की क्षमता और मानव की इच्छाशक्ति को कभी कम करके मत आँको। हम सब एक समान ही होते हैं, महानता की सम्भावना हम सबमें बराबर होती है।' मैंने महान स्वप्नदर्शी डॉ. विक्रम साराभाई के साहसपूर्ण स्वप्न का अनुसरण करने का फैसला किया, जो उन्होंने अन्तरिक्ष अनुसन्धान के क्षेत्र में देखा था। समय के साथ इण्डियन स्पेस रिसर्च ऑर्गेनाइजेशन (इसरो) में तब्दील होता गया। डॉ. विक्रम साराभाई ने भारतीय अन्तरिक्ष कार्यक्रम की शुरुआत की और मुझे भारत के पहले अन्तरिक्ष उपग्रह के लाँच यान का प्रोजेक्ट डायरेक्टर नियुक्त किया गया जिसे बाद में रोहिणी नामक उपग्रह को अन्तरिक्ष की कक्षा में भेजना था।

डॉ. साराभाई का जन्म 12 अगस्त 1919 को अहमदाबाद में हुआ था। उनका परिवार एक प्रभावशाली और धनी जैन व्यापारी का परिवार था। उनके पिता अम्बालाल साराभाई एक समृद्ध उद्योगपति थे जिनकी गुजरात में कपड़े की कई मिलें थीं। बचपन में साराभाई ने अपने जमाने की कई बड़ी हस्तियों जैसे गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, जिद्दू कृष्णमूर्ति, जवाहरलाल नेहरू और मौलाना अबुल कलाम को देखा था जो उनके घर आया करते थे। लेकिन इससे वे अपनी पढ़ाई से कभी विचलित नहीं हुए और हमेशा अव्वल आते रहे। सन् 1947 में कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी से भौतिकीशास्त्र में डॉक्टरेट हासिल करने से पहले विक्रम साराभाई ने नोबेल विजेता सी.वी. रमण के अधीन बंगलोर (अब बेंगलुरू) में काम किया था। जहाँ विक्रम साराभाई खुद ही असीम ऊर्जा के स्रोत और विविधता से भरे व्यक्तित्व के स्वामी थे, वहीं उनकी निगाह बेहतरीन प्रतिभाओं की खोज में लगी रहती थी और वे उन्हें अपने स्वप्न को पूरा करने के लिए प्रोत्साहित और तैयार भी करते रहते थे।

विक्रम साराभाई की दुनिया भर में प्रतिष्ठा थी। जहाँ उन्होंने सेटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टेलिविजन एक्सपेरिमेंट में नासा का सहयोग हासिल किया तो दूसरी तरफ सन् 1975 में एक रूसी अन्तरिक्ष प्रक्षेपण स्थल से भारत के पहले अन्तरिक्ष उपग्रह आर्यभट्ट को कक्षा में स्थापित करने में सफलता भी हासिल की।

इसरो का जन्म या उसका विकास विक्रम साराभाई की ही विराट दृष्टि का सुफल था। 4 अक्टूबर 1957 को रूसी अन्तरिक्ष उपग्रह स्पुतनिक के सफल प्रक्षेपण और कक्षा में उसके स्थापन के बाद उन्होंने कामयाबीपूर्वक सरकार को इस बात के लिए राजी किया कि भारत में एक अन्तरिक्ष कार्यक्रम की शुरुआत की जाये। डॉ. साराभाई ने अन्तरिक्ष कार्यक्रम की महत्ता को इन उत्साहित और आशावान शब्दों में व्यक्त किया :

> 'कुछ लोग एक विकासशील देश द्वारा अन्तरिक्ष कार्यक्रम की शुरुआत किये जाने की प्रासंगिकता पर सवाल उठाते हैं। लेकिन हमारा उद्देश्य साफ है। हम आर्थिक रूप से विकसित देशों के साथ होड़ लगाने का ख्वाब नहीं देखते कि हम चाँद या अन्य ग्रह तक पहुँच जायेंगे या अन्तरिक्ष में मानव यान भेज देंगे। लेकिन हमें विश्वास है कि अगर हमें एक राष्ट्र के रूप में दुनिया के मंच पर सार्थक भूमिका निभानी है और दुनिया के देशों के बीच में सम्मानपूर्वक सिर ऊँचा कर रहना है तो हमें तकनीक के क्षेत्र में किसी से पीछे नहीं रहना चाहिए जो मनुष्य और समाज की वास्तविक चुनौतियों को हल करने में उपयोगी हो सकता है।'[117]

विक्रम साराभाई सही मायने में एक भविष्यद्रष्टा थे और समय से आगे के व्यक्ति थे। शायद वह पहले भारतीय थे, जिन्होंने तीव्र तकनीकी विकास की बदौलत बदलती इस तेज रफ्तार दुनिया में यह भाँप लिया था कि मनुष्य की जरूरतों में सन्तुलन और महत्वपूर्ण संस्थाओं की महत्ता देश के लिए कितनी ज़रूरी है। जिस तरह से उस समय भारत की उच्च शिक्षा व्यवस्था काम कर रही थी और हमारे विश्वविद्यालयों की जो स्थिति थी, उसमें भविष्य के उद्यमी-नेताओं के प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं थी। सैद्धान्तिक रूप से सही होना ठीक था, लेकिन किसी सिद्धान्त की असली प्रासंगिकता तब तक नहीं थी जब तक कि उसे व्यापार और उद्यम के वृहत स्वरूप में इस्तेमाल न किया जाये। इसी को ध्यान में रखते हुए विक्रम साराभाई ने अहमदाबाद में इण्डियन इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट (भारतीय प्रबन्धन संस्थान) की स्थापना की और 1961 से लेकर 1964 तक इसके पहले निदेशक रहे। उन्होंने अपने उत्तराधिकारी के रूप में रवि मथाई को नियुक्त किया जो उस समय सिर्फ 38 साल के थे और ऑक्सफोर्ड से बीए थे। उसके बाद तो आईआईएम के गौरवपूर्ण इतिहास की कहानी दन्त-कथा सरीखी लगती है।

सवाल यह है कि विक्रम साराभाई की विरासत आज ज्यादा महत्वपूर्ण क्यों है? क्योंकि आधुनिक विश्व को उन जैसे भविष्यदृष्टाओं की जरूरत है। वैश्वीकृत

और इंटरनेट से जुड़ी दुनिया एक-दूसरे देशों के बीच ज्यादा-से-ज्यादा निर्भरता महसूस कर रही है। लोगों और व्यापार का भविष्य ज्यादा-से-ज्यादा जुड़ता चला गया है। इसलिए यह अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक विकास की प्रवृत्ति बन गयी है कि शान्ति स्थापित की जाये, सहयोग तलाशा जाये और विकास को बढ़ावा दिया जाये।

प्रमुख स्वामी जी ने मेरे साथ कई बार विश्व में शान्ति, विकास, सुरक्षा और समृद्धि की बातों को साझा किया था। उनका मानना है कि भारत के लोगों की दयालुता, खुलापन, अन्य देशों के लोगों के प्रति सहनशीलता और संवाद की इच्छा हमारी सभ्यता की विरासत है। उससे भी ज्यादा उनका इस बात में दृढ़ यकीन है कि भारतीय लोगों में एक सहयोगकारी दुनिया के निर्माण करने की अतिशय क्षमता है—जहाँ एक स्थायी शान्ति और साझा समृद्धि होगी जिसमें सबके हितों और सहयोग का ख्याल रखा जायेगा और जो सभी देशों के लिए एक परस्पर लाभकारी स्थिति होगी।

यह बीएपीएस के लिए महत्वपूर्ण है जिसने भारतीय सभ्यता की मूल भावना को दुनिया भर में प्रचारित करने की एक महती जिम्मेदारी सँभाली है और जो शान्ति और समृद्धि की भावना को बढ़ावा दे रहा है और पूरे समग्र हृदय से भारतीयों की उस भावना को बढ़ावा देता है जो वैश्विक कल्याण की कामना से ओतप्रोत है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः।
सर्वे भद्रणिपश्यन्तु मा कश्चिद्दुःख भाग भवेत्॥
सब सुखी हों, सब स्वस्थ हों,
सब सुरक्षित हों, कोई दुखी न रहे।

शान्तिपूर्ण विकास का विचार भारत की सतरंगी सांस्कृतिक परम्परा में निहित है। भारतीयों ने स्वेच्छा से इस ऐतिहासिक स्वभाव का परिचय दिया है कि वे किसी पर कभी आक्रमण नहीं करेंगे और शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व और सामुदायिक विकास की भावना को आगे बढ़ाते रहेंगे। भारत के लोग पहले से ही शान्तिपूर्ण विकास की महत्ता को समझते थे, इसीलिए वे शान्तिप्रिय हैं और विकास के लिए सदैव इच्छुक रहते हैं। पिछली शताब्दी में दुनिया में पिछले दो विश्वयुद्धों ने मानवता पर भयानक विभीषिका थोपी है और लोगों को अतिशय तकलीफ में झोंकने का काम किया है। उस तकलीफ को झेलनेवाले भारतीय भी थे। हम पर

जब भी कभी विदेशी ने हमला किया, हमने अपनी सुरक्षा की कोशिश की। लेकिन हमने कभी हमलावर रुख अख्तियार नहीं किया, क्योंकि इस बात से हम भलीभाँति परिचित थे कि सिर्फ शान्ति ही विकास का अग्रदूत बन सकती है और सिर्फ विकास ही शान्ति के लिए बेहतर सुनिश्चितता प्रदान कर सकता है। भारतीय समाज और हमारे समाज से अलग हुए समाज के बीच का फर्क इस बात को भलीभाँति दर्शाता है कि भारतीय राष्ट्र की गौरवपूर्ण पारम्परिक संस्कृति की शान्तिपूर्ण आत्मा कैसी है।

हजारों सालों से भारतीय संस्कृति और दर्शन में अहिंसा का एक महत्वपूर्ण और मूल स्थान रहा है। शान्ति के लिए प्रेम और शान्ति की खोज हमेशा से भारतीय संस्कृति की मूल चेतना रही है। मानवता के इतिहास में भारत के लोग ऐसे पहले लोग हैं जिन्होंने समन्वय की बात कही और शायद सबसे ज्यादा इसकी अभिव्यक्ति भी भारत में ही हुई और यह दुनिया के किसी भी देश की तुलना में सबसे ज्यादा मुखर भी यहीं रही। भारत में आज से करीब 2500 साल पहले पतंजलि ने इस अहिंसा के विचार को प्रस्तुत किया था :

अहिंसा प्रतिष्ठायं तत्सन्निधौः वैरत्याघ

अहिंसा से शत्रुता की भावना नष्ट होती है। (योग सूत्र 2.35)

इस धारणा ने भारत के महान शासकों और विचारकों के मन में एक उद्दात चेतना का सृजन करने में अहम भूमिका निभाई। उन्होंने अधिकांश समय अहिंसा की भावना को प्रश्रय दिया, शान्ति को महत्व दिया और अपनी राज्य-सीमा के बाहर भी अपने समकक्षों के साथ एक सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध बनाने का प्रयास किया। और यह सांस्कृतिक विरासत—जो हमारे प्राचीन ऋषियों की देन है—आज भी उतनी ही बल्कि उससे भी ज्यादा प्रासंगिक है जब दुनिया ज्यादा-से-ज्यादा वैश्वीकृत और एक-दूसरे के साथ संघर्षरत होती गयी है। हाल ही में मैंने कुछ प्रबुद्ध बीएपीएस योगियों से पूछा : अगले सौ सालों के लिए ऐसा कौन-सा स्वप्न है जो भारत पूरी दुनिया के लिए देख सकता है? हमारे संवाद के बाद एक विचार सामने आया। वह विचार यह था कि भारत पूरी दुनिया को अहिंसा का रास्ता बता सकता है—खासकर उस परिप्रेक्ष्य में जब जलवायु परिवर्तन की वजह से मानवता के सामने एक बड़ी समस्या प्रस्तुत हो गयी है।

भारत और पूरे विश्व के लोगों के व्यापक हितों को देखते हुए हमारा देश वैश्विक जलवायु परिवर्तन की जो समस्या है उसके निदान में सार्थक और प्रभावशाली योगदान दे सकता है। हमें पर्यावरण के हिसाब से अनुकूल औद्योगिक बुनियादी ढाँचे को बढ़ावा देना चाहिए और अनुपयुक्त, प्रदूषणकारी और कचड़ों का उत्पादन करने वाले कारखानों को बन्द कर देना चाहिए। इससे तत्काल यह फायदा होगा कि संसाधनों का अपव्यय कम हो जायेगा। साथ-ही-साथ जीवन के अहम क्षेत्रों में—उद्योग, सरकारी परियोजनाएँ और अन्य उद्यमों में हमें ऊर्जा संरक्षण पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इससे हम प्रभावी ढंग से ऊर्जा का सदुपयोग कर पायेंगे। सबसे अहम बात यह है कि दुनिया को तेजी से नवीकृत ऊर्जा के साधनों जैसे सौर ऊर्जा पर निर्भर होने का प्रयास करना चाहिए। हमें धरती और आसमान दोनों जगहों पर सौर ऊर्जा उत्पादन के बारे में सोचना चाहिए।

इसके अलावा हमें सक्रिय होकर एक पुन:चक्रण पर आधारित अर्थव्यवस्था की तरफ बढ़ने का प्रयास करना चाहिए और ऊर्जा संरक्षण और पर्यावरण के अनुकूल उद्यमों की तरफ बढ़ने की कोशिश करनी चाहिए। इसका बेहतरीन नतीजा हासिल करने के लिए हमें ऊर्जा संरक्षण और सक्षमता हासिल करने के लिए कई प्रयास करने होंगे। हमें जल प्रदूषण को दूर करने के लिए लक्षित और निरन्तर उपाय करने की जरूरत है और अपनी महान नदियों को साफ करने की जरूरत है। इसके लिए हमें कचड़ा और अपशिष्ट निष्पादन इकाईयों के निर्माण में तेजी लानी होगी।

वायु प्रदूषण, जो जल प्रदूषण से अलग नहीं है, को बड़े स्तर पर हीट इंजन इकाइयों में डिसल्फराइजेशन और पुनर्निर्माण परियोजनाओं को शामिल कर लागू किया जा सकता है।

नि:सन्देह भारत एक विकासशील देश है और इसकी जनसंख्या करीब 1.25 अरब तक पहुँच गयी है। ऐसे में कुछ समय तक समाजिक समता अपने शैशवावस्था में रहेगी। इसीलिए विकास के दौरान जो चुनौतियाँ और विरोधाभास इसे झेलने होंगे। वे विशालता और जटिलता दोनों में व्यापक होंगे। और अगर भारत को एक ज़रूरी आवश्यकता के रूप में विकास के पथ को अपनाना है तो इसे निश्चयपूर्वक टिकाऊ विकास के पथ पर आगे बढ़ना होगा। उस टिकाऊ विकास में उसे अपने प्राचीन आध्यात्मिक मूल्यों के साथ आगे बढ़ना होगा जो यहाँ हजारों सालों से मौजूद रहा है।

उस विकास को हासिल करने के लिए, जिसे हम व्यापक रूप से समावेशी कहते हैं, हमें वैज्ञानिक सोच को अपनाने पर बल देना होगा, परियोजनाओं को शान्तिपूर्ण तरीके से क्रियान्वित करना होगा और समतामूलक विकास करना होगा। साथ ही हमें अपने आर्थिक ढाँचे को प्राथमिकता के साथ रणनीतिक तौर पर संयोजित करना होगा। उस प्रक्रिया में तकनीकी विकास और आविष्कार को अपने प्रयासों के लिए अनिवार्य बनाना होगा। हमें एक आखरी लक्ष्य के तौर पर शुरू में ही लोगों की आजीविका में सुधार को सुनिश्चित करना होगा। उसके लिए हमें संसाधनों के संरक्षण पर जोर देना होगा और एक पर्यावरण अनुकूल समाज के रूप में सामने आना होगा। हमें सुधारों के साथ विकास को गति देनी होगी और अपने देश को दुनिया के सामने खोलना होगा। ऐसा करके ही हम भारतीय अर्थव्यवस्था का सम्पूर्ण, समावेशी और टिकाऊ विकास कर पायेंगे। इससे विश्व अर्थव्यवस्था के विकास के लिए भी व्यापक राह प्रशस्त हो पायेगी।

दुनिया में मौजूदा वित्तीय संकट ज्यों-ज्यों स्पष्ट हो रहा है, वह अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था की विसंगतियों को दर्शाता है। इस प्रकरण के अनगिनत उदाहरणों ने मौजूदा वैश्विक आर्थिक विकास के मॉडल और उसके टिकाऊपन को उजागर कर दिया है।

दुनिया को अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था में सिर्फ ढाँचागत विरोधाभासों का ही सामना करने की जरूरत नहीं है जो तीव्र आर्थिक वैश्वीकरण के दरम्यान पैदा हो गया है, इसे अब सिर से ऊपर जा चुकी कुछ वैश्विक समस्याओं से भी खतरा है। उन खतरों में जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा, ऊर्जा और संसाधनों की सुरक्षा, सार्वजनिक स्वच्छता सुरक्षा और प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती घटनाओं के प्रति सुरक्षा भी शामिल है। इनमें से सभी ने गम्भीरतापूर्वक आर्थिक और समाजिक विकास को प्रभावित किया है और सबसे ज्यादा लोगों की जिन्दगी को प्रभावित किया है। ऐसा दुनिया के सभी देशों में हुआ है और दुनिया के दीर्घकालीन विकास की राह में बहुत बड़ी बाधा है।

वैश्विक चुनौतियों का सामना करने के लिए लयबद्ध वैश्विक समाधानों की आवश्यकता होती है। वर्तमान में वैश्विक सन्दर्भ में हमें असन्तुलित विकास की समस्या को दूर करने के लिए दबाव डालने की आवश्यकता है और दुनिया के देशों को जो विकास के विभिन्न चरण में हैं उन्हें अपनी घरेलू परिस्थितियों के हिसाब

से अलग-अलग रास्ता चुनने की आजादी देने की जरूरत है। किसी भी देश को उसके विकास पथ पर हड़बड़ी में आगे बढ़ने की आवश्यकता नहीं है। इस दिशा में सहयोग और संगठित प्रयास होना चाहिए कि खाद्यान्न की सुरक्षा हासिल की जाये। हमें ऊर्जा की कीमतों को स्थिर करना चाहिए, ऊर्जा आपूर्ति के ढाँचे को मजबूत करना चाहिए, ऊर्जा तकनीक के हस्तान्तरण की अपील करनी चाहिए और ऊर्जा की गरीबी को कम करना चाहिए। साथ ही हमें आपदाओं को रोकने और राहत कार्यों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग को बढ़ावा देना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संकट के आने के साथ ही दुनिया भर के देशों में फिर से ढेरों तरीके से संरक्षण-वाद की नीति अपनाये जाने की शुरुआत हो चुकी है। यह प्रवृत्ति हर देश के लिए जो उस समस्या के नतीजों से बचना चाहता है, न केवल निरर्थक है, बल्कि यह कमजोर वैश्विक अर्थव्यवस्था के पुनर्जीवित होने की राह में भी एक बाधा है। भारत ने व्यापार और निवेश में दृढ़तापूर्वक स्वतन्त्रता, व्यवहारिकता और सुविधा का समर्थन किया है और यह किसी भी तरह के संरक्षणवाद का विरोधी है। भारत, बाहरी दुनिया के लिए कभी भी अपना दरवाजा बन्द नहीं करेगा, इसकी एक ही प्रवृत्ति है कि ज्यादा-से-ज्यादा बाहरी दुनिया के सामने वह अपनी अर्थव्यवस्था को खोले।

व्यापार किसी भी देश के लिए अहम है और व्यापार का विकास भारत की तरक्की को पंख लगा सकता है। यहाँ हमें इस बात को हमेशा ध्यान में रखने की जरूरत है कि विकास, भारत का पहला लक्ष्य है और यह देश की कई मौजूदा समस्याओं को दूर करने की चाबी भी है। लेकिन भारत का विकास यहाँ की अध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत से प्रेरित होना चाहिए और उसी हिसाब से उसका क्रियान्वयन होना चाहिए। इसे विकसित देशों की गलतियों को दोहराने से बचना चाहिए और आधुनिक विज्ञान और अपने अध्यात्मिक विवेक का सहारा लेना चाहिए। इस प्रक्रिया में इसे एक सचेत और समावेशी विकास का चमकदार उदाहरण बनना चाहिए जिससे दुनिया के अन्य देश भी प्रेरणा ले सकें।

एक नये हिन्दुस्तान का उदय हो रहा है। हमारा भाग्य और हमारी नियति दुनिया के अन्य देशों के साथ ज्यादा-से-ज्यादा जुड़ती गयी है। अपने विकास के लिए भारत को एक शान्तिपूर्ण, स्थायी, समावेशी और सहयोगात्मक अन्तर्राष्ट्रीय माहौल की आवश्यकता है। ऐसा माहौल बनाने के लिए भारत अपने शानदार

मानव संसाधन की वजह से और उसकी बदौलत खुद भी इच्छुक है। बिना किसी सक्रियता के कोई भी स्वप्न महज एक स्वप्न होता है और स्वप्न के बिना कोई सक्रियता महज समय काटना भर है। लेकिन सक्रियता के साथ एक स्वप्न पूरी दुनिया को बदल सकता है। ऐसी आशा है कि साल 2050 तक दुनिया के हरेक देश में एक वैश्विक सहजीविता का वातावरण पनप उठेगा और वहाँ शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व और समाजिक परिवर्तन का प्रकाश-पुंज जल उठेगा।

32

मानव सहयोग इस ग्रह का सबसे शक्तिशाली बल है

सिर्फ एक ही बात जो मानवता को मुक्ति दिला सकती है वह है आपसी सहयोग।

—बर्ट्रेण्ड रसल
दार्शनिक और लेखक

इस आखरी और निष्कर्ष वाले अध्याय में मैं मनुष्य की उस योग्यता की बात करूँगा जो अपने आसपास के लोगों से सहयोग लेकर नेतृत्व की क्षमता का प्रदर्शन करती है। हम सभी तब बेहतर काम करते हैं जब हम साथ काम करते हैं। हमारी मतभिन्नताएँ जरूर अहमियत रखती हैं, लेकिन हमारी साझा मानवता ज्यादा मायने रखती है। हमें इस बात को समझने के लिए अपने-आपको फिर से नये तरीके से ढालना चाहिए कि सहयोग प्रतिस्पर्धा से आगे का सिद्धान्त है। लेकिन उसे फलीभूत होने के लिए हमें पहले एक निश्चित लक्ष्य तय करना होगा जिसे हम सहकारिता की भावना से हासिल कर सकें और उसी हिसाब से अपने साथियों को चुनें जिनकी शिक्षा, अनुभव और प्रभाव उस लक्ष्य को हासिल करने में मददगार साबित हो सकता है। हरेक व्यक्ति के जीवन में कभी-न-कभी उसके अन्दर की चिंगारी जल उठती है। और फिर किसी दूसरे व्यक्ति के साथ जब उसकी मुलाकात होती है तो वह लपट में तब्दील हो जाती है।

सन् 1915 में महात्मा गाँधी दक्षिण अफ्रीका से लौटे तो उनके संघर्ष और विजय की कहानी दुनिया भर में छप चुकी थी और वह एक राष्ट्रनायक बन चुके थे। हालाँकि वह भारत आते ही आजादी की लड़ाई में कूद जाना चाहते थे लेकिन उन्होंने कुछ समय देश भर में घूम-घूमकर यहाँ के लोगों की तकलीफ और यहाँ

की समस्याओं को जानने का फैसला किया। वह देश के लाखों-करोड़ों गरीबों की दुर्दशा को देखकर इतने द्रवित हुए कि उन्होंने धोती और चप्पल पहनना शुरू कर दिया जो उस समय आम जनता का पहनावा था। अगर जाड़े का मौसम होता तो वह एक चादर ओढ़ लेते। उसके बाद तो यही पहनावा उनका जीवन भर रहा।

अंग्रेजों से लड़ने की बजाय गाँधी ने अपने जीवन का यह लक्ष्य बना लिया कि उन्हें भारतीयों के बीच की असमानता को दूर करने का प्रयास करना है। उन्होंने जमींदारों को इस बात के लिए राजी किया कि वह अपने रैयतों से अत्यधिक कर न लें और मिल मालिकों को इस बात के लिए तैयार किया कि वह मजदूरों के साथ शान्तिपूर्ण समझौता कर लें। गाँधी ने अपनी प्रसिद्धि और प्रतिबद्धता का जमींदारों की चेतना को जगाने के लिए इस्तेमाल किया और मिल मालिकों को रियायतें देने को मजबूर करने के लिए उपवास किया। गाँधीजी की प्रसिद्धि और उनकी प्रतिष्ठा इतनी ऊँची पहुँच गयी थी कि लोगों को इस बात से डर लगता था कि कहीं उनकी मौत के लिए उन्हें जिम्मेदार न ठहरा दिया जाये। उपवासों की वजह से उनका स्वास्थ्य बिगड़ता रहता था और निरन्तर उपवास की वजह से उनकी हालत खराब होती गयी और यह आशंका हो गयी कि उनको कहीं कुछ हो न जाये। गाँधीजी के एक प्रमुख स्वप्नों में यह स्वप्न था कि गाँव को उसकी प्रधान स्थिति वापस लौटायी जाये। उन्होंने हरेक गाँव की एक गणतन्त्र के तौर पर कल्पना की जो अपनी मुख्य जरूरतों के लिए अपने पड़ोसियों पर बिल्कुल निर्भर न हो लेकिन बहुत सारे अन्य मामलों में निर्भर भी हो, जो जीवन के लिए जरूरी होते हैं।

उसके सालों बाद वर्गीज कुरियन ने यह साबित कर दिया कि कैसे गाँव के गैर-कृषि अवसरों को तकनीक की मदद से व्यापक हितों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है और बेरोजगारी और विषमता की समस्या को दूर करने में मदद ली जा सकती है। मैंने अपनी किताब *गाइडिंग सोल्स* में वर्गीज को अपनी प्रेरणा के एक स्रोत के रूप में याद किया है। वह मुझसे दस साल वरिष्ठ थे और सन् 1992 में मेरी उनसे अहमदाबाद में मुलाकात हुई और बाद में ग्रामीण प्रबन्धन संस्थान, आनन्द में उनसे मुलाकात हुई जिसकी स्थापना उन्होंने 1979 में की। उनका जन्म केरल के कोझीकोड में हुआ था और पेशे से वह डेयरी तकनीक में विशेषज्ञता के साथ मेकेनिकल इंजीनियर थे। वह 1949 में सरदार वल्लभभाई पटेल के कहने पर आनन्द आये थे, जिन्होंने उन्हें किसानों की कुछ समस्याओं का समाधान करने

के लिए बुलाया था। उन्होंने उन समस्याओं को तेजी से और प्रभावशाली ढंग से सुलझा दिया लेकिन उसके बाद वह आनन्द छोड़कर वहाँ से गये नहीं। वह जीवन भर वहीं रहे। मुझे अपनी जिन्दगी में महात्मा गाँधी से मिलने का मौका तो नहीं मिला लेकिन वर्गीज कुरियन के व्यक्तित्व में मुझे गाँधीजी के दर्शन हो गये। एक दुग्ध परियोजना से शुरू करके एक विशाल दुग्ध परियोजना में उसे तब्दील कर इस 'मिल्कमैन ऑफ इण्डिया' (भारत के दुग्ध पुरुष) ने भारत को एक दूध की कमी वाले राष्ट्र की श्रेणी से निकाल कर दुग्ध निर्यातक राष्ट्र की श्रेणी में ला खड़ा किया। इसका श्रेय वर्गीज कुरियन को ही जाता है कि भारत आज दुनिया के सकल दुग्ध उत्पादन में 17 फीसदी का योगदान करता है। जिस अमूल ब्राण्ड का निर्माण उन्होंने कुछ किसानों के साथ एक छोटे-से गाँव में किया था उसका सकल कारोबार साल 2013-14 में 3 अरब डॉलर के बराबर हो गया जिसकी समस्त दुग्ध इकाईयों की सकल क्षमता 2.5 करोड़ लीटर प्रतिदिन है! जहाँ तक मूल्य की बात है तो अब दूध, भारत का सबसे बड़ा कृषि उत्पाद है जिसका सालाना उत्पाद मूल्य 55 अरब डॉलर है। भारतीयों की औसत उम्र में बढ़ोत्तरी में दुग्ध उपलब्धता का भी आंशिक योगदान है जो सन् 1947 के औसत 32 साल के मुकाबले दोगुनी होकर आज 67.3 साल तक पहुँच चुकी है।[118] मैं वर्गीज के साथ अपनी तीन मुलाकातों को बहुत ही गौरव के साथ आज भी याद करता हूँ।[119]

वर्गीज कुरियन और महात्मा गाँधी की कहानी में एक समानता यह है कि उन्होंने एक शिक्षित मस्तिष्क का इस्तेमाल और आधुनिक तौर-तरीकों का प्रयोग गाँवों के सशक्तिकरण और उनकी आजीविका के प्रबन्ध के लिए किया। महात्मा गाँधी ने अपने कानून के ज्ञान और शहरी जीवन से अपनी निकटता के अनुभव का इस्तेमाल साधारण भारतीय किसानों को जगाने में किया कि वह भी एक आजाद मुल्क में उसी शान के साथ रह सकते हैं। वर्गीज कुरियन ने एक ऐसा व्यापारिक मॉडेल बनाया जिसमें गाँव के लोग अपने उत्पाद के मालिक थे और उसे बिल्कुल नगर-केन्द्रित व्यापारिक माध्यमों से शहरी लोगों को बेचते थे।

उन्होंने दुग्ध उत्पादकों को प्रबन्ध, संसाधन और विपणन पर नियन्त्रण दे दिया और पेशेवर प्रबन्धकों को कारोबार सम्बन्धी मामलों के लिए नियुक्त किया। उन्होंने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के बाजार पर एकाधिकार को चुनौती दी और गरीब दुग्ध उत्पादकों द्वारा उत्पादित दूध की मात्रा का इस्तेमाल बाजार पर कब्जा करने में

किया।[120] अपने लाजवाब नेतृत्व के गुण के बावजूद डॉ. कुरियन प्रमुख स्वामीजी के ठोस और विनम्र कार्यों से व्यक्तिगत तौर पर बहुत प्रभावित थे। सन् 1985 में एक बड़ी सभा को सम्बोधित करते हुए उन्होने कहा : 'स्वामीजी की महान उपलब्धियों को देखते हुए मैं महसूस करता हूँ कि मैंने जो भी हासिल किया है वह बहुत महत्वपूर्ण नहीं है। हम इस बात को समझने में नाकाम रहते हैं कि धर्मपरायणता क्या कुछ कर सकती है और बलिदान की भावना क्या हासिल कर सकती है।' उसके बाद सन् 1992 में गाँधीनगर में योगीजी महाराज की जन्म-शताब्दी समारोह के अवसर पर कुरियन ने यह विचार रखे :

> मैं एक ईसाई हूँ लेकिन मुझे इस बात की खुशी है कि मुझे यहाँ आमन्त्रित किया गया और सम्मानित किया गया। इससे साबित है कि इस संस्था में धर्म के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होता है। धर्म वह है जो मनुष्य को एक-दूसरे के करीब लाता है... यहाँ लोगों में इस संस्था के प्रति लगन, उनका बलिदान और उनकी संगठन क्षमता अद्भुत है।[121]

अब हम इस परिचर्चा के आखिर में अपने रचनात्मक नेतृत्व के विकास पर बात करते हैं। निष्कर्ष क्या है? इन नेताओं के बारे में मेरे अध्ययन और प्रमुख स्वामी जी से परिचर्चा के बाद मैं अपने पाठकों को निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि वह इस बात का ख्याल रखें कि इस ब्रह्माण्ड में सिर्फ दो ही ज्ञात तत्व हैं : एक ऊर्जा और दूसरा पदार्थ। ऊर्जा, इस ब्रह्माण्ड की सार्वभौम निर्माणकारी इकाई है जिससे वह सभी प्रकार के भौतिक पदार्थों का सृजन करती है जिसमें मानव, हरेक जीव-जन्तु और पेड़-पौधे शामिल हैं। ऐसा एक प्रक्रिया के तहत होता है जिसे सिर्फ प्रकृति ही पूरी तरह से समझ पाती है, वह ऊर्जा को पदार्थ में परिवर्तित करती है।

प्रकृति के निर्माणकारी अवयव मानवजाति को उपलब्ध हैं। वह उसे ऊर्जा के रूप में उपलब्ध हैं जो चिन्तन में शामिल हैं। इस मानव मस्तिष्क की तुलना एक इलेक्ट्रिक बैटरी से की जा सकती है। यह पूरे ब्रह्माण्ड से ऊर्जा लेती है, वह ऊर्जा पदार्थ के हरेक अणु में व्याप्त होती है और पूरे ब्रह्माण्ड का निर्माण करती है। किसी भी अन्य सिद्धान्त या तरीके से अत्यधिक ऊर्जा को एक जगह एकत्रित नहीं किया जा सकता! यहाँ पर मैं आइंस्टीन को उद्धृत करने का लोभ नहीं छोड़ पा रहा, 'हरेक दिन मैं अपने आपको याद दिलाता हूँ कि मेरा आन्तरिक और बाहरी जीवन दूसरे मनुष्यों के श्रम पर आधारित है जो या तो इस दुनिया में मौजूद हैं या जो दुनिया से

जा चुके हैं। और उसी अनुपात में मुझे दुनिया को लौटाना भी चाहिए जो मुझे मिल चुका है या मिल रहा है।'[122]

यह एक सर्वज्ञात तथ्य है कि पदार्थ को अणुओं, परमाणुओं या उससे भी नींचे इलेक्ट्रॉनों में तोड़ा जा सकता है। पदार्थ की ऐसी भी इकाइयाँ हैं जिन्हें पृथक किया जा सकता है, अलग किया जा सकता है और जिनकी व्याख्या की जा सकती है। उसी तरह से ऊर्जा की इकाईयाँ भी हैं। मानव मस्तिष्क ऊर्जा का ही एक रूप है जिसका एक रूप प्रकृति में आध्यात्मिक होता है। जब दो मनुष्यों का मस्तिष्क एक समन्वय की भावना में संयोजित होता है, तो हरेक मस्तिष्क की आध्यात्मिक ऊर्जा एक निकटता का बोध हासिल करती है और जो रचनात्मक मस्तिष्क का एक 'मनोवैज्ञानिक' चरण तैयार करती है। दो मस्तिष्कों का साथ आना वैसा ही है जैसे दो रासायनिक पदार्थ नजदीक आते हैं।

अगर उस समय कोई प्रतिक्रिया होती है तो दोनों ही परिवर्तित हो जाते हैं। जितनी ज्यादा क्षमता या अणु उसमें विद्यमान होंगे उस बैटरी से उतनी ही ऊर्जा निकलेगी और आपस में जुड़े हुए बैटरियों के समूह किसी एक बैटरी की तुलना में ज्यादा ऊर्जा प्रदान करेंगे। मानव का मस्तिष्क भी उसी तरीके से काम करता है। यह उस तथ्य को साबित करता है कि कोई मस्तिष्क किसी अन्य की तुलना में ज्यादा सक्षम तरीके से काम करता है और इससे एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य निकलता है : एक ऐसे मस्तिष्क का समूह जो अन्य मस्तिष्कों से संयोजित तरीके से और समन्वय की स्थिति में जुड़ा हुआ हो, वह ज्यादा चिन्तन या वैचारिक ऊर्जा देगा, बनिस्बत उस मस्तिष्क के जो अकेला है। यह ठीक वैसे ही है जैसे इलेक्ट्रिक बैटरी का समूह सिर्फ एक बैटरी की तुलना में ज्यादा ऊर्जा प्रदान करता है। इस उदाहरण से यह समझा जा सकता है कि रचनात्मक मस्तिष्क की जो प्रक्रिया या सिद्धान्त है वह इस बात पर आधारित है कि कोई अन्य कितने मस्तिष्कों के विचारों को ग्रहण करता है या उससे घिरा रहता है। जब कई लोगों के मस्तिष्क समन्वय की स्थिति में एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं और काम करते हैं, तो उस जुड़ाव के फलस्वरूप बढ़ी हुई ऊर्जा उस समूह के हरेक मस्तिष्क तक पहुँच जाती है और उन्हें हासिल होती है। शायद यह सिर्फ प्रेम या स्नेह की इकलौती भावना नहीं है जो इस विश्व को संचालित करती है, बल्कि वह गठबन्धन या मैत्री भी वैसा ही करते हैं जो परस्पर सहयोगी भावना

से काम करते हैं, जिसमें साझेदार एक दूसरे पर निर्भरता को स्वीकार करते हैं ताकि एक साझे लक्ष्य या किसी निजी लक्ष्य को भी हासिल किया जा सके।

प्रमुख स्वामीजी की संगत और उनके नेतृत्व में बीएपीएस की बड़ी सफलता को नजदीक से देखने के बाद मैंने ऐसा ही निष्कर्ष निकाला। उन्होंने अपने आसपास बेहतरीन मस्तिष्कों को एकत्रित किया था और उन सबों के बीच एक महान समन्वय स्थापित किया था। अपने-आपको महान मस्तिष्कों के साथ जोड़कर जिनके विचारों को अपने दिमाग में समाहित करके और अपने आसपास महान मस्तिष्कों को आपस में जोड़कर जो सकल बौद्धिकता, अनुभव, ज्ञान और आध्यात्मिक शक्ति निर्मित हुई थी, वह कई गुना ज्यादा बढ़ गयी थी।

प्रमुख स्वामीजी के वास्तविक रचनात्मक और सम्पूर्ण नेतृत्व ने बीएपीएस में किसी भी तरह के आन्तरिक विवाद की स्थिति को दूर कर दिया था। प्रमुख स्वामीजी ने इसके लिए लोगों के सामने उदाहरण रखा था और इस बात को स्थापित किया था कि एकता ही वास्तविक विकास है। इसीलिए जब विश्वास और सहयोग की भावना आन्तरिक रूप से प्रस्फुटित होती है तो हम साथ-साथ आगे बढ़ते हैं और साथ ही संस्था भी बड़ी और ताकतवर होती जाती है। हर वह व्यक्ति जो किसी व्यापार का प्रबन्धन करता है, वह इस बात को जानता है कि कर्मचारियों को एक साथ और एक ही भावना से काम करवाना आसान काम नहीं है, सहभागिता या समन्वय की भावना पैदा करना बड़ा मुश्किल भरा है। जैसा कि मैंने इस किताब में हर जगह चर्चा की है, इस ऊर्जा को हासिल करने का मुख्य स्रोत एक अपिरिमित मेधा की भावना (चेतना) है जो इस ब्रह्माण्ड को चला रही है। जब दो या उससे ज्यादा लोग समन्वय या सहकार की भावना से साथ एक निश्चित लक्ष्य की तरफ काम करते हैं तो वह अपने आपको एक ऐसी स्थिति में प्रस्तुत करते हैं कि सार्वभौम चेतना से वह सीधे ऊर्जा ग्रहण कर सकें। यह शक्ति हासिल करने के अन्य स्रोतों में से सबसे महान स्रोत है। यह ऐसा स्रोत है जिससे विलक्षण प्रतिभा का जन्म होता है। यही वह स्रोत है जिससे हरेक महान नेता का निर्माण चेतन या अवचेतन रूप में होता है।

अन्य जो दो स्रोत हैं जिनसे शक्ति संचय के हेतु आवश्यक ज्ञान हासिल किया जा सके वह मानवता की पाँच ज्ञानेन्द्रियों से ज्यादा विश्वसनीय नहीं हैं। और यह भी बात है जबकि मनुष्य की इन्द्रियाँ हमेशा विश्वसनीय नहीं होतीं। लेकिन सार्वभौम

या सर्व-व्याप्त चेतना कभी गलती नहीं करती। शान्त चित्त से किया गया चिन्तन, श्रमसाध्य और सादगी से भरी जिन्दगी, कहीं भी और किसी भी समय गरीबों, वंचितों या विकलांगों की सेवा मे बिताया गया समय, जानवरों और पर्यावरण की सेवा और सुरक्षा ऐसे तरीके हैं जिनके द्वारा उस सार्वभौम ऊर्जा से सबसे आसान तरीके से सम्पर्क साधा जा सकता है।

यह इस पुस्तक का एक निष्कर्ष है। मैंने इस किताब को प्रमुख स्वामीजी के साथ हुए अपने अनुभवों, उनके कार्यों के बारे में राय के रूप में और उनके सानिध्य के दौरान जो मेरे भीतर परिवर्तन आया, उसको रिकॉर्ड करने के लिए लिखा है। यह उस हिसाब से एक दस्तावेज है। मैं स्वामीजी में मानवीय गुणों की उच्चता का एक प्रतिबिम्ब देखता हूँ, उसका सच्चा स्वरूप पाता हूँ। मेरे पास इस किताब के आखिर में कहने के लिए अल्बर्ट आइंस्टीन से बेहतर शब्द नहीं हैं :

> इस पृथ्वी पर हमारी स्थिति विचित्र है। हममें से हर कोई एक छोटी-सी यात्रा पर आता है, बिना यह जाने हुए कि वह क्यों आया है। लेकिन कई बार लगता है कि वह किसी दैवीय उद्देश्य को लेकर आया है। लेकिन दैनिक जीवन के दृष्टिकोण से देखें तो कम-से-कम एक बात ऐसी जरूर है जो हमें पता है : हम यहाँ दूसरों के लिए हैं... उन अनगिनत अनजानी आत्माओं के लिए जिनके भाग्य के साथ हम सहानुभूति के तार से जुड़े हुए हैं। दिन में मैं कई बार महसूस करता हूँ कि मेरी अन्दरूनी और बाह्य जिन्दगी जीवित या मृत लोगों के श्रम पर किस तरह से आश्रित है या बनी हुई है और उसी तरह, उसी व्याकुलता से हमें भी मानवता को उतना ही लौटा देना चाहिए जितना हमें मिला है या मिल रहा है।[123]

और यह बात मुझे अभिभूत करती है कि कितनी खूबसूरती से यह शब्द प्रमुख स्वामीजी के जीवन और शब्दों द्वारा व्यक्त हुए हैं। यह ऐसा ही है मानो अध्यात्म का कोई वैज्ञानिक फार्मूला हो।

दूसरों की भलाई में हमारी अपनी भलाई निहित है,
दूसरों की तरक्की में हमारी तरक्की छुपी हुई है
दूसरों की खुशी में हमारी खुशी छुपी हैं।

यह पुस्तक अध्यात्म या धर्म पर कोई पाठ्यक्रम नहीं है। इस किताब में वर्णित किसी भी मौलिक सिद्धान्त की व्याख्या इस तरीके से नहीं की जानी चाहिए कि वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तरीके से किसी व्यक्ति की धार्मिक आस्था या सामाजिक

आदतों में हस्तक्षेप करे। हममें से सभी को चाहें वह तीक्ष्ण-बुद्धि नास्तिक हों या प्रतिबद्ध आस्थावान लोग हों, अब इस धरती की पुकार सुननी ही चाहिए। हमें उसी तरह से प्रेम ग्रहण करना चाहिए और बाँटना चाहिए जैसा तीर्थयात्रा में शामिल हर तीर्थयात्री सत्य की खोज में करता है, तकलीफ़ में पड़े लोगों की आवाज को सुनता है, हमारे अन्त:करण को न्याय की भावना से जगाता है और उसे अपना पथ-प्रदर्शक मानता है और इस ध्येय से काम करता है कि हमारी देखरेख में हमारे पर्यावरण की मौजूदा परिस्थितियों में बदलाव आये। सिर्फ न्याय, ईमानदारी, विचार और साझे लक्ष्य, एक मानव के रूप में हमें स्थायी शान्ति की दिशा में ले जायेंगे। सिर्फ सहयोग ही वह भावना है जो मानवता को फिर से जागृत कर पायेगी। आइए, हम अपनी पृथ्वी को थोड़ा और रहने योग्य बनाने की कोशिश करें!

नोट्स

1. योगी जी महाराज (1892-1971) भगवान स्वामीनारायण के चौथे उत्तराधिकारी थे, जिन्होंने बीएपीएस के बच्चों और युवाओं की गतिविधियों और सत्संग का आयोजन शुरू किया।
2. *सलत-ए-इश्तिकारा* मार्गदर्शन के लिए खास प्रार्थना है, जिसमें कोई शख्स फ़ैसले लेने में अल्लाह से मदद की गुहार करता है। इसमें व्यक्ति रात को प्रार्थना करता है और वज़ू करने के बाद सो जाता है। अगर सपने में वह सफेद या हरा रंग देखता है इसका अर्थ है उसे उस विचार को मान लेना चाहिए। और अगर वह लाल या काला देखता है तो उसे उस विचार का त्याग कर देना चाहिए। अगर सात दिनों तक उसे कोई सपना नहीं आता या उसे सपना याद नहीं रहता, तो फिर उसे दिल की सुननी चाहिए।
3. एपीजे अब्दुल कलाम और अरुण तिवारी, *गाइडिंग सोल्स : डायलॉग्ज़ ऑन द पर्पस ऑफ़ लाइफ*, ओशन बुक्स, 2005
4. भारत के बावनवें गणतन्त्र दिवस 26 जनवरी 2001 को सुबह 8.46 बजे गुजरात में भूकम्प आया था, झटके दो मिनट तक बरकरार रहे थे। इस भूकम्प की वजह से 20,000 लोग मारे गये थे और 1,70,000 लोग घायल हुए थे। 4,00,000 मकान बर्बाद हो गये।
5. स्थितप्रज्ञ भारतीय संस्कृति के सबसे प्राचीन महाकाव्यों से लिया गया एक संस्कृत शब्द है। इसका अर्थ है, एक ऐसा व्यक्ति जो काफी सन्तुलित है, जो अपने आसपास के मुकाबले मानसिक और भावनात्मक स्तर पर स्थिर रहता है।
6. गुणातीतानन्द स्वामी (1785-1867) एक अक्षरब्राह्मण अवतार थे और वह भगवान स्वामीनारायण के पहले आध्यात्मिक उत्तराधिकारी थे।
7. भगतजी महाराज (1829-1897) भगवान स्वामीनारायण के दूसरे आध्यात्मिक उत्तराधिकारी थे।
8. शास्त्रीजी महाराज (1865-1951) स्वामीनारायण के तीसरे आध्यात्मिक उत्तराधिकारी थे, जिन्होंने अक्षर-पुरुषोत्तम सिद्धान्त की प्रतिस्थापना की और सन् 1907 में बीएपीएस स्थापित किया।
9. कृपया फुटनोट 1 देखें।
10. हिन्दू शास्त्रों के मुताबिक, ईश्वर की उपस्थिति को किसी के हृदय की पवित्रता के अनुसार ही कम या अधिक महसूस किया जा सकता है। मिसाल के तौर पर, किसी पारदर्शी बल्ब के जरिए अधिक प्रकाश निकलता है, जबकि रंगीन या पारभाषी बल्ब में इसकी तुलना

में कम प्रकाश निकलेगा। इसी तरह, हिन्दू शास्त्र कहते हैं कि उनकी पवित्रता के कारण, ईश्वर की उपस्थिति ईश्वर में आस्था रखने वालों को सत्पुरुषों और मन्दिरों में रखी मूर्त्तियों में अधिक पूर्णता से महसूस होगी।

11. एपीजे अब्दुल कलाम और अरुण तिवारी, *यू आर बॉर्न टू ब्लूसम : टेक माइ जर्नी बयॉन्ड*...ओशन बुक्स, 2008.
12. मैं सन् 1931 में रामेश्वरम में विशाल शिवमन्दिर के पास पैदा हुआ था।
13. रामानन्द स्वामी (1738-1801) सौराष्ट्र इलाके के सबसे सम्मानित सन्त थे। नीलकण्ठ वर्णी ने उनकी पवित्रता और धर्मपरायणता की वजह से उन्हें अपना गुरु माना था।
14. मुक्तानन्द स्वामी (1758-1830) रामानन्द स्वामी के आश्रम में सबसे वरिष्ठ सन्त थे और वह भगवान स्वामीनारायण से तेईस साल बड़े थे, जिनकी उन्होंने आजन्म सेवा की।
15. एपीजे अब्दुल कलाम, *इनडॉमिटेबल स्पिरिट*, राजपाल एंड संस, 2013.
16. साधु ब्रह्मविहारीदास, *सत्संग : मोमेंट्स विद प्रमुख स्वामी महाराज*, स्वामीनारायण अक्षरपीठ, अहमदाबाद, 1995.
17. गिरमिटिया मजदूर बन्धुआ मजदूरी की ऐसी प्रथा थी जो दास-प्रथा खत्म होने के बाद अस्तित्व में आयी। गिरमिटिया मजदूरों को वेस्ट इंडीज़, अफ्रीका और दक्षिण-पूर्व एशिया के ब्रिटिश उपनिवेशों में गन्ना, कपास और चाय के बागानों और रेलवे परियोजनाओं में काम करने के लिए रखा जाता था। सन् 1834 से प्रथम विश्वयुद्ध के अन्त तक, ब्रिटेन ने करीब बीस लाख भारतीयों को गिरमिटिया मजदूरों के तौर पर अपने उन्नीस उपनिवेशों में भेज दिया, उनमें फिजी, मॉरीशस, सीलोन (अब श्रीलंका) त्रिनिदाद, गुयाना, मलयेशिया, युगाण्डा, केन्या और दक्षिण अफ्रीका।
18. सुमन क्वात्रा, *सत्याग्रह एण्ड सोशल चेंज*, दीप एंड दीप पब्लिकेशंस, 2001.
19. नेडबर्ट्ज़, *अफ्रीका एंड इट्स आउटसाइडर्स : नैशनलिज़्म, रेस, एंड द प्रॉब्लम ऑफ द इंडियन डायस्पोरा इन अफ्रीकन हिस्ट्री*, सेण्टर फॉर अफ्रीकन स्टडीज़, मुम्बई विश्वविद्यालय, 2011.
20. http://www.enlightened-spirituality.org/Mahatma_Gandhi.html
21. रेमण्ड ब्रेडी विलियम्स, *एन इंट्रोडक्शन टू स्वामीनारायण हिन्दुइज़्म*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2001.
22. हेनरी केम्बा, *स्टेट ऑफ ब्लड : द इनसाइट स्टोरी ऑफ ईदी अमीन*, पुतनम पब्लिकेशंस, 1977.
23. एच टी दवे, *लाइफ एण्ड फिलॉसफी ऑफ श्री स्वामीनारायण*, जॉर्ज एलेन एण्ड अनविन लि., लन्दन, 1974.
24. सैम शेपर्ड, *बरीड चाइल्ड*, नॉफ डबलडे पब्लिशिंग ग्रुप, 2009.
25. लियो तॉल्सतॉय, द *किंगडम ऑफ गॉड विदिन यू : सटीक जीवनी और आलोचनात्मक निबन्ध*, गोलगोथा प्रेस, 2013.
26. http://www.gutenberg.org/files/6157/6157-h/6157-h.htm

27. अमीरा के बेनीसन, द *ग्रेट खलीफा*, आईबी तॉरीस, 2011.

28. हघ केनेडी, द *ग्रेट अरब कॉन्क्वेस्ट्स : हाउ द स्प्रेड ऑफ इस्लाम चेंज्ड द वर्ल्ड वी लिव इन*, फीनिक्स, 2008.

29. अब्दुल क़ादिर अल-जिलानी, अनुवाद : तोसुन बराक, द *सीक्रेट ऑफ सीक्रेट्स*, इस्लामिक टेक्स्ट सोसायटी, 1992.

30. शेख मुहम्मद इब्न याह्या अल-तदीफी और शेख मुहम्मद इब्न याह्या अत-तदीफी, अनुवाद : मुहतर हॉलैंड, *नेकलेस ऑफ जेम्स (क़दा 'इद अल-जवाहिर) : अ बायोग्रफी ऑफ शेख 'अब्द अल-क़ादिर अल-जिलानी'*, अल-बाज़ पब्लिशिंग, 1995.

31. रीता कार्टर, द *ह्यूमन ब्रेन बुक*, डीके पब्लिशिंग, 2009.

32. डाना ज़ोहर, द *क्वॉन्टम सेल्फ*, विलियम मोरो पेपरबैक्स, 1991.

33. मिशियो काकू, द *फ्यूचर ऑफ द माइण्ड : द साइंटिफिक क्वेस्ट टू अण्डरस्टैंड, इनहान्स, एण्ड इमपॉवर द माइण्ड*, डबलडे, 2014.

34. मिशियो काकू, *फीजिक्स ऑफ द इमपॉसिबल : अ साइंटिफिक एक्सप्लोरेशन इनटू द वर्ल्ड ऑफ फेजर्स*, पोर्स फील्ड्स, टेलिपोर्टेशन, एण्ड टाइम ट्रेवल, एंकर, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2009.

35. स्टीवन विनबर्ग, *लेक व्यू : दिस वर्ल्ड एण्ड द यूनिवर्स*, बल्कनाप प्रेस, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2011.

36. राडिन डीन, द *कंशस यूनिवर्स : द साइंटिफिक ट्रुथ ऑफ साइकिक फिनॉमिना*, हार्पर वन, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2009.

37. डेविड वाइट, *क्रॉसिंग द अननोन सी : वर्क एज अ पिलग्रिमेज ऑफ आइडेंटिटी*, रिवरहेड ट्रेड, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2002.

38. रोज़र वाल्स एण्ड फ्रांसिस वॉन, *पाथ्स बियॉन्ड इगो : न्यू कंशसनेस रीडर*, टार्चर, 1993.

39. टेरा महानामा-स्थविरा एण्ड डगलस बुलिस, *महावंश : द ग्रेट क्रॉनिकल ऑफ श्रीलंका*, एशियन ह्यूमेनिटीज़ प्रेस, 2012.

40. नीरा विक्रमसिंघे, *श्रीलंका इन द मॉडर्न एज : अ हिस्ट्री ऑफ कॉन्टेस्टेड आइडेंटिटीड*, यूनिवर्सिटी ऑफ हवाई प्रेस, 2006

41. जोनाथन सफरन फोएर, *एवरीथिंग इज़ इल्युमिनेटेड*, हार्पर पैरेनियल, 2001.

42. टॉलमी, अनुवाद : जी जे टूमर, *टॉलमीज़ अल्मागेस्ट*, प्रिंसटन यनिवर्सिटी प्रेस, 1998.

43. रिचर्ड डॉकिन्स, द *मैजिक ऑफ रियलिटी : हाउ वी नो वॉट्स रियली ट्रू*, फ्री प्रेस, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2012.

44. फिलिप ज़िगलर, द *ब्लैक डेथ*, द हिस्ट्री प्रेस, नया संस्करण, 2010.

45. रॉबर्ट स्टीवन गॉटफ्रीड, द *ब्लैक डेथ : नैचुरल एण्ड ह्यूमन डिजास्टर इन मिडिवल यूरोप*, फ्री प्रेस, 1985.

46. सिरैसी, *'मिडिवल एंड अर्ली रेनेसां मेडिसिन' : इंट्रोडक्शन टू नॉलेज एंड प्रैक्टिस*, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, दूसरा संस्करण, 1990.

47. अल्फ्रेड डब्ल्यू क्रॉस्बी, *द मीजर ऑफ रियलिटी : क्वॉन्टिफीकेशन इन वेस्टर्न यूरोप*, 1250-1600, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नया संस्करण, 1997.

48. http://en.wikipedia.org/wiki/The_Assayer

49. कॉलिन मर्फी, *गॉड्स जूरी : द इनक्विजीशन एंड द मेकिंग प द मॉडर्न वर्ल्ड*, पेंग्विन, 2013.

50. पी थॉमस स्टेनले, *पाइथागॉरस : हिज लाइफ एण्ड टीचिंग्स*, आइबिस प्रेस, 2010.

51. केनेथ सिलवन गुथरे, *द पाइथागोरियन सोर्सबुक एण्ड लाइब्रेरी : एन एंतोलॉजी ऑफ एनशियंट राइटिंग्स विच रिलेट टू पाइथोगॉरस एण्ड पाइथोगॉरियन फिलॉसफी*, फेंस प्रेस, नया संस्करण, 1987

52. कोनार्ड रूडन्की, *द कॉस्मॉलॉजिस्ट्स सेकेन्ड*, स्टीनर बुक्स, 1991

53. http://download.sunnionlineclass.com/ya_nabi/files/al-isra_wal-miraaj_english.pdf

54. नीगल काल्डर, *आइंस्टीन्स यूनिवर्स*, ग्रामर्की, 1988

55. वॉल्टर आइजक्सन, *आइंस्टीन : हिज लाइफ एंड यूनिवर्स*, सिमन एंड शुस्टर, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2008

56. जोसेफ रैटज़िंगर, *एस्कैटोलॉजी : डेथ एण्ड इटरनल लाइफस* कैथलिक यूनिवर्सिटी ऑफ अमेरिका प्रेस, दूसरा संस्करण, 2007

57. जोसेफ कार्डिनल रैटज़िंगर और बोनीफेस रैमसे, *इन द बिगनिंग... : अ कैथलिक अण्डरस्टैंडिंग ऑफ द स्टोरी ऑफ क्रिएशन एण्ड द फॉल* (रिसोर्समेंटः रिट्राइवल एण्ड रिनुएल इन कैथलिक थॉट्स), विलियम बी एर्डमैन्स पब्लिशिंग कम्पनी, पुनर्मुद्रित संस्करण, 1995

58. क्लिफोर्ड गीर्ट्ज, *द इण्टरप्रिटेशन ऑफ कल्चर्स*, बेसिक बुक्स क्लासिक्स, 1977

59. परमहंस योगानन्द, *वेयर देअर इज़ लाइट : इनसाइट एण्ड इनसपाइरेशन फॉर मीटिंग लाइफ्स चैलेंजेस*, सेल्फ रियलाइजेशन फैलोशिप, 1989

60. मैक्स प्लांक, *साइंटिफिक ऑटोबायोग्राफी एण्ड अदर पेपर्स*, फिलॉसोफिकल लाइब्रेरी, 1968

61. जे एल हेलब्रन, *डाइलेमाज़ ऑफ एन अपराइट मैन : मैक्स प्लांक एण्ड द पॉर्टून्स ऑफ जर्मन साइंस*, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2000

62. इम्के बॉकूमोबियस, *क्विगॉन्ग मीट्स क्वॉन्टम फीजिक्स : एक्सपीरियंसिंग कॉस्मिक वननेस*, थ्री पाइन्स प्रेस, 2012

63. इवान हैरिस वॉकर, *द फीजिक्स ऑफ कनशिसयनेस : द क्वॉन्टम माइण्ड एण्ड द मीनिंग ऑफ लाइफ*, बेकिस बुक्स, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2000

64. फ्रांसिस एस कॉलिन्स, *द लैंग्वेज ऑफ गॉड : अ साइंटिस्ट प्रेजेंट्स एविडेंस फॉर बिलीफ*, फ्री प्रेस, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2007

65. रॉबिन मारान्ट्ज़ हेनिग, *द मॉन्क इन द गार्डन : द लॉस्ट एण्ड फाउण्ड जीनियस ऑफ ग्रेगर मेंडल, द फादर ऑफ जेनेटिक्स*, मेरिनर बुक्स, 2001

66. एडवर्ड एडेल्सन, *ग्रेगर मेंडल : एण्ड द रूट्स ऑफ जेनेटिक्स*, ऑक्सफर्ड पोर्ट्रेट्स इन साइंस, ऑक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999

67. ब्रूस एच लिप्टन, *द बायोलॉजी ऑफ बीलीफ : अनलीशिंग द पावर ऑफ कनशियसनेस, मैटर, एण्ड मिराकल्स*, हे हाउस, 2007

68. स्टीवन नैडलर, *स्पिनोज़ा : अ लाइफ*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2001

69. बेनेडिक्ट डि स्पिनोज़ा एण्ड माइकल एल मॉर्गन, *स्पिनोज़ा : कम्प्लीट वर्क्स*, हैचेट पब्लिकेशन कं, 2002

70. बेनेडिक्ट डि स्पिनोज़ा एण्ड एडविन कर्ली, *एथिक्स*, पेंगुइन क्लासिक्स, 2005

71. https://www.physicsforums.com/threads/given-spinozas-insistence-on-a-completely-ordered-world.363878/

72. थियोडोर गोल्डस्टकर, *लिटररी रिमेन्स ऑफ द लेट प्रोफेसर थियोडोर गोल्डस्टकर*, डब्ल्यू एच एलेन, 1879, pantheist.weebly.com/vedanta.html

73. एच पी ब्लावत्स्की, *कलेक्टेड राइटिंग्स*, खंड 13, पृष्ठ 308-310, क्वेस्ट बुक्स, pantheist.weebly.com/vedanta.html

74. http://www.einsteinandreligion.com/spinoza2.html

75. स्टेनफोर्ड इनसाइक्लोपेडिया ऑफ फिलॉसफी, plato.stanford.edu/entries/spinoza/

76. लॉरेंस मॅकलोहान, '*द ट्रायल्स ऑफ गियोर्दानो ब्रूनो : 1592 &1600*', http://law2.umkc.edu/faculty/projects/ftrials/brunolinks.html

77. आर्थर मिड्लटन यंग, द रिफ्लेक्सिव यूनिवर्स : इवॉल्यूशन ऑफ कनशसनेस, एनोडॉस फाउण्डेशन, संशोधित संस्करण, 1999

78. http://www.songlyrics.com/the-other-two/the-grave-lyrics/

79. वी ए शेफर्ड, '*एट द रूट्स ऑफ प्लांट न्यूरोबायोलॅजी : ए ब्रीफ हिस्ट्री फ द बायोलॅजिकल रिसर्च ऑफ जे सी बोस*', www.scienceandculture-isna.org

80. एलवुड बैबिट एंड चार्ल्स हैपगुड, *वॉयसेज ऑफ स्पिरिट*, लाइट टेक्नॉलजी पब्लिशिंग, 1992

81. http://www.pantheism.net/paul/gaia.htm

82. http://dlsusa.blogspot.in/2014/06/june-242014-spiritual-message-for-day.html

83. पॉल हैरीसन, '*साइंटिफिक पैथेंइज़म : बेसिक प्रिंसिपल्स*', www. Pantheism. net/paul/basic-principles.htm

84. http://www.answering-islam.org/Shamoun/allah_seen.htm

85. http://www.uni-heidelberg.de/presse/news2011/pm20110203_sterne_en.html

86. http://www.universetoday.com/18847/life-of-the-sun/

87. http://scienceandbelief.org/tag/aquinas/

88. फ्रांसिस एस कॉलिन्स, *बिलीफ : रीडिंग्स ऑन द रीज़न फॉर फेथ*, हार्पर वन, 2010

89. फ्रांसिस एस कॉलिन्स, *द लैंग्वेज ऑफ गॉड : अ साइंटिस्ट प्रेजेंट्स एविडेंस फॉर बिलीफ*, फ्री प्रेस, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2007

90. http://thinkexist.com/quotation/let_me_not_pray_to_be_sheltered_from_dangers_but/144033.html

91. http://sunnitv.com/biography-ghawth-al-azam-as-shaykh-abdal-qadir-al-jilani/

92. नेपोलियन हिल, *थिंक एण्ड ग्रो रिच*, विस्तृत संस्करण, रैंडम हाउस पब्लिशिंग ग्रुप, 2012

93. http://en.thinkexist.com/quotation/death_is_not_extinguishing_the_light-it_is_only/144007.html

94. बेटनी ह्यूग्स, द *हैमलॉक कप : सोक्रेट्स*, एथेंस एण्ड द सर्च फॉर द गुड लाइफ, नॉफ, 2011

95. अब्राहम लिंकन, *इन लिंकन्स हैंड : हिज़ ओरीजिनल मैन्युस्क्रिप्ट्स*, बैंटम डेल, 2009

96. http://www.abrahamlincolnonline.org/lincoln/speeches/inaug2.htm

97. http://www.poetryfoundation.org/poem/175138

98. सी एस लेविस, द *प्रॉब्लम ऑफ पेन*, हार्पर कॉलिन्स पब्लिशर्स, 2009

99. http://en.wikiquote.org/wiki/Lord_Byron

100. http://www.truthandcharityforum.org/purity-and-clearness-of-the-intellect/

101. जयतिलाल एस संघवी, *अ ट्रीटस ऑन जैनिज़्म*, फॉरगॉटन बुक्स, 2008

102. मोहित चक्रवर्ती, *फायर सान्स आयर : ए क्रिटिकल स्टडी ऑफ गाँधियन नॉन-वॉयलेंस*, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, 2005

103. जेफरी कार्नल एण्ड फिलिपा ग्रेगरी, *गाँधीज़ इण्टरप्रेटर : ए लाइफ ऑफ होरेस अलेक्जेंडर*, एडिनबरा यूनिवर्सिटी प्रेस, 2010

104. एकनाथ ईश्वरन, *गाँधी द मैन : हाउ वन मैन चेंज्ड हिमसेल्फ टू चेंज द वर्ल्ड*, नीलगिरि प्रेस, चौथा संस्करण, 2011

105. http://www.gotquestions.org/still-small-voice.html

106. लुईस फिशर, *गाँधी : हिज लाइफ एण्ड मेसेज फॉर द वर्ल्ड*, सिगनेट क्लासिक्स, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2010

107. http://mlk-kpp01.stanford.edu/index.php/encyclopedia/documentsentry/doc_the_drum_major_instinct/

108. लाव-ए-मकसद, *'टैबलेट्स ऑफ बहाउल्लाह रिवील्ड आफ्टर द किताब-ए-अक़दस'*, http://reference.bahai.org/en/t/b/TB/tb-12.html

109. नेल्सन मण्डेला, *नेल्सन मण्डेला बाइ हिमसेल्फ : द ऑथोराइज्द बुक ऑफ कोटेशंस*, मॅकमिलन, विस्तारित संस्करण, 2011

110. hinkexist.com/quotation/the_weak_can_never_forgive-forgiveness_is_the/215848.html

111. *'द दलाई लामा एण्ड ए कमिटमेंट ऑफ कम्पैशन : एन इवनिंग विद विक्टर चान'*, gabriolaecumenical.com

112. मैलविन सी गोल्डस्टीन, *अ हिस्ट्री ऑप मॉडर्न तिब्बत, 1913-1951 : द डिमाइस ऑफ द लामिस्ट स्टेट*, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफॉर्निया प्रेस, 1991

113. दलाई लामा, *फ्रीडम इन एक्साइल : द ऑटोबायोग्रफी ऑफ द दलाई लामा*, हार्पर पेरैनियल, पुनर्प्रकाशित संस्करण, 2008

114. दलाई लामा, अनुवाद : राजीव मेहरोत्रा, *इन माइ ओन वर्ड्स : एन इंट्रोडक्शन टू माइ टीचिंग्स एण्ड फिलॉसफी*, हे हाउस, 2011

115. थुप्टेन जिंग्पा, *एसेन्शियल माइण्ड ट्रेनिंग, तिब्बतन क्लासिक*, विज़डम पब्लिकेशंस, 2011

116. अमृता शाह, *विक्रम साराभाई : अ लाइफ*, पेंगुइन बुक्स, 2007.

117. http://www.isro.org/scripts/Aboutus.aspx#

118. http://amul.com/m/40th-annual-general-body-meeting-held-on-15th-may-2014

119. वर्गीज कुरियन और गौरी साल्वी, *आई टू हैड अ ड्रीम*, एपीएच पब्लिशिंग कॉर्प, 2005

120. वर्गीज कुरियन, *एन अनफिनिश्ड ड्रीम*, राष्ट्रीय दुग्ध विकास बोर्ड के अध्यक्षों के कालक्रम से भाषणों का चयनित संग्रह, टाटा-मॅकग्रॉ-हिल, 1997

121. www.swaminaryan.org/introduction/opinions/national/

122. http://www.beliefnet.com/Quotes/Judaism/A/Albert-Einstein/A-Hundred-Times-A-Day-I-Remind-Myself-That-My-Inne.aspx

123. पॉल आर्थर शिल्प (सं), अल्बर्ट आइंस्टीन, *फिलॉसफर साइंटिस्ट : द लाइब्रेरी ऑफ लीविंग फिलॉसफर्स*, खंड VII, ओपन कोर्ट, तीसरा संस्करण, 1998

उपसंहार

दिल्ली में 6 जून 2014 का दिन बड़ी गर्मी का था। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में तापमान पैंतालीस डिग्री सेल्सियस के ऊपर चला गया था। मैं रात ढले आदतन अपने बागीचे में टहल रहा था।

विशालकाय अर्जुन का पेड़ खामोश था; पत्तियों में से सरसराहट तक की आवाज़ न थी। अष्टमी का चाँद साढ़े बारह बजे रात के आसपास आसमान में आकर चिपक गया था। मैंने अपने स्टाफ से कहा कि खुले में एक कुर्सी लाकर रख दें और मुझे अकेला छोड़ दें। थोड़ी देर बाद मैंने हवा के एक झोंके को महसूस किया और मेरी आँखें बन्द हो गयीं।

मैंने कल्पना की कि मैं और प्रमुख स्वामीजी अन्तरिक्ष में विचरण कर रहे हैं। हम वहाँ किसी दैवीय शक्ति के बुलावे पर आये हैं। हम कई पैग़म्बरों और देवपुरुषों से मिले और हमने उनको यथोचित सम्मान दिया। हमने स्वर्ग और नर्क देखे; हमने नरक में पड़े लोगों की यन्त्रणा देखी और स्वर्ग में बैठे लोगों की शान्ति भी। एक चटख रोशनी ने हमें घेर लिया... और मैं अब प्रमुख स्वामीजी को नहीं देख पा रहा था। मैं सिर्फ अपनी कलाई पर उनकी पकड़ को महसूस कर पा रहा था।

'हम कहाँ हैं? यह कौन-सा वक्त है?' मैंने पूछा।

'तुम अनन्त में हो। यह वक्त शाश्वत है, और यह स्थान अस्थान है।' मैंने उत्तर में सुना।

'ऐसा कैसे हो सकता है?' मैंने पूछा।

'तो किसी और जैसा भी कैसे हो सकता है? क्या कोई ऐसा वक्त था, जब तुम ईश्वर के साथ नहीं थे? क्या कोई स्थान है जहाँ तुम ईश्वर में नहीं हो? परमपिता हमेशा तुम्हारे साथ होते हैं।'

'लेकिन प्रमुख स्वामीजी सारंगपुर में हैं, मुझसे एक हजार मील दूर। वह मेरा हाथ कैसे पकड़ सकते हैं?'

'तुम शाश्वत को मीलों और मिनटों के घेरे में क्यों रख रहे हो, कलाम? शाश्वत को घण्टों और मौसमों में क्यों बाँधना, और अन्तरिक्ष को दूरियों और जगहों में क्यों बाँटना?'

'लेकिन मैं कुछ देख नहीं पा रहा।'

'तुम क्या देखना चाहते हो?'

'मैं आपको देखना चाहता हूँ?'

'तुम्हारी आँखों की रोशनी सिर्फ तुम्हारी अकेले की रोशनी नहीं है। यह मेरी रोशनी है जो तुम्हारी आँखों से सब देखती हैं। मैं तुम्हारी आँखों की रोशनी हूँ मुझे तुम क्या देखोगे ?'

'लेकिन मैं तो साँस ले रहा हूँ। ऐसा कैसे हो सकता है कि मैं अन्तरिक्ष में रहूँ और साँस भी ले पाऊँ?'

'तुम्हारी छाती में चल रही साँस सिर्फ तुम्हारी नहीं है। हर कोई, जो साँस लेता है, वह इसी से साँस को ले रहा है। मैं इन सब की साँस हूँ।'

'मैं इस बारे में सोच नहीं पा रहा। यह क्या हो रहा है?'

'तुम्हारी यह सोच भी तुम्हारे अकेले की सोच नहीं है। मैं वह सोच हूँ जो तुम्हारे अन्दर चल रही है।'

'क्या यह एक सपना है?'

'तुम्हारे सपने भी सिर्फ तुम्हारे अकेले के सपने नहीं हैं। सारा ब्रह्माण्ड तुम्हारे सपनों के सपने देख रहा है। मैं वह सपना हूँ जो तुम्हारे सपने बनाता है।'

'मैं यहाँ क्यों हूँ? प्रमुख स्वामीजी यहाँ क्यों हैं?'

'तुम दोनों ने शैतान इबलिस को पराजित कर दिया है, जो इंसानों पर अपनी श्रेष्ठता का दावा किया करता था। तुम उसके प्रलोभनों से ऊपर उठ गये। तुमने उसकी गिरफ्त को तोड़ दिया।'

'अब हम क्या करें?'

'जाओ और दुनिया को बताओ कि कोई भी जीव ईश्वर से अलग नहीं है। ईश्वर हर जगह है। वह हर चीज में है और हर चीज उसमें है।'

मैंने अपनी आँखें खोलीं और देखा, अर्जुन के पेड़ के ऊपर सुबह का तारा निकल रहा था। जाती हुई रात के सिर पर वह लटके आभूषण सरीखा दिख रहा था। मैंने भी क्या अद्भुत सपना देखा! मैंने सोचा। या यह सपना है जिसमें मैं अब जागा हूँ?

प्रमुख स्वामीजी : एक संक्षिप्त परिचय

परम पूज्य प्रमुख स्वामीजी एक बेहद प्रिय और सम्मानित आध्यात्मिक गुरु हैं। 7 दिसम्बर 1921 को उनका जन्म चांसद गुजरात में हुआ था, तब उनका नाम शान्तिलाल था। वह जब बड़े हुए तो उनका सम्मान भगवान स्वामीनारायण के पाँचवें उत्तराधिकारी के रूप में हुआ और वह बोचासन्वासी श्री अक्षर पुरुषोत्तम स्वामीनारायण संस्था (बीएपीएस)—एक अन्तरराष्ट्रीय सामाजिक-आध्यात्मिक संस्थान, जिसकी संयुक्त राष्ट्र में भी मान्यता है—के मौजूदा मुखिया हैं।

अठारह साल की उम्र में उन्होंने सांसारिकता का त्याग कर दिया और एक स्वामीनारायण साधु का संयमी जीवन जीने लगे, और वहाँ उनका पुनर्नामकरण नारायणस्वरूपदास स्वामी हुआ। साल 1950 में, उनके गुरु शास्त्रीजी महाराज ने उनके अन्दर छिपी नैसर्गिक आध्यात्मकिता को पहचान लिया और उन्हें बीएपीएस का अध्यक्ष (प्रमुख) नियुक्त कर दिया। इस तरह, प्यार से सब उन्हें प्रमुख स्वामीजी के नाम से जानने लगे। उन्होंने अपने दो विद्वान गुरुओं शास्त्रीजी महाराज और उसके बाद योगीजी महाराज के अधीन निस्वार्थ भाव से समाज की सेवा की। और उनके बाद, सन् 1971 से उन्होंने अपने गुरुओं की बनायी मजबूत नींव पर एक बुलन्द इमारत खड़ी की और बीएपीएस की वैश्विक शिक्षाओं और क्रियाकलापों को दुनिया भर में प्रसारित किया।

उन्होंने भारत और विदेशों की यात्राएँ कीं ताकि आध्यात्मिकता और नैतिकता को मज़बूत बनाया जा सके, व्यक्तिगत रूप से चिट्ठियो या फोन के ज़रिए परामर्श देकर लोगों को प्रेरणा दी जा सके। उन्होंने भारत, उत्तरी अमेरिका, यूके, यूरोप, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड और मध्य-पूर्व में 1100 से अधिक मन्दिर बनवाये, जो आध्यात्मिक प्रेरणा और सामाजिक समरसता के केन्द्र बन गये हैं।

यही नहीं, उन्होंने गाँधीनगर और नई दिल्ली में भव्य स्वामीनारायण अक्षरधाम परिसर भी बनवाये, जो लाखों दर्शकों को भारत की प्राचीन संस्कृति, परम्परा और मूल्यों से परिचित कराते हैं। विश्व भर में करीब 3,900 केन्द्रों, 950 साधुओं, 55,000 युवा स्वयंसेवकों और लाखों अनुयायियों के साथ, उन्होंने मानवीयता के विभिन्न आयामों से जुड़े कार्यकलापों को प्रेरणा दी है और उसका ध्यान रखते हैं, जिसमें शिक्षा, पर्यावरण, चिकित्सा, जनजातीय, सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक कार्यकलाप शामिल हैं।

बहरहाल, इसके अलावा प्रमुख़ स्वामीजी की व्यक्तिगत विनम्रता, सरलता, पवित्रता, आध्यात्मिकता और वैश्विकता ऐसी चीज़ है जिसने विभिन्न धर्मों, नस्लों और क्षेत्रों राजनीतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक नेताओं समेत अनगिनत लोगों के दिलों को छुआ है।

आभार

यह भगवान का ही आशीर्वाद है कि मैंने कलाम साहब के साथ पहले तो एक मिसाइल वैज्ञानिक के तौर पर और फिर इस लेखन में सहायक के तौर पर काम किया। पिछले तैंतीस साल मैं उनके साए में बड़ा हुआ हूँ और उन्होंने मुझे इतनी शक्ति दी कि मुझे कभी भी इस बात को लेकर कोई अस्पष्टता या चिन्ता नहीं हुई कि मुझे क्या करना चाहिए। जब डॉ. कलाम ने प्रमुख स्वामीजी के साथ अपनी मुलाकातों को लिपिबद्ध करने और उनके जीवन और भावी पीढ़ियों के लिए उनके काम के बारे में अपनी समझ को प्रस्तुत करने का फ़ैसला किया, तो स्वाभाविक तौर पर मैं भी उनके इस काम में सहायता के लिए चुन लिया गया।

यह काम निश्चित तौर पर मेरी क्षमताओं से परे था। अपने आध्यात्मिक उथलेपन के मद्देनजर, मैं अपने वक्त की दो सबसे प्रबुद्ध आत्माओं के विचारों को समझने को लेकर खासतौर पर आशंकित था। इसलिए, मैंने बीएपीएस के साधुओं से मदद माँगी, जिन्होंने बड़ी सहृदयता से इस किताब के विषय पर मुझे गहन जानकारियाँ दीं।

ईश्वर की असीम अनुकम्पा डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम पर बनी रहे, जिन्होंने कभी अहं को अपने पास फटकने भी नहीं दिया और प्रमुख स्वामीजी के प्रति अपना सम्मान प्रकट किया। महान लोगों में यह बेहद दुर्लभ ही है कि वह अपने समकालीनों की महानता के प्रति आभार प्रकट करें। इस किताब को लिखकर डॉ. कलाम ने मानवता के लिए एक अद्वितीय मिसाल पेश की है।

इस किताब को लिखने में करीब एक साल का वक्त लगा, क्योंकि वास्तव में डॉ. कलाम का वक्त हासिल करना दुरूह था। बाज़वक्त, उनके विचारों की थाह लेते और उनकी भावनाओं को पकड़ते हुए सौ घण्टे से भी ज्यादा लग गये। कई

बार तो मैं उनके घर में ही रुका। मेरा पहले से ही उनके बड़े निजी पुस्तकालय में आना जाना रहा था, क्योंकि हमने बीस बरस पहले साथ-साथ ही *'विंग्स ऑफ फायर'* लिखी थी। किताबों के हाशिए पर लिखे उनके नोट्स और रेखांकित वाक्य बड़े अमूल्य साबित हुए।

मैं जून 2001 में उनकी पहली मुलाकात से लेकर मार्च 2014 में उनकी हालिया मुलाकात तक, डॉ. कलाम और प्रमुख स्वामीजी के बीच के सहक्रियाशील आध्यात्मिक साहचर्य का गवाह रहा हूँ। इस पूरे दौर में, अपनी मुलाकातों और टेलीफोन की कई बातचीते वस्तुत: एक आध्यात्मिक संवाद रहीं। मैंने देखा कि किस तरह दो महान आत्माएँ किसी उद्देश्य या निजी स्वार्थ के बगैर प्रगाढ़ और स्थायी सम्बन्ध में जुड़ सकती हैं। मुझे यकीन हो गया कि उनका यह सानिध्य दुनिया के लिए एक शक्तिशाली और प्रभावी प्रेरणा हेतु है।

ईश्वर प्रमुख स्वामीजी पर सहाय रहें। उन्होंने बीएपीएस को एक धार्मिक समूह या सत्संग से एक वैश्विक आध्यात्मिक मिशन में तब्दील कर दिया। हिन्दुत्व का नया चेहरा होने के अलावा (जिस धर्म में पैदा हुआ), प्रमुख स्वामीजी पूरी मानवता के लिए एक आध्यात्मिक दीपस्तम्भ हैं, जिसे भोग और उपभोक्तावाद का अथाह गर्त लीलने को तैयार घूर रहा है। ईश्वर उन सभी गुणातीत साधुओं को आशीष दे, जो प्रमुख स्वामीजी के पूर्व प्रगट हुए और वे जो उनके सांसारिक जीवन का अनुपालन करेंगे।

परमपिता, साधु ईश्वरचरणदासजी को आशीर्वाद दें, जिन्होंने मुझे गहन रूप से प्रेरणा दी है और खासतौर से, साधु ब्रह्मविहारीदासजी, जिन्होंने शुरुआत से इस किताब की संरचना तैयार करने में मेरी मदद की और जिन्होंने इसके तैयार होते वक्त इसकी पाण्डुलिपि को परिष्कृत भी किया। उनकी कृपा मुझपर बहुत करीबी मित्र और मार्गदर्शक की तरह रही।

जब मैंने पूर्ण पाण्डुलिपि बीएपीएस के सबसे वरिष्ठ सद्गुरू साधु केशवजीवनदासजी (महन्त स्वामीजी) के पास ले गया, तो मैंने पूछा, 'प्रमुख स्वामीजी ने अब जब संस्थान के रोज़मर्रा के काम की अतिरिक्त जिम्मेदार भी सौंप दी है, तो अब आपको कैसा लग रहा है?' महन्त स्वामीजी मुस्कुराए और कहा, 'प्रमुख स्वामीजी ने एक बार भी नहीं कहा या महसूस कराया कि वह संस्था को चला रहे हैं। सिर्फ ईश्वर और उनके गुरु हर चीज का ध्यान रखते हैं। प्रमुख स्वामीजी

स्वयं इतने पवित्र हैं कि उनके भीतर ईश्वर ही वास करते हैं। इसलिए मुझे लगता है कि मैं कुछ नहीं कर रहा बस ईश्वर और प्रमुख स्वामीजी की इच्छा का पालन कर रहा हूँ। जो हर चीज का और हर किसी का ख्याल रखते हैं, और भविष्य में भी ऐसा करते रहेंगे।' उन्होंने अपना आशीष दिया और पाण्डुलिपि पर लिखा, 'मुझे पूरा यकीन है कि डॉ. कलाम ने प्रमुख स्वामीजी के जीवन से सोना खोद निकाला है। यह ख़ज़ाना बड़े साधकों के लिए भी साधना के समान होगा।'

मैं पी.टी. राजशेखरन का बहुत आभारी हूँ कि उन्होंने विज्ञान के अपने विस्तृत ज्ञान और आध्यात्मिकता की अपनी समझ से न सिर्फ इस किताब की सटीक विषयवस्तु तक पहुँचने में मेरी मदद की बल्कि कभी मुझे भटकने भी नहीं दिया। मेरे मित्र एस.ए. ताइमिया ने इस्लामी साहित्य के बारे में मेरी मदद की।

मैं हार्पर कॉलिन्स की सम्पादकीय टीम को भी हार्दिक धन्यवाद देना चाहता हूँ जिसकी अगुआई वी.के. कार्तिका के हाथों में है और मैं पी.एम. सुकुमार की अगुआई वाली प्रकाशन टीम का भी शुक्रिया अदा करना चाहता हूँ। डॉ. कलाम के दफ्तर में, घनश्याम शर्मा ने समीक्षा किये हुए विभिन्न मसौदे हासिल करने में मेरी खासी मदद की, उनके श्रमसाध्य प्रयासों के बगैर यह किताब इस समयसीमा में पूरी नहीं हो सकती थी। मैं एच. शेरिडॉन और आर.के. प्रसाद को भी हृदय से धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होंने पिछले बाईस सालों में मैं जब भी दिल्ली आया, हमेशा मुझे सुकून और आराम का अहसास दिलाया है।

अपनी तरफ से, मैं ईश्वर का धन्यवाद करता हूँ कि उन्होंने मेरे अभिभावकों, स्वर्गीय श्री कृष्णचन्द्र तिवारी और श्रीमती उपासना तिवारी के ज़रिए मुझे इस धरती पर भेजा। मेरा लालन-पालन उन्होंने अपनी हदों से बाहर तक जाकर किया। ईश्वर मुझे रास्ता दिखाएँ कि मेरे किसी काम से माता-पिता के नाम पर बट्टा न लगे और मैं अपनी पत्नी अंजना तिवारी, बेटों, असीम और अमोल और उनके परिवार को अपना सर्वश्रेष्ठ व्यवहार और योगदान दे सकूँ और मेरे हृदय की करुणा मेरे सामने आने वाले किसी गरीब या वंचित को देखकर कभी कम न हो।

ईश्वर इस परियोजना में मेरी गलतियों और नाकामियों को क्षमा करे! अपने आध्यात्मिक विकास के स्तर को देखते हुए यही मेरा सर्वश्रेष्ठ था, जो मैं प्रस्तुत कर सका हूँ। अगर किसी पाठक को इस किताब में किसी भी तरह की अस्पष्टता या सन्देह का अनुभव हो, वह सिर्फ मेरी कमियों की वजह ही से होगा।

इस किताब के सभी पाठकों पर असीम शान्ति बरसे। परमपिता ही तय करेगा कि कब यह किताब उनके हाथों में पहुँचेगी।

अरुण तिवारी

हैदराबाद, मई 2015

"मैं नहीं जानता कि मैं और प्रमुख स्वामीजी दोबारा कब मिलेंगे। लेकिन उनके शब्द हमेशा मेरी यादों में संरक्षित रहेंगे। हमारे बीच एक दिव्य सम्बन्ध स्थापित हो गया है। उन्होंने वास्तव में मुझे बदला है। वे मेरे जीवन में आध्यात्मिक आरोहण के उच्चतम स्थान पर हैं। प्रमुख स्वामीजी ने मुझे प्रभु इच्छा की कक्षा में बैठा दिया है। अब किसी भी और कर्म क्रिया की ज़रूरत नहीं बची है, क्योंकि अमरत्व में मैं अपने आख़िरी पड़ाव पर पहुँच चुका हूँ।"

–डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम



भगवान स्वामीनारायण के पाँचवें आध्यात्मिक उत्तराधिकारी प्रमुख स्वामीजी महाराज हमारे समय के सबसे महत्वपूर्ण और प्रेरणादायी गुरुओं में से एक हैं। भारत के ग्यारहवें राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम से उनकी मुलाक़ात गहरी दोस्ती में बदल गई, और उस दोस्ती के ज़रिए आध्यात्म और विज्ञान की एक अद्‌भुत संगम-धारा निकली। इस पुस्तक में डॉ. कलाम और अरुण तिवारी ने प्रमुख स्वामीजी के सान्निध्य में शुरू हुई अपनी अन्तर्यात्रा के बारे में लिखते हुए विज्ञान, दर्शन, नेतृत्व और आध्यात्म का एक ख़ूबसूरत सम्मिश्रण पेश किया है। डॉ. कलाम ने राजनीति, तकनीक, समाज और अन्तरराष्ट्रीय हलचलों में स्वामीजी के जीवन दर्शन की परछाई देखी, और अपने लेखन में उसे उजागर किया।

'आरोहण:प्रमुख स्वामीजी के साथ मेरा आध्यात्मिक सफ़र' सभी धर्मों का एक निचोड़ है, और भारत के बहुधर्मी, बहुसांस्कृतिक और बहुभाषी समाज से जितनी प्रेरणा ये किताब लेती है, पाठकों को उतना ही प्रेरित भी करती है।

₹ 299
ebook
ISBN 978-93-5177-619-2



आध्यात्मिकता

